विषय-सूची

पहला भाग

दूसरा भाग

सांस्कृतिक भारत

तीसरा भाग

आज का भारत

चौथा भाग

आज की अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ

मुद्रक:—विनोद प्रेस, अलवर।

पहला भाग

आधुनिक युग और मानव जीवन

प्रश्न १—अपने दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाले ऐसे दस वैज्ञानिक आविष्कारों के नाम लिखकर यह स्पष्ट कीजिए कि आज का युग विज्ञान का युग है।

अथवा

आवागमन, संदेश वाहन, चिकित्सा प्रत्येक क्षेत्र से तीन-तीन आधुनिक आविष्कारों का नाम लिखकर स्पष्ट कीजिए कि आज का युग विज्ञान का युग है।

उत्तर—यह कथन सत्य है कि 'आज का युग विज्ञान का युग है।' आज मानव जीवन में विज्ञान इस प्रकार हिल-मिल गया है कि इसके बिना आज के सामाजिक मानव का कार्य चल ही नहीं सकता। विज्ञान ने हर क्षेत्र में प्रगति की है। पहले जो दूरी मनुष्य पूरे दिनमें तय करता था वही दूरी आज वह विज्ञान की सहायता से कुछ ही मिनटों या घंटों में तय करने लग गया है। पहले मनुष्य के पास संदेश भेजने के साधन न के बराबर थे और उन्हें भेजने में भी बहुत अधिक समय लगता था किन्तु आज विज्ञान ने उसे तार, टेलीफोन, बेतार का तार, रेडियो आदि ऐसे यंत्र उपलब्ध कर दिये हैं जिनकी सहायता से वह कुछ ही क्षणों में या घण्टों में संसार के किसी भी कोने में संदेश भेज सकता है। स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में, मनोरंजन के क्षेत्र में तथा अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सभी क्षेत्रों में विज्ञान के नये-नये आविष्कारों को जन्म देकर मनुष्य ने अद्‌भुत सफलता प्राप्त कर ली है। नीचे हम आवागमन, संदेश वाहन तथा चिकित्सा [illegible] क्षेत्र में हुए ऐसे दस वैज्ञानिक

आविष्कारों के नाम देते हैं जिनसे यह सिद्ध हो जाता है कि आज का युग विज्ञान का युग है—

क्षेत्र	वैज्ञानिक आविष्कार का नाम
(i) आवागमन	१. रेल एवं मोटर
	२. हवाई जहाज
	३. जलयान
(ii) संदेशवाहन	४. तार
	५. टेलीफोन
	६. बेतार का तार एवं रेडियो
	७. छापाखाना
(iii) स्वास्थ्य एवं चिकित्सा	८. 'क्ष' किरण (X-Rays)
	९. डॉक्टरी नली (Stethoscope)
	१०. अणुवीक्षण यन्त्र (Microscope)

आवागमन के साधन—विज्ञान की सहायता से मनुष्य ने आवागमन के साधनों में काफी प्रगति की है। प्रारम्भ में मनुष्य पैदल यात्रा करता था। किन्तु धीरे-धीरे उसने पहिये का आविष्कार करके अपनी यात्रा को कुछ सुगम बनाया। लेकिन आज विज्ञान ने स्थल, नभ व जल तीनों क्षेत्रों में मनुष्य की यात्रा को सुगम एवं शीघ्रगामी बना दिया है। आज जमीन पर यात्रा करते समय हर मनुष्य रेल अथवा मोटर द्वारा सफर करते हैं तथा कुछ ही घण्टों में सैकंडों मील का सफर कर लेते हैं। हवाई यात्रा ने तो अपने अद्‌भुत् चमत्कार दिखलाए हैं। आज हम संसार के किसी भी कोने में कुछ ही घण्टों में हवाई जहाज द्वारा यात्रा करके हजारों मील की दूरी को पार करते हुए पहुँच सकते हैं। इसी प्रकार समुद्र किसी समय मनुष्य के लिए बाधा समझा जाता था, किन्तु आज वही मनुष्य की अन्तर्राष्ट्रीय यात्राओं का सबसे सुलभ साधन है। एक आधुनिक जलयान में हजारों व्यक्ति एक साथ बैठकर महीनों लम्बी यात्रा बड़ी आसानी से एवं सुविधापूर्वक कर सकते हैं। उपर्युक्त बातों से स्वयं सिद्ध हो जाता है कि आज का युग विज्ञान का युग है।

संदेश वाहन के साधन—संदेश वाहन के क्षेत्र में भी मनुष्य के पास पहले कोई साधन न थे। वह व्यक्तिगत रूप से ही

अन्य व्यक्ति के द्वारा, पैदल सफर द्वारा अपना संदेश एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचाता था। इस तरह उसका काफी समय भी नष्ट होता था तथा कठिनाइयाँ भी बहुत आती थीं। किन्तु आज तार, टेलीफोन, बेतार का तार अथवा रेडियो द्वारा कुछ ही घण्टों, यहाँ तक कि कुछ ही क्षणों में संसार के प्रत्येक कोने में संदेश भेजे जा सकते हैं। संदेशवाहन के क्षेत्र में छापेखाने ने भी महत्वपूर्ण भाग अदा किया है। आज अखबारों द्वारा करोड़ों व्यक्ति प्रतिदिन के नवीन समाचार प्राप्त करते हैं।

संदेश वाहन की इस आधुनिक प्रगति एवं उपयोगिता से भी स्पष्ट रूप में यह सिद्ध हो जाता है कि आज का युग विज्ञान का युग है।

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा क्षेत्र—स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में भी वैज्ञानिक आविष्कारों ने हमारे जीवन को सुरक्षित बनाया है। प्राचीन काल से आयुर्वेदिक औषधियाँ चली आ रही हैं तथा आज भी प्रचलित हैं। किन्तु इस क्षेत्र में नवीन वैज्ञानिक यन्त्रों का आविष्कार हुआ है। X-Rays ('क्ष' किरण) के द्वारा मनुष्य शरीर के अन्दर की खराबियों का चित्र लिया जाता है जिससे चिकित्सा ठीक होती है, तथा बीमारी का सही-सही पता लग जाता है। Stethoscope द्वारा मनुष्य शरीर की जांच की जाती है। इसी प्रकार Microscope (अणुवीक्षण यन्त्र) द्वारा रोग कीटाणुओं का पता लगाया जाता है। शल्य-चिकित्सा में तो आज अद्भुत प्रगति हुई है। कीटाणु नाशक औषधियाँ, तथा बेहोशी की दवाओं के आविष्कार ने इसे अत्यन्त सुगम बना दिया गया है। पेन्सिलिन, सल्फा आदि पेटेण्ट औषधियों के निर्माण ने करोड़ों मनुष्यों को लाभ पहुँचाया है तथा उनकी जीवन रक्षा की है।

उपर्युक्त बातों से सिद्ध हो जाता है कि आज मनुष्य जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर विज्ञान का प्रभाव है। यह कथन पूर्ण रूप से सत्य है कि 'आज का युग विज्ञान का युग है।'

प्रश्न २—विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ मनुष्य-समाज में क्यों परिवर्तन आते हैं ?

उत्तर—मनुष्य स्वभाव—मनुष्य प्रकृति एवं स्वभाव से एक सामाजिक

प्राणी है। वह महत्वाकांक्षी भी है और निरन्तर प्रगति करने में लगा रहना चाहता है। वह जैसे-जैसे उन्नति करता है उसी प्रकार अपनी सामाजिक व्यवस्था में भी सुधार करता चलता है। यही कारण है कि जैसे-जैसे विज्ञान की प्रगति होती जाती है उसी प्रकार मनुष्य-समाज में भी परिवर्तन होता जाता है।

आदि मानव और वैज्ञानिक प्रगति—मनुष्य को आज हम जिस रूप में देखते हैं प्रारम्भ में वह ऐसा न था। वह जानवरों के समान ही जंगल में रहता था तथा कंद-मूल फल एवं जानवरों के मांस को खाकर अपना पेट भरता था। परन्तु धीरे-धीरे उसने प्रगति की राह पकड़ी। उसने अपने रहने के लिए मकान बनाये। जानवरों पर वश करके उन्हें अपनी सुख-सुविधा के लिए अपने काम में लिया। प्राकृतिक शक्तियों पर विजय प्राप्त की तथा भौतिक शक्तियों का आविष्कार करके वैज्ञानिक उन्नति की ओर अग्रसर हुआ। विज्ञान की यह कहानी मनुष्य और प्रकृति के बीच संघर्ष की कहानी है।

विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ मनुष्य समाज में परिवर्तन के कारण—मनुष्य ने आज धीरे-धीरे काफी वैज्ञानिक प्रगति करली है। आज वह मोटर व रेल में बैठकर पृथ्वी पर घूमता है। हवाई जहाज में बैठकर आकाश में उड़ता है तथा कुछ ही घन्टों में एक देश से दूसरे देश की काफी लम्बी यात्रा तय कर लेता है। समुद्र जो कभी मनुष्य की प्रगति में बाधा था आज उसका सहायक है। आज जहाजों द्वारा हजारों लाखों आदमी यात्रा करते हैं तथा करोड़ों टन सामान एक देश से दूसरे देश को पहुँचाया जाता है। टेलीफोन, रेडियो, तार, बिजली, अणुशक्ति, तथा अनेकों प्रकार की मशीनें एवं यन्त्रों का आविष्कार करके उसने अपनी वैज्ञानिक प्रगति का प्रमाण दिया है। किन्तु हम देखते हैं कि ये आविष्कार किसी एक व्यक्ति के बनकर न रहे। इनसे समस्त मनुष्य समाज पर प्रभाव पड़ा। जैसे-जैसे वैज्ञानिक आविष्कार होते गये मनुष्य समाज में भी परिवर्तन आते गये। उसके रहन-सहन के स्तर में सुधार हुआ। उसके आर्थिक जीवन में परिवर्तन आये। उसकी राजनैतिक विचार-धारायें बदलीं। आज भी मनुष्य जैसे-जैसे वैज्ञानिक प्रगति कर

प्रश्न ३—अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्य में ऐसी कौन-सी विशेषतायें हैं, जिनके कारण वह प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सका है ?

उत्तर—संसार का प्रत्येक प्राणी अपने जीवन में परिवर्तन चाहता है और परिवर्तनों को ही दूसरे शब्दों में विकास कहा जा सकता है। मानव-सभ्यता का संघर्ष निरन्तर चलता आ रहा है जिसमे मनुष्य ने अन्य प्राणियों को अपने से बहुत पीछे छोड़ दिया है और उन पर अधिकार कर इच्छानुकूल उनसे कार्य लिया है। ऐसी स्थिति में मनुष्य की उन मौलिक विशेषताओं का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है। मानव में अन्य प्राणियों की तुलना में निम्नलिखित मौलिक विशेषतायें हैं जो संसार के अन्य प्राणियों में नहीं पाई जाती—

१. मानव का विचित्र शरीर—अन्य प्राणियों की अपेक्षा यदि हम मानव की शरीर रचना का अध्ययन करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वह अन्य प्राणियों से पूर्णतः भिन्न है। वह केवल दो पैरों के सहारे खड़ा हो सकता है और उसके दो हाथ पूर्ण रूप से मुक्त हैं। इसके अतिरिक्त उसकी सबसे बड़ी विशेषता अंगूठा है जो सरलता से प्रत्येक अंगुली के सामने आ जा सकता है। अंगूठे के कारण ही मनुष्य किसी भी वस्तु को फेंक सकता है, उछाल सकता है और उसे आसानी से पकड़ सकता है। इसी प्रकार यह इन मुक्त हाथों के द्वारा निरन्तर नवीन वस्तुओं का निर्माण करता गया जिनसे मानव सभ्यता का विकास हुआ।

२. विकसित मस्तिष्क—संसार के प्रत्येक प्राणी में मस्तिष्क होता है। परन्तु मनुष्य का मस्तिष्क अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक विकसित है। उसके विकसित मस्तिष्क का एक मात्र कारण यह है कि उसमें सेरेब्रम अधिक उन्नत अवस्था में है। इस विशेषता के कारण वह किसी भी वस्तु की खोजबीन कर निश्चित निष्कर्ष निकाल सकता है। वह पिछली बातों को स्मरण कर उनकी उपयोगिता से लाभ उठा सकता है। संसार में मनुष्य की तुलना में बहुत से प्राणी बड़े शरीर वाले हैं, परन्तु जहां तक मस्तिष्क का प्रश्न है मनुष्य के माथे में जितना बड़ा मस्तिष्क है उतना वजनदार मस्तिष्क किसी भी प्राणी के माथे में नहीं है।

मस्तिष्क के विकास में मनुष्य के हाथों ने भी महान् सहयोग प्रदान किया है।

३. **विकसित वाणी**—मानव की वाणी अन्य प्राणियों की तुलना में अधिक विकसित है। इस कारण वह अपने विचारों को सरलतापूर्वक अन्य व्यक्तियों के सामने रख सकता है और ग्रहण भी कर सकता है। विकसित वाणी के कारण ही भाषा का विकास हुआ और मनुष्य के प्राचीन अनुभवों को सुरक्षित रखा जा सका। यदि लिखित भाषा का आविष्कार नहीं होना तो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के विषय में किसी प्रकार की जानकारी प्राप्त नहीं हो सकती थी। विचारों के आदान प्रदान ने मनुष्य को आगे बढ़ने में महान् सहयोग प्रदान किया, जिससे मानव सभ्यता का विकास हुआ। मनुष्य विकसित वाणी के कारण ही इतनी अधिक उन्नति कर सका जबकि अन्य प्राणी इस क्षेत्र में पिछड़े रह गये।

४. **परिस्थितियों को बदलने की क्षमता**—मनुष्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह स्वयं को परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तित कर लेता है, जबकि अन्य प्राणियों में इस विशेषता का अभाव है। मनुष्य बाधाओं से घबराता नहीं है और प्रत्येक कठिनाई का डटकर मुकाबला करता है। इसका एक मात्र कारण यह है कि उसमें सहनशीलता है। उदाहरण के लिये एवरेस्ट पर्वत पर विजय प्राप्त करने में वह कई बार असफल रहा, परन्तु अन्त में सफलता प्राप्त करके ही रहा। जबकि अन्य प्राणी बाधाओं से घबराकर अपना मार्ग छोड़ देते हैं।

५. **हँसने की कला**—मनोवैज्ञानिकों के अनुसार "मनुष्य एक हँसने वाला प्राणी है।" इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन को एक खेल समझता है। वह आने वाली प्रत्येक कठिनाई का सामना हँसकर करता है। असफलता कभी भी उसे निरुत्साही नहीं बनाती है, अपितु उसे अग्रसर होने की प्रेरणा देती है और अन्त में वह निश्चित लक्ष्य तक पहुँच जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि मानव में जो मौलिक विशेषतायें हैं, वे अन्य प्राणियों में देखने को नहीं मिलती हैं। मनुष्य अपनी इन विशेषताओं के कारण निरन्तर आगे बढ़ता गया है और इस प्रकार वह प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सका है।

प्रश्न ४—तार और टेलीफोन का हमारे दैनिक जीवन में क्या महत्व है ?

उत्तर—तार और टेलीफोन संदेश-वाहन के शीघ्रगामी साधनों में से हैं। आज संसार भर में इन दोनों का बड़ा महत्व है। तार से संदेश भेजने के लिए आज संसार भर में डाक-घरों के साथ-साथ तार-घरों का भी जाल बिछा हुआ है। तार के द्वारा हम अपने देश में नहीं बल्कि संसार के किसी भी कोने में अपने संदेश भेज सकते है। इस प्रकार टेलीफोन द्वारा अपने कमरे में ही बैठे हुए संसार के किसी भी महत्वपूर्ण व्यक्ति से बातचीत कर सकते हैं। तार और टेलीफोन का हमारे दैनिक जीवन में निम्नलिखित महत्व है।

तार का महत्व—हमारे दैनिक जीवन में तार का महत्व निम्नलिखितानुसार है—

(i) निजी संदेश-वाहन के साधन—आज हमें किसी आकस्मिक घटना अथवा कोई महत्वपूर्ण संदेश, अथवा कोई खुशी की बात की सूचना जल्दी से जल्दी अपने संबन्धियों या मित्रों अथवा घरवालों के पास पहुँचानी होती है तो हम चिट्ठी के स्थान पर तार द्वारा सूचना देते हैं। कुछ ही घंटों में हमसे सैकड़ों मील दूर रहने वाले उन व्यक्तियों को हमारी सूचना मिल जाती है और वह भी थोड़े से ही पैसों में। अत: आज हमारे दैनिक जीवन में तार निजी-संदेश वाहन का महत्वपूर्ण साधन है।

(ii) व्यापारिक महत्व—आज राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में तार का विशेष महत्व है। आज अनेक व्यापारी तार के द्वारा सौदे करते हैं। तार के द्वारा आर्डर भेजकर शीघ्र माल मंगा लेते हैं और इस प्रकार समय पर माल सप्लाई करके लाभ उठाते हैं।

(iii) तार द्वारा रेलों का संचालन—आज हमारे दैनिक जीवन में रेलों का कितना महत्व है, यह किसी से छुपा हुआ नहीं है। आज संसार भर की रेलें तार-प्रणाली द्वारा चलती हैं। एक स्टेशन से दूसरे स्टेशन को गाड़ी रवाना होने तथा पहुँचने की सूचना तार द्वारा ही दी जाती है अत: इस क्षेत्र में तार का विशेष महत्व है।

इसके अलावा तार द्वारा समाचारों की सूचनायें प्राप्त होती हैं

टेलीप्रिंटर द्वारा आज संसार के बड़े-बड़े अखबारों में नवीनतम खबरें प्रकाशित होती रहती हैं। केवल द्वारा संसार के प्रत्येक कोने में संदेश भेजे जा सकते हैं। अतः तार का महत्व हमारे दैनिक जीवन में उल्लेखनीय है।

टेलीफोन का महत्व—टेलीफोन वह अद्भुत यन्त्र है जिसके द्वारा हम अपने स्थान पर बैठे हुए ही, अपने पड़ोसी दुकानदार से, अथवा किसी आफिस से, किसी दूसरे नगर के व्यक्ति से जिसके यहाँ टेलीफोन लगा हुआ हो, बात कर सकते हैं। यह बातचीत इस प्रकार होती है जैसे कि वह व्यक्ति हमारे सामने ही खड़ा हुआ है और हम उससे बातें कर रहे हैं।

टेलीफोन अब दिन प्रति-दिन लोकप्रिय होता जा रहा है। किसी भी शहर में कोई ऐसा महत्वपूर्ण व्यक्ति न होगा जिसके निवास स्थान पर टेलीफोन न लगा हुआ हो। प्रत्येक बड़े नगर में लगभग सभी कार्यालयों में तथा सभी प्रमुख संस्थाओं में टेलीफोन होता है। हमारे परिवार का अथवा हमारे पड़ोस का कोई व्यक्ति यदि दुर्भाग्य से सख्त बीमार हो जावे तो हम अस्पताल को टेलीफोन द्वारा तुरन्त सूचना भेजकर रोगीवाहन गाड़ी बुला सकते हैं अथवा डॉक्टरी सहायता प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार रेल्वे स्टेशन से गाड़ी के समय की सूचना घर बैठे टेलीफोन द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। यदि किसी मित्र के घर पर टेलीफोन हो तो उससे बातें कर सकते हैं। व्यापारिक सौदे की बातें तो टेलीफोन द्वारा करना आम बात हो गई है। संसार के किसी भी कोने में बैठे हुए व्यक्ति से हम टेलीफोन द्वारा बात करके उसे अपने विचार बता सकते हैं तथा उसके विचार ग्रहण कर सकते हैं। यह सब इस प्रकार होता है मानो हम और वह एक दूसरे के सामने खड़े हुए बातें कर रहे हों। अतः संदेशवाहन के साधनों में आज टेलीफोन सबसे लोकप्रिय और महत्वपूर्ण साधन है।

प्रश्न ५—यन्त्रों से मनुष्य को जो लाभ प्राप्त हुए हैं उनमें से किन्हीं दो का महत्व स्पष्ट कीजिये।

उत्तर—आज का युग विज्ञान का युग है। विज्ञान के आधार पर नये-नये यन्त्रों का आविष्कार हुआ, जिन्होंने मानव को अनेक

प्रदान की हैं। इससे पहले युग को यदि हम देखें तो हमें पूर्ण रूप से मालूम हो जाता है कि उस समय मानव के पास अपना शरीर ही श्रम का एक मात्र साधन था। प्रत्येक कार्य वह अपनी मांस-पेशियों का उपयोग करके ही कर सकता था। इसके अतिरिक्त कार्य करने का और कोई साधन उसके पास न था। किन्तु आज विज्ञान की सहायता से उसने ऐसे अनेक यंत्र बना लिए हैं जिनसे उसे हर क्षेत्र में सहायता मिली है और उसे उनसे अनेक लाभ हुए हैं। यन्त्रों से होने वाले अनेक लाभों में से निम्नलिखित दो लाभ मनुष्य को मुख्य हुए हैं—

१. दैनिक जीवन में यन्त्रों से लाभ एवं उनका महत्व—यंत्रों ने मनुष्य का दैनिक जीवन अत्यन्त सरल बना दिया है। उसे आने-जाने और घूमने-फिरने के लिए साईकिल, मोटर, कार, रेल, हवाईजहाज आदि अनेक चीजें यन्त्रों ने उपलब्ध कर दी हैं। अपना संदेश एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने के लिए उसके पास तार, टेलीफोन, बेतार का तार, छापाखाना आदि महत्वपूर्ण साधन हैं। घर में प्रकाश करने के लिए बिजली का बटन दबाते ही उसकी सेवा में उपस्थित हो जाती है। बिजली से तो मनुष्य आज हजारों कार्य प्रति दिन लेता है। मनुष्य के दैनिक जीवन में काम आने वाली अनेकानेक वस्तुएं मनुष्य यन्त्रों द्वारा तैयार करता है। मिलों में कपड़ा मशीनों द्वारा बुना जाता है। खेत की जुताई ट्रेक्टरों द्वारा की जाती है। हर प्रकार का आटा मशीनों द्वारा पीसा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज मनुष्य के दैनिक जीवन को सुगम बनाने में यन्त्रों ने बड़ा हाथ बटाया है। उनसे उसे अनेक लाभ हुए हैं। उसके दैनिक जीवन में आज यन्त्रों का बड़ा महत्व है।

२. यन्त्रों द्वारा कम श्रम और अधिक उत्पादन के लाभ एवं महत्व—यन्त्रों द्वारा मनुष्य को सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि उसे अब कम से कम श्रम करना पड़ता है तथा उत्पादन काफी अधिक होता है। एक रेल का इंजिन जिसे एक ड्राइवर तथा एक फायरमैन चलाते हैं आज हजारों आदमियों को एक साथ बैठाकर ले जाता है जबकि उन दोनों को भी कोई विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता। आज एक आटा पीसने वाली चक्की एक दिन में इतना आटा पीस देती है कि उसे हजारों आदमियों [illegible] चल जाता है। एक कपड़े की मिल में एक

आदमी प्रतिदिन इतना कपड़ा बुन लेता है जिसे सैकड़ों आदमी पहिन सकते हैं। अतः यन्त्रों के आविष्कार ने मनुष्य का श्रम बहुत कम कर दिया है। उत्पादन शीघ्र और अधिक होता है। अतः अब मनुष्य के पास काम के पश्चात् सोचने तथा मनोरंजन के लिए काफी समय रहता है। अतः यन्त्रों से मनुष्य को बड़ा लाभ हुआ है और उनका आधुनिक जीवन में बहुत बडा महत्व है।

प्रश्न ६—आधुनिक युग में स्वास्थ्य सम्बन्धी जो प्रगति हुई उसका उल्लेख अपनी उत्तर-पुस्तिका के एक पृष्ठ में कीजिये।

उत्तर—प्राचीन काल में स्वास्थ्य चिकित्सा क्षेत्र में कोई प्रगति नहीं हुई थी। रोगों का कारण देवी देवताओं का प्रकोप माना जाता था। रोगों से मुक्त होने के लिए जादू-टोनों का प्रयोग किया जाता था। इतना होते हुए भी प्राचीनकाल में रोगों को दूर करने के लिए प्राचीन भारत में *आयुर्वेद प्रणाली का विकास हुआ। परन्तु मध्य-काल में चिकित्सा शास्त्र* की प्रगति रुक गई। इस प्रगति को पुनः नवीन रूप देने का श्रेय विज्ञान को है।

१. विज्ञान और चिकित्सा—विज्ञान की सहायता से जिस प्रकार मनुष्य ने जीवन के अन्य क्षेत्रों में विजय प्राप्त की, ठीक उसी प्रकार चिकित्सा एवं स्वास्थ्य रक्षा की समस्या को भी विज्ञान ने हल किया विशाल नगरों के निर्माण के कारण स्वास्थ्य समस्या अत्यन्त जटिल हो गई, जिसे हल करने के लिए मनुष्य ने विज्ञान की सहायता से रोगों की उपचार व्यवस्था को आगे बढ़ाया।

२. शरीर रचना का ज्ञान—किसी रोग का सही कारण जानने के लिए शरीर रचना का ज्ञान आवश्यक था। आधुनिक विज्ञान ने मनुष्य को शरीर रचना के विषय में पूर्ण रूप से जानकारी कराई, जिससे निरन्तर चिकित्सा शास्त्र का विकास होता गया।

३. कीटाणु सिद्धांत की खोज—१९ वीं शताब्दी में विज्ञान की सहायता से लुई पास्च्योर ने कीटाणु सिद्धांत की स्थापना की, जिसके आधार पर उसने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि रोगों का प्रमुख कारण कीटाणु हैं जो जल, भोजन, वायु आदि के द्वारा हमारे शरीर

प्रवेश कर जाते हैं। विज्ञान की सहायता से चिकित्सा शास्त्र के क्षेत्र में इस सम्बन्ध में विशेष रूप से कार्य किये गये और रोगों पर विजय प्राप्त की।

४. कीटाणुनाशक औषधियों का निर्माण—मनुष्य को जब यह ज्ञान प्राप्त हो गया कि रोगों का मूल कारण कीटाणु हैं तो उन्हें नष्ट करने के लिए विभिन्न प्रकार की औषधियां, जैसे—पेनिसिलिन, स्ट्रेप्टोमाइसिन, क्लोरोमाइसीटिन और सल्फा, डी० डी० टी० आदि महत्वपूर्ण कीटाणुनाशक औषधियों का निर्माण किया गया, जिससे मनुष्य रोगों से छुटकारा पा सके।

५. नवीन यन्त्रों का आविष्कार—चिकित्सा शास्त्र की प्रगति के लिये विज्ञान की सहायता से विभिन्न यन्त्रों का निर्माण किया गया, जिनमें डॉक्टरी नली (Stethoscope), सूक्ष्मदर्शक यन्त्र (Microscope) तथा एक्सरे (X-Ray) आदि चिकित्सा प्रणाली के प्रमुख अंग हैं। इन यन्त्रों की सहायता से निरन्तर उपचार व्यवस्था बढ़ती गई और चिकित्सा शास्त्र का विकास होता गया।

६. अचेतनकारी औषधियों का निर्माण—शल्य-चिकित्सा की सुविधा के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता अचेतनकारी औषधियों की थी जिससे रोगी को चेतनाशून्य कर दिया जाये। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम हम्फ्री डेवी ने नाइट्रस आक्साइड नामक गैस का आविष्कार किया, जिसका प्रयोग दन्त चिकित्सक रोगी को हँसाने के काम में लाते थे। इसके पश्चात् विलियम मार्टन ने ईथर नामक दवा का आविष्कार किया, जिससे रोगी को अचेतन कर दिया जाता था, सिम्पसन का नाम इस दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। उसने क्लोरोफार्म नामक अचेतनकारी औषधि का निर्माण किया। इस समय कोकिन नामक औषधि से केवल उस शरीर के भाग को शून्य कर दिया जाता है, जहां कि शल्य-चिकित्सा करनी होती है।

७. शल्य-चिकित्सा के आश्चर्यजनक कार्य—शल्य-चिकित्सा नित्य प्रति उन्नति की ओर अग्रसर हो रही है। आज विज्ञान की सहायता से बेडौल नाक को सुन्दर नाक में परिवर्तित किया जा सकता है। मरे हुये रोगी की आंख निकाल कर अन्धे व्यक्ति की आंख में लगाई जा सकती

है। नकली हृदय भी शल्य-चिकित्सा के द्वारा लगाना सम्भव हो गया है। रूसी वैज्ञानिको ने तो गुर्दे को मनुष्य के शरीर से अलग करके मनुष्य को बहुत दिनो तक जीवित रखने में सफलता प्राप्त की है। आज तो यौन परिवर्तन भी विज्ञान के द्वारा सभव हो गया है।

८. स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए सामान्य बातों की ओर ध्यान—स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए अब सामान्य बातों की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। प्रत्येक नगर मे यह कार्य नगरपालिका अथवा नगर निगम करते है। गन्दे पानी को नगर से बाहर निकालने के लिए नालियो का निर्माण कराया जाता है। चेचक, हैजा आदि बीमारियो के टीके लगाये जाते है। खेल के मैदानो का निर्माण कराया जाता है। स्वास्थ्य प्रद मकान बनाये जाते है। अतः अब स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए आवश्यक सभी बातों की ओर ध्यान दिया जाता है।

प्रश्न ७—मनुष्य के आर्थिक जीवन पर विज्ञान के प्रभाव का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—विज्ञान ने मानव जीवन को प्रत्येक क्षेत्र मे प्रभावित किया है। मानव के सामाजिक और आर्थिक जीवन पर भी विज्ञान ने गहरा प्रभाव डाला है। विशेषकर आर्थिक जीवन मे निम्नलिखित परिवर्तन वैज्ञानिक आविष्कारों के परिणामस्वरूप हुये हैं:—

१. आत्मनिर्भरता का स्थान परस्पर निर्भरता ने ग्रहण कर लिया है—वैज्ञानिक आविष्कारो के पूर्व मनुष्य का आर्थिक जीवन आत्म-निर्भर था। आत्मनिर्भर का अर्थ है सब आवश्यकताओं की पूर्ति सहयोग के आधार पर करना। विज्ञान ने आत्मनिर्भरता को परस्पर निर्भरता के रूप मे परिवर्तित कर दिया है। हमारा आर्थिक जीवन दूसरे राष्ट्रों पर इस प्रकार आधारित हो गया है कि हम किसी भी रूप मे उनसे अलग रहकर अपना स्वतन्त्र अस्तित्व नही रख सकते।

२. उत्पादन में वृद्धि—प्राचीन काल मे प्रत्येक कार्य हाथों से किया जाता था। इस कारण उत्पादन कम होता था परन्तु विज्ञान की सहायता से यन्त्रों का निर्माण किया गया, जिसने उत्पादन के क्षेत्र को अधिक विस्तृत कर दिया। अर्थ शास्त्र का यह सिद्धांत है कि जब

का उत्पादन बढ़ जाता है तो उसका मूल्य घट जाता है। मूल्य घट जाने के कारण सर्वसाधारण अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति सरलतापूर्वक कर सकता है। इस प्रकार सर्वसाधारण को अपनी दैनिक आवश्यकताओं को सरलतापूर्वक पूरा करने का अवसर मिला है।

३. गृह उद्योगों का पतन—यन्त्रों के पूर्व हमारे देश में गृह-उद्योगों की प्रधानता थी। प्रत्येक व्यक्ति गृह उद्योगों के कारण स्वावलंबी जीवन व्यतीत करता था। कल-कारखानों ने गृह उद्योगों की उपयोगिता को नष्ट कर दिया और परिणाम यह हुआ कि अपने उद्योगों के स्वामी कारखानों में मजदूर के रूप में कार्य करने लगे।

४. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का जन्म—यन्त्रों की सहायता से वस्तुओं का उत्पादन पहले की अपेक्षा बहुत अधिक हो गया। आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात् भी वस्तुएँ बनने लगीं। उनका सदुपयोग करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का जन्म हुआ। आवश्यकता की वस्तुएँ भेजी व मंगाई जाने लगीं। उदाहरण के लिए कनाडा के गेहूं, भारत में आकर बिकने लगा और भारत का जूट कनाडा में जाकर बिकने लगा। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक समझौते विभिन्न राष्ट्रों के द्वारा किये गये।

५. आर्थिक होड़ और साम्राज्यवाद का जन्म—वस्तुओं का उत्पादन बढ़ जाने के कारण संसार के विभिन्न राष्ट्रों में आर्थिक होड़ हो गई। प्रत्येक राष्ट्र ने अपने उत्पादन की खपत के लिए नवीन उपनिवेशों पर अपना अधिकार करने का प्रयास किया। उपनिवेशवाद आगे चलकर साम्राज्यवाद के रूप में परिवर्तित हो गया। आर्थिक होड़ के कारण ही दो विश्व महायुद्ध हुये जिनमें संसार के सभी राष्ट्रों को हानि उठानी पड़ी।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि विज्ञान ने आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिये हैं। एक ओर तो परस्पर निर्भरता व अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दिया और दूसरी ओर सामाजिक जीवन में वर्ग संघर्ष की उत्पत्ति हुई। इसके विपरीत आर्थिक होड़ के कारण कई राष्ट्रों की स्वतन्त्रता परतन्त्रता के रूप में परिवर्तित हो गयी।

प्रश्न ८—विज्ञान की प्रगति ने किस प्रकार मानव के राजनीतिक विचारों को प्रभावित किया ?

उत्तर—वैज्ञानिक प्रगति के परिणामस्वरूप सामाजिक और आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन हुये। आर्थिक परिवर्तनों का प्रभाव राजनैतिक जीवन पर पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप सरकार को अपनी नीति में भी आवश्यक परिवर्तन करने पड़े। वैज्ञानिक आविष्कारों का राजनैतिक जीवन पर प्रभाव इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है:—

१. पूँजीपति और संख्या बल में संघर्ष—आर्थिक विषमता के कारण पूँजीपतियों और मजदूरों के सम्बन्ध दिन प्रतिदिन बिगड़ते गये। पूँजीपति के पास पूँजी का बल और मजदूरों के पास संख्या का बल था, जिस पर धनिक वर्ग सरलतापूर्वक विजय प्राप्त नही कर सका। सरकार के सामने यह वर्ग संघर्ष राजनीतिक समस्या बन गई।

२. मजदूरों में चेतना और मजदूर संगठनों का उदय—मजदूरों की भावनाओं से लाभ उठाने के लिए और ख्याति प्राप्त करने के लिये अनेक मजदूर नेता बन गये। उन्होंने मजदूर संघ को जन्म दिया। परिणाम यह हुआ कि पूँजीपति वर्ग और मजदूर संघों में संघर्ष का वातावरण उत्पन्न हो गया। इसको हल करने के लिए सरकार को भरसक प्रयत्न करने पड़े।

३. जनतन्त्र प्रणाली का जन्म—जनता के अधिकांश संख्या का प्रतिनिधित्व हो और शासन की सत्ता बहुसंख्यक वर्ग के हाथ में होनी चाहिए। इस प्रकार मत की प्रधानता हो गई और लोकमत के आधार पर प्रजातन्त्र शासन प्रणाली का जन्म हुआ।

४. साम्यवाद का जन्म—आर्थिक विषमता के परिणामस्वरूप एक नवीन वाद का जन्म कार्ल्स मार्क्स ने दिया जिसे साम्यवाद कहते हैं। इस वाद के अनुसार पूँजीपतियों की कटु आलोचना की गई। इस बात पर विशेष रूप से जोर दिया गया कि उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाये, जिससे समस्त पूँजी व्यक्ति विशेष की न होकर सम्पूर्ण राष्ट्र की हो। रूस और चीन में [illegible] प्रभाव पड़ा।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि वैज्ञानिक प्रगति ने राजनैतिक विचारधारा को पूर्ण रूप से परिवर्तित कर दिया है। भारत में इस समय उद्योगों का क्रमिक विकास हो रहा है। ऐसी स्थिति में हमारे सामने विभिन्न देशों के अनुभव मौजूद हैं और हमें क्या करना चाहिए, वह हमारी सरकार की विवेकशीलता पर निर्भर है।

प्रश्न ६—उदाहरण सहित समझाइये कि आर्थिक अन्तर्निभंरता का अर्थ राजनीतिक सहयोग है।

उत्तर—वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण औद्योगिक क्रांति हुई और औद्योगिक क्रांति के कारण वर्ग संघर्ष का जन्म हुआ, जिसने सामाजिक जीवन में अशांति का जीवन उत्पन्न कर दिया। इसके विपरीत आर्थिक होड़ ने साम्राज्यवाद को जन्म दिया और साम्राज्यवाद के परिणाम स्वरूप दो महायुद्ध हुये। इन महायुद्धों के परिणामस्वरूप विभिन्न राजनैतिक समस्यायों का जन्म हुआ।

परस्पर निर्भरता के राजनैतिक परिणाम—वर्तमान युग की परस्पर निर्भरता ने विभिन्न राजनैतिक अनुभव हमारे सामने रखे जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं—

(क) दो महायुद्धों ने यह स्पष्ट कर दिया कि युद्ध से मानव जाति को कोई लाभ नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त किसी भी दुर्बल राष्ट्र को अधिक समय तक पराधीन नहीं रखा जा सकता है।

(ख) संसार के शक्तिशाली राष्ट्रों ने यह अनुभव किया कि जो पिछड़े हुये राष्ट्र अपने औद्योगिक विकास में लगे हुये हैं, उन्हें पूर्ण सहयोग दिया जाना चाहिये।

(ग) अन्तर्राष्ट्रीय शांति व्यवस्था बनाये रखने के लिए राजनैतिक सहयोग व आर्थिक निर्भरता दोनों का एक साथ आगे बढ़ना अत्यन्त आवश्यक है।

संसार के सभी राष्ट्र राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से परस्पर आगे बढ़ने में ही अपना हित समझते हैं। एक देश का खनिज पदार्थ अथवा खाद्य सम्बन्धी वस्तुयें दूसरे देशों में काम आती हैं। उदाहरण के लिए यदि राजस्थान की खानों से अभ्रक कम निकले तो सारे संसार का

अभ्रक महँगा हो जावेगा। ठीक उसी प्रकार यदि अमेरिका में गेहूँ का उत्पादन कम हो जावे तो भारत में भी गेहूँ का मूल्य बढ जावेगा। इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तीव्र गति से आगे बढ रहा है। बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संसार के विभिन्न राष्ट्रों में आर्थिक परस्पर निर्भरता नित्य प्रति बढती जा रही है। अन्तर्निर्भरता के आधार पर ही अन्तर्राष्ट्रीय बैंक की स्थापना की गई है। जहां से विभिन्न मुद्राओं का विनिमय होता है, इसके साथ ही अविकसित राष्ट्रों को औद्योगिक विकास के लिए ऋण दिया जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि परस्पर निर्भरता का अर्थ राजनैतिक सहयोग है, जिसके बिना अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास किसी भी रूप में संभव नहीं हो सकता।

प्रश्न १०—विज्ञान से उत्पन्न होने वाली दो समस्याओं का स्पष्ट विवेचना कीजिये।

उत्तर—यन्त्रों के आविष्कार ने मनुष्य के लिए अनेक नवीन समस्यायें पैदा कर दी है। यान्त्रिक युग के पूर्व मानव जिस प्रकार सुख एवं सन्तोष का जीवन व्यतीत करता था, आज नहीं। आज अनेक समस्यायें उसके चारों ओर मुँह बाँधे खडी दिखाई देती है। ये समस्यायें अनगिनत हैं, उनमें प्रमुख दो समस्यायें नीचे दी जा रही हैं—

१. बेकारी, स्वास्थ्य एवं कार्य के प्रति अरुचि की समस्यायें—

(अ) बेकारी की समस्या—यन्त्रो के आविष्कार से आज मानव बेकार एवं असहाय हो गया है। पहले जहाँ एक कार्य को करने के लिए हजारों व्यक्ति कई दिन तक लगे रहते थे, आज वह कार्य यन्त्र कुछ ही घन्टों में बड़ी आसानी से कर डालते है। मशीन के कार्य में मनुष्य की सहायता की बहुत कम आवश्यकता होती है। आज प्रत्येक कार्य मशीन द्वारा किया जा रहा है। अधिक उत्पादन के कारण ग्रामोद्योगो का भी नाश हो रहा है। यन्त्रों के कारण हजारों लाखों व्यक्तियों की रोजी छिन गई। हमारे देश मे बेकारी होने का प्रमुख कारण कल एवं कारखाने हैं।

(ब) मजदूरों के स्वास्थ्य की समस्या—कल कारखानों की अधिकता के कारण नगर का वातावरण दूषित हो गया जिसका प्रभाव अन्य व्यक्तियों पर भी पडा। इसके [illegible] रों को ऐसे स्थानों पर भी

कार्य करना पड़ा जिसका प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ा। इस प्रकार मजदूरों के जीवन की कोई सुरक्षा नहीं रही। ठीक वातावरण प्राप्त न होने के कारण मजदूरों का स्वास्थ्य नित्य प्रति बिगड़ता ही गया।

(स) कार्य के प्रति अरुचि—कारखानों में प्रत्येक वस्तु का उत्पादन अधिक मात्रा में होता है इसलिए प्रत्येक वस्तु का निर्माण कार्य अलग २ व्यक्तियों को बाँट दिया जाता है। इस पद्धति को श्रम विभाजन कहते हैं। इस पद्धति के अनुसार एक व्यक्ति किसी एक वस्तु के छोटे से भाग को ही बनाता है। उदाहरण के लिए एक आलपिन बनाने में अनेक व्यक्तियों का हाथ रहता है। कोई केवल तार खींचता है, कोई नोंक बनाता है, कोई उसकी घुंडी बनाता है तो कोई पालिश का कार्य करता है। इस प्रकार के कार्य से नीरसता आ जाती है, जिससे किसी भी काम में रुचि नहीं रहती। कारखाने में किसी भी व्यक्ति को पूरा काम करने का अवसर नहीं मिल पाता है। सम्पूर्ण वस्तु के निर्माण से जो सुख और आनन्द किसी व्यक्ति को प्राप्त होता है उसे सृजनात्मक आनन्द कहते हैं। कल-कारखानों में मनुष्य को कभी भी इस प्रकार का आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता है।

२. पूंजीवाद और वर्ग संघर्ष की उत्पत्ति—यन्त्रों के कारण गृह उद्योग नष्ट हो गये और उनका स्थान बड़े २ उद्योगों ने गृहण कर लिया। परिणाम यह हुआ कि संपूर्ण उद्योगों पर धनिक वर्ग का अधिकार हो गया और अधिकांश पूंजी उनके हाथ में केन्द्रित हो गई। इस प्रकार पूंजीवाद का जन्म हुआ। पूंजीवाद व्यवस्था के कारण मजदूरों का शोषण किया जाने लगा और उनकी आर्थिक स्थिति शोचनीय हो गई। मजदूर अपना अधिकार चाहते, परन्तु पूंजीपति उन्हें किसी भी प्रकार की सुविधायें देने के पक्ष में नहीं थे। इस प्रकार वर्ग संघर्ष की उत्पत्ति हुई और सामाजिक जीवन में विषमता फैल गई तथा साम्यवाद का जन्म हुआ।

प्रश्न ११—वैज्ञानिक आविष्कारों के सदुपयोग के लिए आप

क्या सुझाव देना चाहेंगे ?

उत्तर—विज्ञान से मानव जाति को अनेक लाभ हुए हैं और हो रहे हैं किन्तु वैज्ञानिक आविष्कारों का सदुपयोग न होने के कारण वही विज्ञान उसके लिये एक विकट समस्या बन गई है। जिस विज्ञान की सहायता से मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त की तथा भौतिक शक्तियों को अपना दास बनाया, वही विज्ञान आज मानव जाति का संहारक बना हुआ है। जिस विज्ञान के द्वारा आज हम उन्नति के शिखर पर पहुँच गये हैं वहीं विज्ञान आज हमें पतन की ओर ले जा रहा है। विज्ञान की इतनी उन्नति होते हुए आज भी मनुष्य झूठ, कपट, लालच, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि का शिकार है जिसके कारण वह वैज्ञानिक आविष्कारों का दुरुपयोग कर रहा है। विज्ञान के सदुपयोग के लिए हमारे निम्नलिखित सुझाव हैं:—

वैज्ञानिक आविष्कारों का प्रयोग मानव हित में हो—विज्ञान ने आज ऐसे-ऐसे नरसंहारक अस्त्रों को जन्म दे दिया है कि जिस से आज सारा संसार संकट में पड़ गया है। दुर्भाग्यवश यदि कभी इन अस्त्रों का प्रयोग हो गया तो कुछ ही घंटों में सारा विश्व तहस-नहस हो जायेगा और पृथ्वी पर मनुष्य जीवन लगभग समाप्त हो जावेगा। विज्ञान ने मनुष्य को अणुशक्ति प्रदान की। यदि मनुष्य इसका प्रयोग मानव हित में करता है तो वह इस शक्ति के द्वारा संसार की समस्त बंजर भूमि को उपजाऊ बना सकता है। बड़ी २ नदियों को बांधकर सिंचाई की जा सकती है तथा अनेकों असंभव कार्यों को अणुशक्ति के द्वारा संभव बनाया जा सकता है। किन्तु आज इसी शक्ति ने मनुष्य को अणुबम तथा उद्जन-बम जैसे नरसंहारक अस्त्र दिये हैं जिनके प्रयोग से कुछ ही मिनटों में लाखों करोड़ों व्यक्ति मारे जा सकते हैं। अतः मनुष्य को चाहिये कि वह वैज्ञानिक आविष्कारों का प्रयोग मानव हित में ही करे।

यंत्रों द्वारा उत्पादन श्रमिकों के हित में हो—यन्त्रों से एक समस्या बेकारी की उत्पन्न हुई है तथा दूसरी समस्या वर्ग संघर्ष की। आज एक यन्त्र से एक आदमी लगभग ५० आदमियों के बराबर का कार्य कर लेता है। अतः ४९ आदमी बेरोजगारी के शिकार हो जाते हैं। दूसरी ओर यन्त्रों की सहायता से मालिक और मजदूर का संघर्ष उत्पन्न हो गया है। अतः मालिकों को चाहिये कि श्रमकों को उचित हिस्सा उत्पादन के लाभ में से दिया जाये तथा वर्ग संघर्ष की भावना समाप्त की जाये।

मनुष्य को आन्तरिक प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करनी चाहिए—आज मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करली है। वह भौतिक शक्तियों पर भी विजय प्राप्त कर चुका है। मगर वह अपनी आन्तरिक प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त नहीं कर सका है। उसके अन्दर आज भी लोभ मोह, कपट, ईर्ष्या, द्वेष आदि अहंम् भाव जागृत हैं। जब तक वह इन प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त नहीं करेगा विज्ञान का सदुपयोग हो ही नहीं सकता। क्योंकि समस्त झगड़ों की जड़ ये प्रवृत्तियाँ ही हैं। अतः मनुष्य को चाहिये कि वह इन प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त करे तथा विज्ञान का सदुपयोग मानव हित में करे।

प्रश्न १२—क्या कारण है कि विज्ञान की इतनी उन्नति होते हुए भी मनुष्य आज असंतुष्ट और भयभीत है?

उत्तर—आज विज्ञान की बहुत उन्नति हो चुकी है और विज्ञान के साथ-साथ अनेक सामाजिक परिवर्तन भी हुए हैं और कहने के लिए मनुष्य अब एक सभ्य-सामाजिक प्राणी बन चुका है। किन्तु फिर भी हम देखते हैं

१. विज्ञान का दुरुपयोग—विज्ञान ने आज मनुष्यों को अत्यन्त शक्तिशाली बना दिया है। आज समस्त प्राकृतिक शक्तियां लगभग उसके आधीन हो चुकी हैं। विज्ञान के द्वारा आज उसने अपनी सुख सुविधा के अनेक साधन जुटा लिये हैं किन्तु इसके विपरीत वह विज्ञान का दुरुपयोग भी कर रहा है। आज जिन हवाई जहाजों से वह आकाश का स्वामी बन गया है। उन्हीं का प्रयोग युद्ध के समय वह बम बरसाने में करता है। जिस अणुशक्ति से वह मनुष्य जाति का बड़ा उपकार कर सकता है उसी का प्रयोग वह परमाणु बम्ब बनाने में कर रहा है। इस प्रकार विज्ञान के दुरुपयोग ने आज मनुष्य को भयभीत बना दिया है।

२. विज्ञान की देन पूँजीवाद—विज्ञान से आज नये-नये उद्योगों को जन्म मिला है। इन उद्योगों से मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर भी हुआ है। किन्तु इन उद्योगों ने इसके साथ-साथ उद्योगपतियों को भी जन्म दिया है। आज संसार का अधिकतम उद्योग इन पूँजीपति उद्योगपतियों के हाथ में होने के कारण सामाजिक विषमता का जन्म हो गया है। एक आदमी मेहनत करता है किन्तु उसका लाभ दूसरा उठाता है। इस कारण आज समाज का एक बड़ा भाग असन्तुष्ट है।

३. सामाजिक व आर्थिक असमानता—विज्ञान से आज समाज को अनेक लाभ हुए हैं किन्तु साथ ही सामाजिक और आर्थिक समानता न होने के कारण विज्ञान का लाभ सबको समान नहीं हो पा रहा है। साधारण जनता का जीवन आज भी कष्टमय बना हुआ है।

४. अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना न होना—आज विज्ञान ने समस्त संसार को एक तो कर दिया है किन्तु अभी लोगों के हृदय में

दूसरे राष्ट्र को कुचल देना चाहता है। आज भी संसार के दो बड़े राष्ट्र रूस और अमेरिका एक दूसरे पर अपना प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न कर रहे हैं। अब भी अनेक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों के आधीन हैं। इसलिए जब तक सब मनुष्यों के हृदय में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न नहीं होगी, मनुष्य असन्तुष्ट और भयभीत ही बना रहेगा।

५. भयङ्कर विश्व युद्ध का भय—विज्ञान ने मनुष्य को जितनी शक्ति दी है उतना ही वह उसके विनाश का कारण भी बन गया है। अब से पूर्व दो विश्व युद्ध हो चुके हैं। उनमें करोड़ों मनुष्यों की बलि चढ़ चुकी है। भयंकर बम्बों के रूप में वैज्ञानिक शक्ति का खुलकर प्रयोग हुआ है। आज तो वैज्ञानिकों ने ऐसे-ऐसे बम्ब बना छोड़े हैं जो संसार के बड़े से बड़े राष्ट्र का कुछ ही क्षणों में सफाया कर सकते हैं। रूस ने १९६३ में पचास मेगाटन परमाणु बम्ब का परीक्षण करके सारे विश्व को भयभीत बना दिया है।

६. समग्र विज्ञान की कमी—विज्ञान ने भौतिक रूप से तो मनुष्य को उन्नति के शिखर पर पहुंचा दिया है किन्तु आन्तरिक रूप से वह उतना ही कमजोर है जितना ही पहले था। आज भी उसके हृदय में क्रोध, लोभ, मोह, कपट, अहंकार घर किये हुए हैं। जब तक वह अपने हृदय से इन सब कमियों को दूर नहीं करेगा वह सदा असन्तुष्ट और भयभीत ही बना रहेगा।

प्रश्न १३—मनुष्य ने अपने आपको व समाज को सुखी तथा उन्नत बनाने के लिए क्या किया है?

उत्तर—मनुष्य ने अपने आपको व समाज को सुखी तथा उन्नत बनाने के लिए अनेक कार्य किये हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं—

१. सुखप्रद निवास स्थान का निर्माण—किसी समय में मनुष्य जंगलों और पहाड़ों में नंगा रहता था। वह जानवरों का शिकार करके खाता था और पत्थर से पत्थर रगड़कर आग पैदा करता था। किन्तु अनेक परिश्रमों द्वारा तथा अपनी वैज्ञानिक बुद्धि द्वारा आज उसने इन सभी असुविधाओं को दूर कर दिया है। आज उसके पास पहनने को अच्छे-अच्छे कपड़े हैं। रहने के लिए सुख-प्रद मकान हैं। खाने के लिए अच्छा भोजन है। आज उसने सर्दी, गर्मी, वर्षा से बचने के सभी साधन जुटा लिए हैं।

२. आवागमन के साधन—आदि मानव के पास आने-जाने का एक मात्र साधन प्रकृति द्वारा उसे दी हुई दो टाँगें थीं। उसके पश्चात् उसने इस कार्य के लिए पशुओं को उपयोग किया। किन्तु आज तो मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिए ऐसे अनेक साधन जुटा लिए हैं। विज्ञान की सहायता से मनुष्य ने रेल, मोटर, जहाज, हवाई जहाज आदि का निर्माण करके यात्रा को अत्यन्त सरल एवं सुखप्रद बना दिया है।

३ संदेश वाहन के साधन—पहले मनुष्य के पास संदेश भेजने के साधन न के बराबर थे। यदि उसे किसी अन्य स्थान पर अपना कोई संदेश भेजना होता था तो या तो उसे स्वयं पैदल जाना पड़ता था या किसी अन्य व्यक्ति को भेजना पड़ता था। किन्तु अब हम साधारण पत्र द्वारा अपना संदेश भेज और प्राप्त कर सकते हैं। यही नहीं तार, टेलीफोन, रेडियो, टेलीप्रिंटर, टेलीवीजन, केबिलग्राम, वायरलेस के द्वारा तो यह कार्य अतिशीघ्र हो जाता है। रेडियो द्वारा हम सैकिंडों में अपनी बात सारे संसार को सुना सकते हैं।

४. उत्पादन के साधन--विज्ञान की सहायता से मनुष्य ने उत्पादन के अनेक साधन जुटा लिए हैं। पुराने जमाने में जो काम सौ आदमी

सौ घण्टों में भी पूरा नहीं कर पाते थे आज एक आदमी उसे यन्त्रों की सहायता से एक ही घण्टे में पूरा कर लेता है।

५. **शिक्षा और मनोरंजन के साधन**—आज शिक्षा का प्रसार दिन प्रति दिन विस्तृत होता जा रहा है। छापेखाने के आविष्कार ने शिक्षा के क्षेत्र में बड़ी उन्नति की है। टेलीवीजन, रेडियो, सिनेमा, द्वारा भी शिक्षा दी जाती है, साथ ही साथ इनसे हमारा मनोरंजन भी होता है। आज हम कोई कहानी पढ़कर या रेडियो पर गाने, नाटक आदि सुनकर या २-३ घण्टे सिनेमा देखकर अपना समय सरलतापूर्वक व्यतीत कर लेते हैं।

६. **रोगों पर नियन्त्रण**—प्राचीन समय में लोग बीमारियों का कारण ईश्वर या देवी-देवताओं का कोप समझते थे। दूसरे उन दिनों उनके पास बीमारियों को दूर करने के कोई साधन न थे। लेकिन आज विज्ञान ने बीमारियों को अपने पूर्ण नियंत्रण में ले लिया है। हर बीमारी के इंजेक्शन व दवायें हमें उपलब्ध हैं। ऑपरेशन द्वारा हर प्रकार के घाव व टी० बी० या केन्सर जैसे भयंकर रोगों का इलाज हो जाता है। X-Ray द्वारा हमारे शरीर के अन्दर की खराबी का तुरन्त पता चल जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज मनुष्य ने अपने लिए तथा समाज के सुख व उन्नति के अनेक साधन जुटा लिए हैं और अभी वह उन्नति के पथ पर अग्रसर होता ही चला जा रहा है।

प्रश्न १४—निम्न के अर्थ स्पष्ट कीजिये—

(१) भौतिक शक्तियाँ (२) रोग-कीटाणु सिद्धान्त (३) व्यापारिक उत्पादन (४) वैज्ञानिक दृष्टिकोण (५) शल्य-चिकित्सा, (६) वर्ग-संघर्ष (७) उपनिवेशवाद (८) केन्द्रीकरण (९)

उत्तर—१. भौतिक शक्तियाँ—आदिकाल में मनुष्य समस्त कार्य अपनी मांस-पेशियों के बल पर करता था। कुछ समय पश्चात् उसने जानवरों से काम लेना शुरू किया। धीरे २ मनुष्य ने प्रकृति पर भी विजय प्राप्त करली। लेकिन मनुष्य को वास्तविक शक्ति उस समय प्राप्त हुई जब उसने भौतिक शक्ति का आविष्कार किया। भौतिक शक्तियों में कोयला, खनिजतेल–पेट्रोलियम, विद्युत शक्ति, अणुशक्ति, सूर्य किरण आदि प्रमुख हैं। प्रारम्भ में कोयले की भाप से अनेकों यन्त्रों का आविष्कार हुआ जिनमें रेल का इंजन, आयल इंजन, पानी का पम्प तथा सैंकड़ों प्रकार की मशीनें हैं जो भाप शक्ति के द्वारा आज भी चलाई जाती हैं। पेट्रोल तथा डीजल द्वारा आज अनेकों ट्रक, बस, कार एवं मशीने चलाई जाती हैं। अब तो डीजल इंजन से रेल भी चलाई जाती है। इसी प्रकार विद्युत शक्ति के द्वारा तो मनुष्य को इतने लाभ प्राप्त हुये हैं कि जिनकी कोई गिनती ही नहीं है। बिजली के द्वारा घरों में प्रकाश होता है तथा बिजली की मोटरों द्वारा अनेकानेक कारखाने चलाये जाते हैं। अणुशक्ति भौतिक शक्तियों में सबसे शक्तिशाली है। इसी प्रकार सूर्य की किरणों से भी अब शक्ति प्राप्त की जा रही है।

२. रोग और कीटाणु सिद्धान्त—आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की सफलता का रहस्य यह है कि इस सिद्धान्त के द्वारा विभिन्न प्रकार के रोग कीटाणुओं की जानकारी प्राप्त की गई। इसके अध्ययन के लिए अणुवीक्षण यंत्र (Microscope) का आविष्कार किया गया, जिसके द्वारा यह ज्ञात हो सका कि कीटाणु इतने छोटे होते हैं कि एक इंच लम्बी रेखा पर २५००० कीटाणुओं की पक्ति बन सकती है। जब हम स्वस्थ होते हैं उसका अभिप्राय यह है कि हमारे रक्षक कीटाणु इतने शक्तिशाली

होते हैं कि शत्रु कीटाणु हम पर कोई प्रभाव डाल नहीं पाते, परन्तु जब हमारे शरीर के रक्षक कीटाणु दुर्बल और संख्या में कम हो जाते हैं तो रोग कीटाणु हम पर आक्रमण कर देते हैं और मनुष्य बीमार पड़ जाता है। ऐसी स्थिति में यदि उसे कीटाणुनाशक औषधियाँ मिल जावें तो मनुष्य को रोगों से बचाया जा सकता है। इसी सिद्धान्त पर आधुनिक चिकित्सा प्रणाली आधारित है। कीटाणुओं की महत्वपूर्ण खोज करने वालों में हॉलैंड निवासी ल्यूवेन हुक और फ्रांस निवासी लुई पास्च्योर प्रमुख माने जाते हैं।

(३) **व्यापारिक उत्पादन**—पहले मनुष्य अपना कार्य अपने हाथों से करता था। जो भी उत्पादन होता था वह उसके द्वारा या परिवार के सदस्यों द्वारा किया जाता था तथा उसकी खपत भी आसपास के गांवों या शहरों तक ही सीमित थी। परन्तु आज वैज्ञानिक युग है। इसमें समस्त उत्पादन बड़े बड़े कारखानों में होता है जहां प्रतिदिन हजारों व्यक्ति मशीनों पर कार्य करते हैं। इस उत्पादन की खपत का क्षेत्र भी अब बहुत विस्तृत हो गया है। अब उत्पादन की खपत अपने राष्ट्र तक ही सीमित नहीं रही है बल्कि उसे व्यापारिक दृष्टि से लाभ समझकर विदेशों को भी निर्यात किया जाता है। अब जो भी उत्पादन होता है उसे व्यापारिक दृष्टि-कोण से देखा जाता है। *आज समस्त संसार में व्यापारिक उत्पादन का* ही महत्व रह गया है। आज अनेकों वस्तुओं को हम विदेशों से मंगाकर उनका अपने यहाँ व्यापार करते हैं तथा अपने देश की निर्मित वस्तुएं व्यापार के लिये विदेशों को भेजी जाती हैं।

(४) **वैज्ञानिक दृष्टिकोण**—आज का युग विज्ञान का युग है। आज प्रत्येक वस्तु को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा एवं परखा जाता है। जब तक कोई तत्व या वस्तु वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा पूर्ण सिद्ध नहीं हो जाती उस समय तक उसकी सच्चाई में विश्वास नहीं किया जाता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से तात्पर्य यह है कि जब तक प्रयोग द्वारा कोई बात

सत्य सिद्ध न हो जाये उसका कोई अस्तित्व स्वीकार नहीं किया जा सकता।

(५) **शल्य-चिकित्सा**—शल्य-चिकित्सा नित्य प्रति उन्नति की ओर अग्रसर हो रही है। आज विज्ञान की सहायता से बेडोल नाक को सुन्दर नाक में परिवर्तित किया जा सकता है। मरते हुये रोगी की आँख निकाल कर अन्धे व्यक्ति की आँख में लगाई जा सकती है। नकली हृदय भी शल्य-चिकित्सा के द्वारा लगाना सम्भव हो गया है। रूसी वैज्ञानिकों ने तो गुर्दे को मनुष्य के शरीर से अलग करके मनुष्य को बहुत दिनों तक जीवित रखने में सफलता प्राप्त की है। आज तो यौन परिवर्तन भी विज्ञान के द्वारा संभव हो गया है।

(६) **वर्ग संघर्ष की उत्पत्ति**—यंत्रों के कारण गृह-उद्योग नष्ट हो गये और उनका स्थान बड़े २ उद्योगों ने ग्रहण कर लिया। परिणाम यह हुआ कि संपूर्ण उद्योगों पर धनिक वर्ग का अधिकार हो गया और अधिकांश पूँजी उनके हाथ में केन्द्रित हो गई। इस प्रकार पूँजीवाद का जन्म हुआ। पूँजीवादी व्यवस्था के कारण मजदूरों का शोषण किया जाने लगा और उनकी आर्थिक स्थिति शोचनीय हो गई। मजदूर अपना अधिकार चाहते, परन्तु पूँजीपति उन्हें किसी भी प्रकार की सुविधायें देने के पक्ष में नहीं थे। इस प्रकार वर्ग संघर्ष की उत्पत्ति हुई। और सामाजिक जीवन में विषमता फैल गई तथा साम्यवाद का जन्म हुआ।

(७) **उपनिवेशवाद**—कुछ देशों के लोग, जिनमें इंगलैण्ड, पुर्तगाल फ्रांस आदि पश्चिमी यूरोप के देश हैं, अपने आर्थिक एवं व्यापारिक लाभ हेतु दूसरे देशों में गये और उन्होने वहाँ धीरे २ अपना अधिपत्य जमा लिया। उन्होंने वहां के व्यापार पर ही अपना अधिपत्य नहीं जमाया बल्कि वहाँ की जनता को गुलाम बनाकर अपना शासन प्रारम्भ कर दिया।

उन्होंने अपने अधिपत्य के देशों का धन संचय करके अपने देशों को मालामाल बना दिया तथा अपने अन्तर्गत देशों को जिन्हें उपनिवेश कहते हैं अत्यन्त कमजोर बना दिया। हमारा देश भी पहले अंग्रेजों के आधीन था तथा इसका कुछ भाग पुर्तगाल एवं फ्रांस के आधीन था। गोवा को हमने अभी कुछ वर्ष पूर्व ही पुर्तगाल के अधिपत्य से स्वतन्त्र कराया है। दक्षिणी अफ्रीका में आज भी फ्रांस, इंगलैण्ड व पुर्तगाल के उपनिवेश हैं। यह उपनिवेशवाद अब समाप्त होता जा रहा है तथा सभी देश अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहे हैं।

(८) केन्द्रीकरण—वैज्ञानिक प्रगति ने बड़े २ कारखानों एवं मिलों को जन्म दिया जिसके कारण छोटे-छोटे निजि उद्योग समाप्त हो गये। इन कारखानों तथा मिलों का स्वामित्व बड़े २ पूंजीपतियों के हाथों में आ गया जिसके कारण उद्योगों का केन्द्रीकरण हो गया। अब प्रत्येक उत्पादन विशाल संख्या में होने लगा। उसके वितरण की व्यवस्था भी बड़े रूप में होने लगी। इस प्रकार उद्योग एवं व्यापार का केन्द्रीकरण बड़े २ पूंजीपतियों के हाथ में आ गया। किसी २ देश में सरकार ने उद्योगों को अपने हाथ में लेकर उनका केन्द्रीकरण कर लिया। भारत में उद्योग एवं व्यापार का केन्द्रीकरण पूंजीपतियों एवं सरकार दोनों के हाथों हो रहा है।

९. साम्यवाद—आर्थिक विषमता के परिणामस्वरूप एक नवीन-वाद का जन्म हुआ जिसे साम्यवाद कहते हैं। इसके जन्मदाता कार्लस-मार्क्स थे। कार्लस मार्क्स ने पूंजीपतियों की कटु आलोचना की है। साम्यवाद ने इस बात पर जोर दिया है कि उद्योगों का राष्ट्रीकरण किया जाये जिससे समस्त पूंजी व्यक्ति विशेष की न होकर सम्पूर्ण राष्ट्र की हो। साम्यवाद को सर्वप्रथम रूस ने अपनाया। आज संसार के कई राष्ट्र साम्यवादी हैं।

१० समग्र-विज्ञान—विज्ञान की इतनी प्रगति होते हुए भी आज

मनुष्य असन्तुष्ट एवं भयभीत है। इसके दो कारण हैं—(१) उसने अपनी आन्तरिक प्रवृत्तियों—झूठ, कपट, लालच, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि पर विजय प्राप्त नहीं की है, (२) उसने विज्ञान के द्वारा ऐसे २ नरसंहारक अस्त्रों को बना लिया है जिनके द्वारा सारी मनुष्य जाति निमूल की जा सकती है। इन दोनों बातों पर जब विज्ञान विजय प्राप्त कर लेगा तो वह समग्र-विज्ञान हो जायेगा।

हमें चाहिए कि हम विज्ञान की सहायता से इस पृथ्वी को स्वर्ग के समान सुखी और सुन्दर बना दें। अपने अन्दर छुपी हुई समस्त बुरी भावनाओं को दूर कर दें। जब हम यह सब कुछ करने में समर्थ हो जावेंगे तभी यह विज्ञान हमारे जीवन का सम्पूर्ण विज्ञान हो सकेगा। वह विज्ञान केवल दिखाई देने वाली बाहरी दुनियां का विज्ञान नहीं होगा बल्कि हमारी भीतरी दुनिया का भी विज्ञान होगा। ऐसा विज्ञान समग्र-विज्ञान होगा जो मनुष्य को केवल शरीर और भौतिक आवश्यकताओं का पुतला ही नहीं मानेगा बल्कि उसे शरीर, मन, हृदय और आत्मा की की समग्र हस्ती समझकर उसका सर्वांगीण विकास करने का प्रयत्न करेगा।

प्रश्न १५—निम्नलिखित वाक्यों को स्पष्ट कीजिये—

(१) 'विज्ञान की कहानी मनुष्य और प्रकृति के बीच संघर्ष की कहानी है।'

उत्तर—(१) विज्ञान का कटीला पथ—विज्ञान की इस प्रगति की कहानी छोटी मोटी नहीं है। आज हम जिस युग में रह रहे हैं उसे लाने में विज्ञान को हजारो वर्ष लगे है। जिन वैज्ञानिकों के बल पर आज हम इस युग का आनन्द ले रहे हैं उनका जीवन कितना कष्ट पूर्ण एव कठिन रहा है। राज्य अथवा समाज से किसी प्रकार की सहायता मिलना तो दूर रहा उन्हें एक ओर अपनी प्रयोगशाला की समस्याओं में उलझे रहना पड़ता था

तो दूसरी ओर अपने उस अन्धविश्वासी और रूढ़ीग्रस्त समाज से जो प्रत्येक नई चीज को पागलपन और धर्म विरुद्ध समझा करता था, उन्हें तरह २ के दण्ड भी सहने पड़ते थे। गैलीलियो ने जब सिद्ध किया कि दिन रात सूरज के घूमने से नहीं वरन् पृथ्वी के घूमने से होते हैं तो उसे धर्म द्रोही माना गया। इसी प्रकार चर्खे के सुधारक हरग्रीव्ज को लोगों के आक्रमण से अपनी जान बचाने के लिए अपने घर से भागना पड़ा।

(२) 'मनुष्य की सामाजिक व्यवस्था वैज्ञानिक प्रगति के साथ निरन्तर बदलती ही जाती है।"

उत्तर—वास्तविकता तो यह है कि विज्ञान का जन्म उसी दिन से हुआ जिस दिन से मनुष्य इस पृथ्वी पर रहने लगा। विज्ञान की कहानी मनुष्य और प्रकृति के बीच संघर्ष की कहानी है। हमें विज्ञान के दर्शन केवल आधुनिक आविष्कारों में ही नहीं करने चाहियें बल्कि आज मानव ने अपनी बुद्धि और हाथों का प्रयोग करके जो पत्थर के औजार बनाये, आग जलाना, खेती करना, मकान बनाना, बर्तन बनाना, नाव चलाना आदि सीखा, जो पहियों का आविष्कार किया, सूत कातना और बुनना शुरू किया। इन सभी बातों में उस जमाने की वैज्ञानिक उन्नति ही देखनी चाहिए।

यदि आदि मानव में आविष्कारक बुद्धि का अभाव होता तो वह इस पृथ्वी पर नहीं बच पाता। मनुष्य शरीर पर यदि हम ध्यान दें तो पता चलेगा कि जानवरों की तुलना में उसका शरीर कई बातों में असमर्थ है। यदि मनुष्य को जंगल में शेर, चीते, भालू, हिरन, ऊँट, बैल, बन्दर आदि के मध्य छोड़ दिया जावे तथा मनुष्य में बुद्धि न हो तो उसकी क्या गति होगी इसका अनुमान हम स्वयं लगा सकते हैं। मनुष्य के पास न तो [illegible] खाल ही है, न हाथ पैर इतने पुष्ट हैं, न नाखून ही नुकीले

हैं जिससे कि वह जंगली जानवरों से अपनी रक्षा कर सके तथा मौसम से स्वयं को बचा सके। जानवरों की अपेक्षा मानव में बुद्धि व हाथ की अधिकता है। शरीर को बचाने के लिए मनुष्य कंदराओं व गुफाओं की शरण लेता था तथा वृक्षों की छाल से अपने शरीर को ढकता था। मानव उस समय प्रकृति के सम्मुख निस्सहाय था। परन्तु मानव प्रगति के पहिये को सर्वप्रथम इसी असहाय आदि मानव ने घुमाना आरम्भ किया। आज इस पहिये ने काफी प्रगति करली है परन्तु हम यह नहीं भुला सकते कि आज का वैज्ञानिक भी उसी राह का राही है जिस पर हमारे पूर्वज अपना चरण बढ़ा चुके थे।

(३) आज का वैज्ञानिक भी उसी राह का राही है जिस पर हमारे पुरखे लाखों वर्ष पूर्व चरण बढ़ा चुके थे।

उत्तर—आज जो वैज्ञानिक प्रगति हो रही है इसकी नींव आज से लाखों वर्ष पूर्व पड़ चुकी थी। यदि हम मानव जीवन के इतिहास को उठाकर देखें तो हमें पेता लगता है कि प्रारंभ में मनुष्य जंगली अवस्था में रहता था। उस समय कोई मकान आदि न थे तथा वह जंगलों में रहता था। जंगल के कंद मूल फल तथा जानवरों का मांस ही उसका भोजन था। किन्तु मनुष्य ने अपने बुद्धिबल से धीरे २ अपनी अवस्था में परवर्तन किये। उसने अपने रहने के लिए मकान आदि बनाये तथा जानवरों की शिकार के लिये पत्थरों के औजारों का प्रयोग किया। धीरे धीरे उसने पहिये का आविष्कार किया जिसके फलस्वरूप आज का वैज्ञानिक मोटर, रेल, साइकिल आदि अनेकों वाहन बनाने में सफल हुआ। उसने लाखों वर्ष पूर्व नदी-नालों को पार करने के लिये लकड़ी के गट्ठों का प्रयोग किया जिसके आधार पर ही आज का वैज्ञानिक आधुनिक जलयान बनाने में सफल हुआ। अतः आज की वैज्ञानिक उन्नति मनुष्य के लाखों वर्षों के निरन्तर प्रयत्नों का ही परिणाम

स्पष्ट है कि आज का वैज्ञानिक भी उसी राह का राही है जिस पर हमारे पुरखे लाखों वर्ष पूर्व चरण बढ़ा चुके थे।

(४) विद्युत शक्ति इस भूलोक का जादू है।

उत्तर—मनुष्य के वैज्ञानिक आविष्कारों में विद्युत शक्ति का आविष्कार अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं आश्चर्य चकित कर देने वाला है। वास्तव मे विद्युत शक्ति आज के युग मे इस भूलोक का जादू है। जिस प्रकार हम सुनते हैं कि जादू के द्वारा तुरन्त कोई भी कार्य संभव हो जाता है ठीक उसी प्रकार आज विद्युत के द्वारा सभी कार्य संभव हो गये हैं। बटन दबाते ही प्रकाश हो जाता है। बिजली का बटन दबाते ही घन्टी बज जाती है। बिजली के हीटर द्वारा तुरन्त गर्म पानी हो जाता है, चाय बन जाती है तथा अनेकों घरेलू कार्य हो जाते हैं। हमें गर्मी लग रही हो तो पंखे का बटन दबाते ही हवा होने लगती है। कहने का तात्पर्य यह है कि बिजली द्वारा कार्य इतनी शीघ्रता पूर्वक कार्यान्वित होते हैं कि जैसे कोई कार्य जादू द्वारा हो रहा हो। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि आज विद्युत शक्ति इस भूलोक का जादू है।

(५) आज विभिन्न राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाएं राजनीतिक मानचित्रों तक ही सीमित हो गई हैं।

उत्तर—वैज्ञानिक प्रगति ने आज विभिन्न राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाओं को लगभग समाप्त कर दिया है। आज हम जिस हिमालय को अजय समझते थे तथा जो हमारा रक्षक माना जाता था उसके ऊपर से कुछ ही मिनटों में हवाई जहाज उड़ कर दूसरी ओर जा सकता है तथा कुछ ही मिनटों में दूसरी ओर से हमारे देश में आ सकता है। इसी प्रकार हमारे देश के तीन ओर समुद्र है जिसे हम किसी भी समय सुरक्षा के के लिये बहुत महत्वपूर्ण [illegible] किन्तु आज बड़े बड़े जलयान समुद्र

में चलते हैं जिनकी रफ्तार भी काफी होती है उनके लिए अजय समझा जाने वाला समुद्र कुछ भी नहीं रहा। यही दशा अन्य देशों की भौगोलिक सीमा की रह गई है। राजनैतिक दृष्टि से ही अब इन सीमाओं का महत्व रह गया है। विज्ञान की प्रगति ने भौगोलिक सीमायें तो अब समाप्त प्रायः ही कर दी हैं।

दूसरा भाग

सांस्कृतिक भारत

अध्याय १

हमारी मातृ-भूमि—भारत देश

प्रश्न १—भारत की भौगोलिक परिस्थितियों का हमारे जीवन में क्या महत्व है?

उत्तर—भारत एक विशाल राष्ट्र है, जो कि संसार के सभी राष्ट्रों से पूर्ण रूप में भिन्न है। १५ अगस्त, १९४७ को अंग्रेजों की कूटनीतिज्ञता के कारण देश का विभाजन हो गया, परन्तु दोनों की सांस्कृतिक परम्पराएं रूढ़ियों से समान रही हैं। प्रत्येक देश पर उनकी भौगोलिक स्थिति का प्रभाव अवश्य पड़ता है। सभ्यता एवं संस्कृति का विकास भी भौगोलिक परिस्थितियों के आधार पर ही होता है। ऐसी स्थिति में हमारे लिए भारत की भौगोलिक स्थिति और उसके पड़ने वाले प्रभावों का जानना आवश्यक हो जाता है।

१. भारत की भौगोलिक स्थिति—भारत एशिया महाद्वीप में स्थित, दक्षिण में एक विशाल त्रिभुजाकार प्रायद्वीप के समान है। इसका क्षेत्रफल रूस को छोड़कर शेष यूरोपीय राष्ट्रों के बराबर है। भारत की भौगोलिक स्थिति कुछ इस प्रकार है कि जिसने भारत को संसार के अन्य राष्ट्रों से पूर्णरूप में भिन्न कर दिया है। सम्पूर्ण विश्व की १६ प्रतिशत जनता इसी देश में रहती है। भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत काश्मीर से लेकर आसाम तक फैला हुआ है। पश्चिम में बिलोचिस्तान से लेकर पूर्व में ब्रह्मा तक फैला हुआ है। भारत में खैबर, बलिन और गोमल आदि प्रसिद्ध दर्रे हैं, जहाँ से विदेशियों के आक्रमण होते रहे हैं। भारत उत्तरी मैदान विश्व के प्रमुख मैदानों में गिना जाता है। दक्षिण में

यह सतपुड़ा और विन्ध्याचल पर्वतों से घिरा हुआ है। उत्तर में हिमालय पर्वत और शेष तीनों ओर समुद्रों से घिरा हुआ होने के कारण भौगोलिक दृष्टिकोण से भारत विश्व की एक स्वतन्त्र इकाई है।

२. भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव—प्रत्येक देश की सभ्यता और संस्कृति पर भौगोलिक स्थिति का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है। हमारे देश पर भी भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है :—

(क) उत्तरी भारत में खैबर, बोलन और गोमल आदि के प्रसिद्ध दर्रे होने के कारण विदेशियों के निरन्तर आक्रमण होते गये।

(ख) उत्तरी भारत की गर्म जलवायु के कारण यहां के निवासी आलसी और विलासी हो गये। इन दुर्गुणों के कारण उन्हें विदेशियों से पराजित होकर परतन्त्रता का जीवन व्यतीत करना पड़ा।

(ग) उत्तरी भारत के निवासियों के पास अवकाश का समय अधिक बचा रहा, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने आध्यात्मिक और साहित्यिक विकास की ओर पूर्ण रूप से ध्यान दिया।

(घ) भारतीयों ने अन्य देशों में अपनी सभ्यता का प्रचार किया, नवीन उपनिवेशों की खोज भी की, परन्तु वे महान् विजेता नहीं बन सके।

(ङ) देहली के निकट करनाल, पानीपत और कुरुक्षेत्र रण-स्थल बने रहे।

(च) राजपूताना, मरुस्थली प्रदेश होने के कारण विदेशियों के आक्रमण का शिकार नहीं हो सका। राजपूतों ने कई स्वतन्त्र राज्य स्थापित किये, जो आज भी मौजूद हैं।

(छ) दक्षिण भारत सघन वनों से ढका हुआ रहने के कारण उत्तरी भारत की गतिविधियों से पूर्ण रूप से अलग रहा। कोई भी विदेशी दक्षिणी भारत पर अपना शासन स्थापित करने में सफलता प्राप्त नहीं कर सका।

(ज) दक्षिणी भारत उत्तरी भारत से अलग रहने के कारण हिन्दू संस्कृति और कला का केन्द्र बना रहा।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भौगोलिक परिस्थितियों का हमारे जीवन में विशेष महत्व है। इन परिस्थितियों का भारतीयों के सामाजिक और राजनैतिक जीवन पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है। किसी भी देश की सभ्यता और संस्कृति उस देश की भौगोलिक गति-विधियों पर आधारित होती है।

प्रश्न २—ऐसे कौन से तत्व हैं जिनसे भारत की एकता सुनिश्चित होती है ?

उत्तर—भारत एक अनोखा देश है और इसमें जो विचित्रताएँ दिखाई पड़ती हैं, उन्हें देखकर आश्चर्य होता है कि विभिन्नता होते हुए भी समानता और एकता क्यों नहीं बनी हुई है ? भारत में कहीं विशाल पर्वत, कहीं विशाल मैदान और कहीं बन्जर भूमि है। अलग-अलग प्रथाएँ और रहन-सहन की प्रणाली हैं। भारत में बाहरी विभिन्नताएँ होते हुए भी मौलिक एकता दिखाई पड़ती है। भारत की मौलिक एकता को निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है।

१. **भौगोलिक एकता**—भारत प्राकृतिक दृष्टिकोण से संसार की एक स्वतन्त्र इकाई है। हमारी प्रार्थना में नदियों का ही गुणगान किया जाता है। हमारे देश के कोने २ में स्थापित देव मन्दिर हमारी एकता का स्पष्ट प्रमाण हैं। हमारे धार्मिक स्थल उत्तर में अमरनाथ से लेकर दक्षिण में रामेश्वरम् तक फैले हुए हैं। जगद्गुरू शंकराचार्य ने देश की चारों दिशाओं में चार मठों की स्थापना करके देश की एकता को निश्चित किया है। भारत के विभिन्न प्रदेश एक शरीर के अलग-अलग अङ्गों के समान हैं। जिनको अलग करना पूर्णरूप से अस्वाभाविक प्रतीत होता है। भौगोलिक दृष्टिकोण से भारत एक संगठित राष्ट्र है।

२. **सांस्कृतिक एकता**—भारत एक ऐसा देश रहा है, जहाँ समय-समय पर विदेशियों के आक्रमण होते रहे हैं। विदेशियों की संस्कृति रीति-रिवाजों का समावेश भारत की मूल संस्कृति में निरन्तर होता रहा है। भारतीय संस्कृति का निरन्तर विकास होता गया, परन्तु उसकी मौलिक विशेषताओं में कोई अन्तर नहीं आ सका। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने भी उच्च विचारों को भारतीयों को समान रूप में पहुँचाया, जिससे उनकी धार्मिक प्रवृत्ति का निरन्तर वि[illegible]या सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी

भारत की मौलिकता निरन्तर बनी रही।

३. राजनैतिक एकता—भारत में प्रारम्भ से राजतन्त्र शासन प्रणाली रही है। हमारे देश में जितने भी शासक हुए, उनकी एक मात्र इच्छा चक्रवर्ती सम्राट् बनकर शासन करने की रही है। प्रथम सार्वभौमिक राज्य की स्थापना चन्द्रगुप्त मौर्य ने चाणक्य की सहायता से की। इसके पश्चात् अशोक, समुद्रगुप्त और अकबर जैसे महान् शासकों ने एक छत्र शासन स्थापित किया। प्राचीन शासकों द्वारा आयोजित राजसूय और अश्वमेध यज्ञ भी राजनैतिक एकता के स्पष्ट प्रमाण हैं। हमारी वर्तमान सरकार ने भी देशी राज्यों को संगठित कर राजनैतिक एकता स्थापित करने में महान् सहयोग प्रदान किया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि अनेकता होते हुए भी भारत की एकता स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक भारतवासी का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह प्रान्तवाद और संकुचित विचारधाराओं का परित्याग कर देश की एकता को बनाये रखने के लिए सब कुछ न्यौछावर करने के लिये तत्पर रहे।

प्रश्न ३—संक्षेप में टिप्पणियाँ लिखिये—

(१) भारत के निवासी (२) मातृभूमि की विचित्रता।

उत्तर—भारत के निवासी—भारत के मूल निवासी कौन थे, यह एक विवादग्रस्त प्रश्न बना हुआ है, जिसका कोई निश्चित निर्णय करना अत्यन्त कठिन है। भारत में आदि काल से विभिन्न जातियों का आगमन होता रहा है। भूगर्भशास्त्रियों का कथन है कि लाखों वर्ष पूर्व दक्षिणी भारत आस्ट्रेलिया और अफ्रीका से जुड़ा हुआ था। सर्व प्रथम भारत में 'नेग्रिटो' जाति का आगमग हुआ। आज भी इसी जाति से सम्बन्धित व्यक्ति केरल, आसाम और अण्डमान द्वीप में पाये जाते है। इस जाति के लोगों का रङ्ग काला, कद छोटा, सिर छोटा और उभरा हुआ ललाट है। इसके पश्चात् आग्नेय जाति का आगमन हुआ। इसी जाति को कोल कहा गया जिसके वंशज संथाल, मुण्डा आदि उड़ीसा प्रदेश में आज भी पाये जाते हैं। इन लोगों का रंग भूरा, कद नाटा, सिर लम्बा, नाक चौड़ी और चिपटी होती है। आग्नेय जाति के पश्चात् हमारे देश में द्रविड़ जाति का आगमन हुआ, जो सम्भवतया भूमध्य सागरीय प्रदेश [illegible] में आये। कहा

जाता है कि सिन्धु-घाटी की सभ्यता के जन्मदाता भी द्रविड़ ही थे। इसके पश्चात् भारत में आर्य जाति का आगमन हुआ, जिन्होंने आर्य सभ्यता को जन्म दिया। इसके पश्चात् भी हमारे देश में हूण, शक, गुर्जर, मुसलमान और मुगल आदि जातियों का निरन्तर आगमन होता रहा, जो धीरे-धीरे भारतीयों के रंग में ही रग गये। आज सब जातियाँ मिलकर एक हो गई हैं। इसलिए इनकी मौलिकता निर्धारित करना अत्यन्त कठिन है।

मातृभूमि की विचित्रता—भारत जो कि हमारी मातृभूमि है, उसकी विचित्रता भी आश्चर्य का विषय है। यदि कोई यात्री भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक यात्रा करे, तो विभिन्न दृश्य दिखाई पड़ेंगे। कहीं पर विशाल पर्वत और नदियाँ, तो कहीं उपजाऊ खेत, और कहीं रेतीले मैदान जहाँ खाने और पीने को कुछ नहीं मिलता है। प्रत्येक स्थान पर विभिन्न रीति-रिवाज, भाषा और रहन-सहन दिखाई पड़ेगा। भौगोलिक परिस्थितियों ने भारत को पूर्ण रूप से पृथक् कर दिया है। इस देश में विभिन्न मत के व्यक्ति जैसे—हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई आदि स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी परम्पराओं का पालन करते हैं। भारत बाहरी दृष्टिकोण से विभाजित दिखाई पड़ता है परन्तु आन्तरिक दृष्टिकोण से एक ही दिखाई पड़ता है। 'सदियों से भारत एक रहा है और कोई भी विदेशी इसकी एकता को नष्ट करने में असफल रहा है। इस प्रकार भारत की अनेकता में भी एकता मौजूद है और रहेगी।

अध्याय २

हमारी सांस्कृतिक परंपरा (क)

प्रश्न १—भारतीय संस्कृति अनेक जातियों के योगदान और अनेक तत्वों के मिश्रण से बनी है, इस कथन को स्पष्ट कीजिये।

उत्तर—भारत एक ऐसा देश रहा है जहाँ समय-समय पर विदेशियों का आगमन होता रहा है और हर विदेशी अपनी सभ्यता के तत्व लेकर आया, जिसका निरन्तर हमारी [illegible] समावेश होता [illegible]

संस्कृति का विकास निरन्तर योगदान से होता रहा।

१. प्राचीन काल में भारत की संस्कृति—भारत में आर्यों के आगमन से पूर्व द्रविड़ जाति के लोग रहते थे, जिनकी संस्कृति आर्यों से भिन्न थी। आर्य भारत में आये और अपने साथ नवीन संस्कृति एवं विचार-धारा इस देश में लाये। दोनों संस्कृतियों में संघर्ष हुआ। भारत में आर्य संस्कृति का जन्म हुआ और आज भी वही दिखाई पड़ती है। यद्यपि इसमें कुछ परिवर्तन अवश्य हो गये हैं। द्रविड़ संस्कृति भी पूर्णरूप से नष्ट नहीं हुई और वह आज भी दक्षिण भारत में स्थित है।

२. मध्यकाल में भारत की संस्कृति—आर्यों के पश्चात् भारत में विभिन्न जातियों का आगमन हुआ, जिनमें हूण, शक, गुर्जर, मुस्लिम और मुगल प्रसिद्ध माने जाते हैं। मुस्लिम प्रत्येक दृष्टिकोण से भारतीयों से भिन्न थे। आरम्भ में दोनों सभ्यताओं में संघर्ष हुआ। परन्तु आगे चल कर परिवर्तन हुए। दोनों संस्कृतियों में समन्वय हुआ। इस समन्वय के कारण दोनों संस्कृतियों ने सामूहिक रूप से संगीत, साहित्य और कला के विकास में पूर्णरूप से सहयोग दिया। दोनों संस्कृतियाँ पूर्णरूप से मिलकर एक तो नहीं हो सकीं, परन्तु दोनों एक दूसरे से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकीं। इस प्रकार भारतीय संस्कृति का निरन्तर विकास होता गया।

३. आधुनिक युग में भारतीय संस्कृति—मुगलों के पतन के पश्चात् हमारे देश में यूरोपीय जातियों का आगमन हुआ जिनमें अंग्रेज प्रसिद्ध माने जाते हैं। उनकी संस्कृति पश्चिमी संस्कृति कहलाई, जो कि भारतीयों से पूर्णरूप से भिन्न थी। उन्होंने भी भारतीय संस्कृति को नष्ट कर पश्चिमी संस्कृति को भारतीयों पर लादने का प्रयास किया, परन्तु वे सफलता प्राप्त नहीं कर सके। पश्चिमी संस्कृति के उपयोगी तत्व भारतीय संस्कृति में शामिल हो गये, जिससे क्रमशः हमारी संस्कृति का विकास होता गया।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संस्कृति का विकास क्रमिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप हुआ है। प्रत्येक विदेशी ने इस संस्कृति के विकास में महान् सहयोग प्रदान किया है। विभिन्न उपयोगी तत्वों के कारण भारतीय संस्कृति का मिश्रित रूप भी मौलिकता और नवीनता को लिये हुए है।

प्रश्न २—सिन्धु घाटी की प्राचीन सभ्यता की विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

उत्तर—प्राचीन काल की सभ्यताओं में सिन्धु-घाटी की सभ्यता विशेष महत्व रखती है। पुरातत्व विभाग ने १६२२ में हड़प्पा और मोहन जोदड़ो में खुदाई के कार्य द्वारा एक नवीन ऐतिहासिक पृष्ठ खोजा है, जिसे सिन्धु घाटी की सभ्यता कहते हैं। कुछ विद्वानों ने सुमेरियावासियों को इस सभ्यता का जन्मदाता माना है, परन्तु समकालीन सभ्यतायें होने के कारण द्रविड़ों को इस सभ्यता का जन्मदाता माना है, जिसका पतन आर्यों के आगमन के कारण हो गया। सिन्धु-घाटी की सभ्यता की निम्नलिखित विशेषतायें हैं:—

१. नगर और भवन निर्माण—इन नगरों की खुदाई से इन बातों का पता चलता है कि नगरों का निर्माण वैज्ञानिक ढंग पर किया गया था। सड़कों व नालियों की व्यवस्था भी की गई थी। खुदाई में एक विशाल स्नानगृह भी प्राप्त हुआ है जो ४० फीट लम्बा, २३ फीट चौड़ा और ७ फीट गहरा है।

२. सामाजिक व्यवस्था—सिन्धु घाटी के निवासियों का प्रमुख भोजन गेहूँ तथा जौ था। कुछ हड्डियाँ भी प्राप्त हुई हैं, जिन्हें देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे मांस आदि का भी प्रयोग करते थे। स्त्री तथा पुरुष दोनों को ही आभूषण प्रिय थे। मनोरंजन के लिए शिकार और शतरंज खेलते थे।

३. आर्थिक व्यवस्था—सिन्धु घाटी के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि करना था। कृषि के अतिरिक्त पशु-पालन पर भी उनका विशेष रूप से ध्यान था। वे विभिन्न प्रकार की धातुओं के सुन्दर बर्तन, खिलौने आदि बनाते थे। खुदाई और पच्चीकारी कार्य को भी भली भाँति जानते थे। खुदाई में तौल के बाट आदि भी प्राप्त हुए, जिन्हें देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सिन्धु-घाटी के निवासी व्यापार के प्रति भी रुचि रखते थे।

४. राजनैतिक व्यवस्था—प्राचीन काल के अधिकतर देशों में देवतन्त्र शासन प्रणाली थी। देवताओं के नाम पर राज्य होते थे। ऐसा अनुमान किया जाता है कि सिन्धु-घाटी एक संगठित राज्य था,

जिसकी हड़प्पा और मोहन जोदड़ो दो राजधानियाँ थीं।

४. धार्मिक व्यवस्था—सिन्धु-घाटी की खुदाई में कोई मन्दिर आदि प्राप्त नहीं हुए हैं, जिसे देखकर यह अनुमान लगाया जाता है कि वे 'प्रकृति-पूजा' करते थे। वे वृक्षों, पशुओं और नदियों की भी उपासना करते थे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उन लोगों का धार्मिक जीवन सरल और पवित्र था।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन सभ्यताओं में सिन्धु घाटी की सभ्यता अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। वर्तमान सभ्यता के अधिकांश तत्व इसी प्राचीन सभ्यता से ग्रहण किये हैं।

प्रश्न ३—भारतीय संस्कृति में धर्म का क्या स्थान है ?

उत्तर—संसार में अनेक सभ्यताओं का जन्म हुआ, उनका विकास हुआ तथा कालान्तर में उनका पतन भी हो गया। अमर सभ्यताओं में भारत की संस्कृति आज तक उसी रूप में जीवित रह सकी है। इसका एक मात्र कारण यह है कि धर्म की प्रधानता ने भारतीय सभ्यता को जीवित रखने में सहयोग प्रदान किया।

१. **धर्म शब्द की व्याख्या**—धर्म शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'धृ' धातु से हुई है जिसका अर्थ है धारण करना अथवा सम्भालना। जो वस्तुएँ अनादि काल से दिखाई पड़ रही हैं इसका एक मात्र कारण यह है कि प्रत्येक अपने कर्त्तव्य का पालन सुचारूरूप से कर रहा है। धर्म के आधार पर प्राचीन संस्कृति आधारित है और इसी विशेषता के कारण निरन्तर आगे बढ़ रही है।

२. **भारतीय संस्कृति में धर्म का स्थान**—भारतीय संस्कृति में धर्म का एक विशेष स्थान रहा है। भारतवासी प्रारम्भ से धर्म और कर्म को एक ही मानकर चले हैं। प्रत्येक व्यक्ति के विभिन्न परिस्थितियों में जो कर्त्तव्य हैं, उनका सुचारू रूप से पालन करना ही धर्म है। धर्म और कर्म का आशय इस प्रकार स्पष्ट किया जाता है। उदाहरण के लिए कोई पिता अपने परिवार के पालन-पोषण के लिये परिश्रम करता है। परिश्रम करना उसका कर्त्तव्य है, परन्तु इसके साथ ही यह उसका पितृ-धर्म है। ठीक इसी प्रकार एक सैनिक युद्ध भूमि में लड़ता है। लड़ना उसका कर्त्तव्य है, परन्तु इसके साथ ही उसका सैनिक-धर्म भी

है। धर्म और कर्म की प्रधानता के कारण भारतीय संस्कृति धर्म प्रधान बन गई, और भारतवासी धर्म की रक्षा के लिये सब कुछ परित्याग करने के लिये तत्पर रहे।

३. समाज का विभाजन—प्रत्येक व्यक्ति अपने धर्म का पालन सुचारू रूप से करे। इस सिद्धांत को दृष्टिगत रखते हुए आर्यों ने हमारे समाज को चार भागों में विभक्त किया—(१) ब्राह्मण (२) क्षत्रीय (३) वैश्य (४) शूद्र और इसी आधार पर वर्णाश्रम की व्यवस्था भी की गई जो क्रमश: निम्नलिखित हैं—(१) ब्रह्मचर्य (२) गृहस्थाश्रम (३) वानप्रस्थाश्रम (४) संन्यासाश्रम। इन वर्ण-आश्रमों का एक मात्र लक्ष्य कर्त्तव्य और धर्म पालन की शिक्षा देना था।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संस्कृति में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान है। धर्म की प्रधानता होने के कारण ही हमारी प्राचीन संस्कृति आज तक जीवित है और कोई भी विदेशी इसे पूर्ण रूप से नष्ट करने में सफलता प्राप्त नहीं कर सका।

प्रश्न ४—भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारत की प्राचीन संस्कृति विश्व की अन्य संस्कृतियों में अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। अनेक सभ्यताओं का उदय हुआ और पतन भी, परन्तु भारतीय संस्कृति आज भी निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर हो रही है। भारतीय संस्कृति की निम्नलिखित विशेपतायें हैं जो अन्य सभ्यताओं में नहीं पाई जाती हैं। पण्डित जवाहरलाल नेहरु के शब्दों में "संस्कृति मन आचार अथवा रुचियों का परिष्कृत अथवा शुद्ध रूप है, जिसमें मनुष्य निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर होता रहता है।" हमारी संस्कृति की विशेपताओं की व्याख्या निम्न रूप में की जा सकती है:—

१. संस्कृति की प्राचीनता—भारत की संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है, जिसने मिश्र, यूनान, रोम, बेबीलोनिया आदि सभ्यताओं का उत्थान और पतन देखा है। चीन की संस्कृति के अतिरिक्त भारत की तुलना किसी अन्य देश से नहीं की जा सकती है। हमारी संस्कृति ईसा ३५०० से ५००० वर्ष तक प्राचीन है।

२. चिर स्थायिता—संसार में अनेक संस्कृतियों का विकास हुआ, परन्तु वे काल के विकराल चक्र में लीन हो गईं, परन्तु भारत की संस्कृति प्राचीन होने के साथ-साथ स्थाई है। विदेशियों ने अनेक बार आक्रमण कर हमारी प्राचीन संस्कृति को नष्ट करने का प्रयास किया, परन्तु वे सफलता प्राप्त नहीं कर सके। अनेक कठिनाइयों को सहन करके भी हमारी सभ्यता जीवित है। विदेशी सभ्यताओं से निरन्तर इसे नव जीवन प्राप्त होता रहा है।

३. समन्वय शक्ति—समन्वय का अर्थ होता है, कुछ झुकना और कुछ झुकाना अर्थात् विशेपताओं को ग्रहण करने के लिए तत्पर रहना, और अपनी विशेपताओं के प्रति दूसरों को आकर्पित करना। प्रो० डडवेल ने लिखा है "भारत की संस्कृति में समुद्र के समान सोखने की शक्ति है। जिससे निरन्तर भारतीय सभ्यता का विकास होता गया।" विदेशियों ने भरसक प्रयत्न हमारी संस्कृति को नष्ट करने के लिए किये, परन्तु सफलता प्राप्त नहीं कर सके। विदेशी भी भारतीय रङ्ग में रङ्ग गये। भारतीय संस्कृति अच्छे तत्वों को ग्रहण कर निरन्तर आगे बढ़ती गई।

४. सत्यं शिवं सुन्दरम् का महान आदर्श—भारतीय संस्कृति का मूलमन्त्र "सत्यं शिवं सुन्दरम्" की भावता में निहित है। इन्हीं आधार शिलाओं पर हमारा सामाजिक जीवन रूपी भवन आधारित है। यही उच्च भावना हमारी संस्कृति का प्राण है।

५. आध्यात्मिकता की प्रधानता—भारतवासियों का दृष्टिकोण प्रारम्भ से आध्यात्मिक रहा है। इसमें प्रारम्भ से धर्म की प्रधानता रही है। धर्म और कर्म दोनों को एक ही समझा गया है। भारतीयों ने प्रत्येक कार्य विशाल दृष्टिकोण से किया है। सत्य, त्याग, कर्त्तव्य पालन और अहिंसा की भावना हमारी आध्यात्मिकता का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति इस विशेषता के कारण आज तक जीवित रह सकी है।

६. सहनशीलता की प्रवृति—धार्मिक दृष्टिकोण से भी भारतीयों की प्रवृति में सहनशीलता रही। उदारता के लिए भारतवासी आज भी विश्व में प्रसिद्ध हैं। उनका मूलमन्त्र है 'जीओ और जीने दो' इतना महान् आदर्श विश्व की किसी संस्कृति में देखने को नहीं मिलता है।

भारतियों के नैतिक बल का लोहा विश्व के सभी राष्ट्रों ने स्वीकार किया है। भारतीय संस्कृति ने प्रारम्भ से आज तक साम्राज्यवादी भावना का विरोध किया है। सहनशीलता के कारण भारतीय संस्कृति का निरन्तर विकास होता गया।

७. नारी का महान गौरव—भारतीय संस्कृति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। नारी को सदैव शक्ति का रूप मानकर उसकी उपासना की गई है। मनु ने लिखा है कि "जहाँ नारी जाति की पूजा की जाती है, वहाँ देवों की प्रीति होती है। जहाँ नारी जीवन सुखी होता है, वहाँ सदैव स्मृद्धिशालिता की वृद्धि होती है।" इस विशेषता ने भारतीय संस्कृति को जीवित रखने का सहयोग प्रदान किया है।

८. सर्वाङ्गीण विकास—भारतीय संस्कृति का एक मात्र लक्ष्य भौतिक और नैतिक विकास करना रहा है। जीवन के सम्पूर्ण विकास की प्रवृत्ति का पालन ही भारतीय संस्कृति ने आरम्भ से किया है। भारत भूमि पर विभिन्न विचारधाराएँ, सामाजिक व्यवस्थाएँ और सांस्कृतिक विभिन्नताएँ एक साथ मुक्त रूप से विकसित हो सकी हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संस्कृति अपनी विशेषताओं के कारण आज तक जीवित रह सकी है। कोई भी विदेशी ऐसी अविरल गति को नहीं रोक सका है। विश्व के शक्तिशाली राष्ट्र आज भी भारत के नैतिक बल से प्रभावित हैं। भारत की प्राचीन संस्कृति आज भी उन्नति की ओर अग्रसर हो रही है।

प्रश्न ५—'भारतीय दर्शन में हम अत्यन्त गूढ़ विषयों पर बड़ा स्पष्ट चिंतन पाते हैं।' इस कथन को स्पष्ट कीजिये।

उत्तर—भारत का दर्शन साहित्य संसार में अत्यन्त प्रसिद्ध और व्यापक है। हमारे देश में जितना आध्यात्मिक साहित्य पाया जाता है वैसा किसी अन्य देश ने प्रस्तुत नहीं किया है। प्रत्येक दर्शन ग्रन्थ के गूढ़ रहस्य को स्पष्ट रूप से समझाया गया है इस कथन की सत्यता को सिद्ध करने के प्रमुख दर्शन ग्रन्थों का विवरण देना अनिवार्य हो जाता है।

१. वेद—वेद भारतीय संस्कृति के प्राचीन दर्शन ग्रन्थ हैं वेद चार हैं—(क) ऋग्वेद (ख) यजुर्वेद (ग) सामवेद (घ) अथर्ववेद

प्रत्येक वेद के तीन भाग हैं—(१) संहिता (२) ब्राह्मण (३) आरण्यक और उपनिषद्। संहिताओं में ईश्वर और देवताओं की स्तुति की प्रधानता है। ब्राह्मणों में यज्ञ और कर्मकांड की विवेचना की है। आरण्यकों में धर्म के रहस्य को स्पष्ट किया है। वेदों में प्रकृति के रहस्य का व्यापक वर्णन किया गया है। इसमें सम्पूर्ण मानव जीवन की सुन्दर और मधुर कल्पना की गई है। वास्तव में वेद आशावादी जीवन के प्रतीक हैं। वेद भारतीय सांस्कृतिक जीवन का कवित्वपूर्ण इतिहास है और दूसरी ओर वे भारतीय ब्रह्म-ज्ञान के आदि स्रोत हैं।

२. उपनिषद्—उपनिषद् दर्शन शास्त्र का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। ब्रह्मविद्या का विशद् वर्णन इस ग्रन्थ में किया गया है। इसमें दार्शनिक तत्वों का अत्यन्त सरलता से समझाने का प्रयास किया है। उपनिषद् ज्ञान के अगाध भण्डार हैं। सम्पूर्ण विद्याएँ दर्शन शास्त्र, तर्क विज्ञान आदि इन्हीं से निकालकर आज मानव जाति को अनन्य ज्ञान का आनन्द प्रदान कर रहे हैं। प्रो० मैक्समूलर ने लिखा है, "उपनिषद् वेदान्त के आदि स्रोत हैं और ये ऐसे निबन्ध हैं जिनमें मुझे मानवीय उच्च भावना अपने उच्चतम शिखर पर पहुँचती हुई प्रतीत होती है।" प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक शोपेनहार ने भी मुक्त कठ से प्रार्थना करते हुए लिखा है कि "सम्पूर्ण विश्व में कोई ऐसा स्वाध्याय नहीं है जो उपनिषदों के मान उपयोगी तथा उन्नति की ओर ले जाने वाला हो। मेरे जीवन और मृत्यु दोनों का एक मात्र सहारा यही है।"

३. गीता—गीता भक्ति और कर्म की महत्ता का प्रमुख ग्रन्थ है। इसमें सब दार्शनिक ग्रन्थों का सार है। यही कारण है कि गीता को पाँचवाँ वेद माना गया है। गीता का मानव जाति को एक मात्र संदेश केवल यही है कि "मनुष्य को केवल कर्म की चिन्ता करनी चाहिए, फल की नहीं, इसका निर्णय स्वयं भगवान करेंगे।" इस ग्रन्थ की महानता के प्रति विदेश भी आसक्त हुए बिना नहीं रहे हैं। अमेरिका के प्रसिद्ध कवि इमर्सन ने जब वाल्डेन मे संत थोरों के खाट के नीचे सर्पों को घूमते हुए देखा, तो उसने उत्सुकता से पूछा महाराज, क्या आपको इनसे भय नहीं लगता है? संत महोदय ने अपने सिहराने से गीता निकालकर गद्गद् हो उत्तर दिया "माँ गीता की गोद में उसके अबोध बालक को भय

की सम्भावना कहाँ है ?" गीता द्वारा दिया हुआ यह आत्मबल का संदेश संसार का कोई ग्रन्थ नहीं दे सका।

४. रामायण और महाभारत—रामायण और महाभारत हमारे महाकाव्य हैं, जिनमें धर्म को व्यावहारिक रूप से प्रस्तुत किया गया है। इन ग्रन्थों में भारतीय संस्कृति, वीरता और यशस्वी जीवन का सुन्दर और धार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है। इन ग्रन्थों के द्वारा मानव जाति को गुण और अवगुण का ज्ञान सरलतापूर्वक हो जाता है। गुणों को ग्रहण करके हम अपने जीवन को सुखी और महान् बना सकते हैं।

५. स्मृति और पुराण—भारत के प्राचीन ग्रन्थों में स्मृति और पुराण भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। इनमें देवी-देवताओं से सम्बन्धित काल्पनिक कहानियाँ दी गई हैं। इन कथाओं में प्रकृति और मानव जीवन सम्बन्धी कार्यों पर काल्पनिक रूपक हैं। इन कहानियों के आधार पर मानव जीवन के गुण व अवगुण का विशद वर्णन किया गया है।

६. षट्दर्शन शास्त्र—दर्शन दो प्रकार के होते हैं आस्तिक, नास्तिक। आस्तिक दर्शन वे हैं जो ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास रखते हैं और नास्तिक ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते हैं। भारत के अस्तित्व दर्शन ग्रन्थ छः हैं।

(क) गौतम ऋषि का न्याय दर्शन (ख) कपिल ऋषि का सांख्य दर्शन। (ग) पातंजलि ऋषि का योग दर्शन (घ) कणाद ऋषि का वैसेषिक दर्शन (ङ) जैमिनी ऋषि का पूर्व मीमांसा दर्शन (च) बादराण ऋषि का उत्तर मीमांसा दर्शन।

नास्तिक दर्शनों के चार्वाक् ऋषि का भौतिकवाद और जैन तथा बौद्ध दर्शन प्रमुख हैं, जो ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते हैं। जैन दर्शन अनेकान्तवादी है। इसका अभिप्राय यह है कि एक वस्तु को विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है तथा निर्णय करना अत्यन्त कठिन है कि कौनसी दृष्टि सही और कौनसी गलत है। इस प्रकार जैन और बौद्ध ग्रन्थ भी दार्शनिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं

७. अद्वैतवाद दर्शन—भारत में आठवीं शताब्दी के अन्त में एक महान विचारक उत्प

कम आयु में ही विभिन्न दार्शनिक ग्रन्थों का अध्ययन किया। शंकराचार्य ने अपने ग्रन्थों में इस सिद्धांत को प्रतिपादित किया कि हमें जो कुछ दिखाई पड़ता है या जो कुछ इन्द्रियों के द्वारा जाना जाता है, वह सत्य नहीं है,' अपितु माया या भ्रम है। माया के कारण ही एक सत्य सत्ता अनेक रूपों से दिखाई पड़ती है। सृष्टि में अनेकता को देखना अज्ञानता और केवल एक ही सत्ता के दर्शन करना ही ज्ञान का प्रतीक है। यदि अनेकता दिखाई पड़ती है तो वह केवल माया का रूप है। शंकराचार्य के इस सिद्धांत को अद्वैतवाद कहा जाता है। अद्वैतवाद का अर्थ है 'दोपन का अभाव' जो कुछ है वह केवल एक ही है दूसरे नम्बर पर कुछ नहीं है। शंकराचार्य ने अपने इस मत पर विभिन्न विद्वानों से शास्त्रार्थ किया पर उन्हें कोई पराजित नहीं कर सका। शंकराचार्य के पश्चात् रामानुज और निम्बार्क आदि विचारकों ने उनके मत का पूर्ण रूप से खण्डन किया।

दर्शनशास्त्र में भारत का दूसरा स्थान है। विश्व के समस्त राष्ट्रों ने हमारे दार्शनिक ग्रन्थों का लोहा स्वीकार कर लिया है। वर्तमान विज्ञान ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि 'यह सृष्टि परमाणुओं से मिलकर बनी है। यही बात कणाद् ऋषि ने हजारों वर्ष पूर्व अपने 'वैशेषिक दर्शन' में कही थी। शंकराचार्य ने भी कहा था, "यह सृष्टि एक जादू है जो विभिन्न तत्वों से नहीं अपितु एक ही तत्व से बनी है।" यह मत आज वैज्ञानिकों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। हमारे दर्शन ग्रन्थ अमूल्य निधि हैं। इस प्रकार यह निःसन्देह रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय दर्शन में हम अत्यन्त गूढ़ विषयों पर बड़ा स्पष्ट चिन्तन पाते हैं जिसका उदाहरण इस संसार में कहीं भी मिलना कठिन है।

प्रश्न ६—जैन और बौद्ध धर्मों के प्रमुख उपदेशों का वर्णन कीजिये।

उत्तर—मानव के धार्मिक जीवन में ईसा से पूर्व की छठी शताब्दी अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। इस काल में अनेक महापुरुष हुए, जिन्होंने धर्म का सच्चा रूप जनता के सामने रखा। ऐसे महापुरुषों में महावीर स्वामी और महात्मा बुद्ध अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। उन्होंने वैदिक धर्म के दोषों से दुखित जनता को धर्म का वास्तविक महत्व समझाया।

० जैन धर्म के सिद्धान्त और उपदेश — प्रमाणिक

ग्रन्थ नहीं मानते हैं। उनकी दृष्टि में यज्ञ, हवन आदि का कोई महत्व नहीं है। अतः उन्होंने अहिंसा का प्रचार किया। जैन मतावलम्बी संसार के सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता व हर्ता के रूप में विश्वास नहीं करते हैं। संसार किसी की रचना नहीं है अपितु यह तो अनादि और अनन्त है। वे ज्ञान, दर्शन, चरित्र और तप को विशेष महत्व देते हैं। जैन धर्म के अनुसार प्रत्येक गृहस्थी को पाँच व्रत करने चाहियें।

(क अहिंसाणुव्रत—निरपराधियों को दण्ड नहीं देना चाहिए।

(ख) सत्याणुव्रत--द्वेष का परित्याग कर सत्य का पालन करना चाहिए।

(ग) अस्तेय—चोरी नहीं करनी चाहिए।

(घ) ब्रह्मचर्याणुव्रत—स्त्री समागम से यथा सम्भव दूर रहना चाहिए।

(ङ) परिग्रह परिणाम अणुव्रत—आवश्यकता से अधिक संग्रह करना पाप है।

२. पंच महाव्रत—आत्मा को बंधनों से मुक्त करने के लिए पंच महाव्रत जैनियों ने ग्रहण किए हैं।

(१) अहिंसा (२) सत्य (३) अस्तेय (४) ब्रह्मचर्य (५) अपरिग्रह।

३. त्रिरत्न सिद्धांत—जैन धर्म के अनुसार अज्ञानता मनुष्य का प्रमुख शत्रु है। इस कारण मोह, क्रोध और लोभ बढ़ता है। इससे मुक्ति प्राप्त करने के लिए सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित्र और सम्यक् कर्त्तव्य होना आवश्यक है। इसे त्रिरत्न सिद्धांत कहते हैं।

४. बौद्ध धर्म के सिद्धांत और उपदेश—महात्मा बुद्ध ने यह बताया कि संसार दुखों का घर है और दुखों का कारण बढ़ती हुई इच्छाएँ हैं। अतः वासनाओं का दमन मुक्ति प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। सांसारिकता से मुक्ति प्राप्त करने के लिए उन्होंने अष्टमार्ग सिद्धांत का निर्माण किया जिसमें आठ तत्व शामिल हैं।

(क) सम्यक् दृष्टि (ख) सम्यक् संकल्प (ग) सम्यक् वाक (घ) सम्यक् कर्मान्त (ङ) सम्यक आजीव (च) सम्यक् व्यायाम (छ) सम्यक् स्मृति (ज) सम्यक् समाधि।

महात्मा बुद्ध की [illegible] यन्त सरल और साधारण भी थीं जो बन्त

अधिक लोकप्रिय हुईं। ये निम्नलिखित हैं—

(१) धन का लोभ न करना (२) अहिंसा के सिद्धांत का पालन करना (३) मद्यपान न करना (४) मिथ्या भाषण से दूर रहना (५) व्यभिचार न करना (६) संगीत तथा नृत्य आदि में भाग नहीं लेना (७) अंजन, पुष्प और सुवासित द्रव्यों का सेवन न करना (८) कुसमय भोजन न करना। (९) कोमल शैया का त्याग करना (१०) द्रव्य ग्रहण नहीं करना।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी ने आदर्श सिद्धान्तों का निर्माण कर मानव जाति का मार्ग दर्शन किया। जनता जो वैदिक धर्म के दोषों से परेशान हो गई थी, उसको धर्म का सच्चा रूप बताया तथा उसके जीवन को सुखी बनाया।

प्रश्न ७—संक्षेप में टिप्पणियाँ लिखिए— (१) सभ्यता और संस्कृति (२) पुनर्जन्म का सिद्धांत (३) गीता का उपदेश (४) षट् दर्शन।

उत्तर—१. सभ्यता और संस्कृति—सभ्यता और संस्कृति दोनों शब्दों को एक ही मानकर उनका प्रयोग अधिकतर किया जाता है। वास्तव में दोनों शब्द अलग-अलग हैं और उनका अर्थ समझ लेना भी अत्यन्त आवश्यक है। अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो प्रयत्न किये जाते हैं उससे सम्बन्धित व्यवहार को सभ्यता कहते है। मनुष्य एक भावनाशील प्राणी भी है, इसलिए आध्यात्मिक विकास के लिए जो भी कार्य किये जाते हैं, उसे संस्कृति कहते हैं। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि मानव जीवन के दो पक्ष होते हैं एक तो बाह्य और दूसरा आन्तरिक जीवन से है।

२. पुनर्जन्म का सिद्धांत—मनुष्य का वर्तमान जीवन ही प्रथम और अन्तिम जीवन नहीं है। सृष्टि पर प्राणियों का आगमन इसी प्रकार होता रहा है। मनुष्य की आत्मा अमर है और शरीर नाशवान है। यही आशय श्रीकृष्ण ने गीता में स्पष्ट किया है, "जो जीवित हैं उसकी मृत्यु और जो मर चुका है उसका पुनर्जन्म निश्चित है।" पुनर्जन्म के साथ ही

कर्म करता है, उसे वैसा ही फल भोगना पड़ता है। पुनर्जन्म का सिद्धांत भी यही बतलाता है कि अच्छा कर्म करने वाले को आगामी जन्म में अच्छी योनि प्राप्त होती है और बुरा कर्म करने वाला नीच योनि में जन्म लेता है।

३. गीता का उपदेश—गीता भारत के धार्मिक ग्रन्थों में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। गीता महाभारत का एक छोटा सा अंश है। इसमें सम्पूर्ण भारतीय धर्म का सार है। गीता की सबसे बड़ी शिक्षा यह है कि हमें निष्काम रह कर अर्थात् मोह और ममता का परित्याग कर अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए। मनुष्य को अपनी जान की बाजी लगा कर कर्त्तव्यों का पालन करने में पीछे नहीं रहना चाहिए। मनुष्य को फल की चिन्ता किये बिना निरन्तर कर्मशील रहना चाहिए। जैसा—ईश्वर चाहेगा, परिणाम वैसा ही होगा। हमें यह विश्वास रखना चाहिये कि ईश्वर इस संसार को चला रहा है। अपने धर्म का पालन करो, बस यही गीता के उपदेश का सार है।

४. षट् दर्शन—इसकी विस्तृत व्याख्या प्रश्न ५ में की गई है। वहाँ इसका उत्तर पढ़िये।

प्रश्न ८—आर्यों के पारिवारिक जीवन की विशेष बातों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—प्रारम्भिक अवस्था में आर्यों का जीवन सादा एवं सरल था। वे अनुशासन के महत्व को समझते थे तथा प्रत्येक परिवार के सदस्य को अपने कर्त्तव्य का भली प्रकार से ज्ञान था। आर्यों के पारिवारिक जीवन में निम्नलिखित विशेषतायें थीं:—

१. वयोवृद्ध व्यक्ति की प्रमुखता—परिवार में सबसे बड़ा व्यक्ति आदर की दृष्टि से देखा जाता है। उसकी आज्ञाओं का पालन अनिवार्य रूप से किया जाता था। उसकी आज्ञा का कोई भी सदस्य उलंघन नहीं कर सकता था। उलंघन करने पर दण्ड का भागी होता था।

२. आपसी सहयोग एवं प्रेम—परिवार में दादा, दादी, चाचा, चाची, भाई, भाभी आदि सभी एक साथ मिलकर रहते थे। एक दूसरे की सहायता करना अपना कर्त्तव्य समझता था। इस प्रकार परिवार के सदस्यों में परस्पर प्रेम [illegible] रहता था।

३. **स्त्रियों का स्थान**—स्त्रियों का आदर किया जाता था। प्रत्येक धार्मिक कृत्य में नारी का होना अनिवार्य समझा जाता था। महिलायें विदुषी होती थीं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आर्यों का पारिवारिक जीवन आदर्शमय था। वे समाज में सदाचारपूर्ण तथा प्रसन्नतापूर्वक जीवन व्यतीत करते थे।

प्रश्न ९—वर्ण व्यवस्था और आश्रम प्रथा का जन्म किन परिस्थितियों में हुआ? आर्य सभ्यता में इन्हें आप क्या स्थान प्रदान करेंगे?

उत्तर—आज से लगभग ६ हजार वर्ष पूर्व आर्य भारत में आये। यहाँ पर स्थाई रूप से बस जाने के उपरांत आर्यों ने एक स्वस्थ सामाजिक जीवन की व्याख्या करना प्रारम्भ किया। आर्यों की अनेक सामाजिक संस्थाओं में से वर्ण व्यवस्था एवं आश्रम प्रथा अपना प्रमुख स्थान रखते हैं।

वर्ण व्यवस्था एवं आश्रम प्रथा क जन्म में परिस्थितियों का योग:—वर्ण व्यवस्था के जन्म में निम्न परिस्थितियों ने अपना योग दिया:—

(क) गुणों की असमानता:—प्रकृति ने मानव को भिन्न २ गुण प्रदान किये हैं। प्रत्येक के गुण व प्रतिभा एक दूसरे से नितान्त भिन्न हैं। यही कारण है कि एक ही परिवार में कोई वैज्ञानिक है तो कोई कलाकार, कोई कवि है तो कोई डॉक्टर। व्यक्ति के गुणों की इस असमानता ने ही भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था को जन्म दिया।

(ख) कर्म विभाजन:—गुणों की इस असमानता को जब भारतीय समाज में दूर करने का प्रयत्न किया गया तो यही समझा गया कि समाज में सब व्यक्ति प्रत्येक काम को नहीं कर सकते। किसी एक ही कर्म या व्यवसाय को प्रत्येक व्यक्ति की जीविका का आधार नहीं बनाया जा सकता। यही नहीं अपितु कर्म के विभाजन में मनुष्य के जीवन की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति अल्प समय में हो जाती है अतः समाज के निर्माण के लिए कर्म-विभाजन की आवश्यकता को आर्यों ने समाज के प्रारम्भिक जीवन में ही समझ लिया था।

(ग) समाज में जन्म के स्थान पर गुणों की प्रधानता:—भारतीय समाज के प्रारम्भिक जीवन में गुणों की प्रधानता थी। अपने गुणों के आधार पर ही वर्णों में विभक्त होते थे। कोई अव्यवस्था न फैले इसके लिये अनिवार्य था कि मनुष्य को एक वर्ण से दूसरे वर्ण में जाने की छूट हो। भारतीय इतिहास में अनेकों उदाहरण हैं जिनसे यह स्पष्ट होता है कि परिस्थितियों व गुणों के कारण वर्ण-परिवर्तन होते रहे हैं जैसे विश्वामित्र लोपा मुद्रा।

आश्रम प्रथा के जन्म में भी निम्न परिस्थितियों ने अपना योग दिया:—

(क) सौ वर्ष की आयु का उपभोग करने का प्रयत्न:—"हमें सौ वर्ष की उम्र दो" यही प्रार्थना प्रत्येक आर्य करता था और अपनी इस आशा की सफलता के लिये आर्यों ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थों के आधार पर आश्रम व्यवस्था को जन्म दिया।

(ख) जीवन को सम्पन्न और सन्तुलित करने की इच्छा:—
प्रत्येक आर्य एक प्रतिष्ठित, सम्पन्न व संतुलित जीवन व्यतीत करना चाहता है। यही कारण है कि वह इस लोक में ही नहीं परलोक में भी सुखी रहना चाहता है। इसके लिये वह आश्रम व्यवस्था द्वारा पितृ-ऋण, ऋषि ऋण और देव ऋण से मुक्त होने की चेष्टा करता है। इसी कारण भारतीय समाज में आश्रम प्रथा की व्यवस्था की गई।

(ग) व्यक्तित्व का पूर्ण विकास:—आर्य के जीवन का यह उद्देश्य था कि वह अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करे और यह विकास, समाज परिवार व देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों को पूरा करते हुए हो। इसी विकास की पूर्ति के कारण आश्रम-प्रथा की व्यवस्था की गई।

उक्त परिस्थितियों के कारण ही वर्ण व्यवस्था के साथ २ आर्यों ने आश्रम व्यवस्था भी चलायी और इन संस्थाओं की सफलता के लिए तीन ऋण व चार पुरुषार्थों को आधार बनाया गया।

संक्षेप में वर्ण चार थे-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र। आश्रम भी चार थे-ब्रह्मचर्य आश्रम—जिसके द्वारा धर्म-पुरुषार्थ की पूर्ति की जाती थी, गृहस्थ आश्रम—जिसके द्वारा अर्थ व काम-पुरुषार्थों की पूर्ति होती थी, वान-प्रस्थाश्रम व संन्यास ... द्वारा मोक्ष पुरुषार्थ की पूर्ति होती थी।

आर्य सभ्यता में वर्ण-व्यवस्था और आश्रम-प्रथा का स्थान:—प्राचीन आर्य-जीवन में वर्ण-व्यवस्था और आश्रम-प्रथा का एक प्रमुख स्थान है। इन संस्थाओं के कारण आर्यों के जीवन में एक व्यवस्था आई। एक वैज्ञानिक दृष्टि-कोण से इन संस्थाओं ने प्राचीन आर्य सभ्यता को विश्व की श्रेष्ठतम सभ्यता का रूप दिया। वर्ण के स्पष्ट विभाजन से मनुष्यों के गुणों की भिन्नता का उपयोग हुआ, उनके व्यक्तित्व का उचित विकास हुआ। उनका जीवन एक स्वस्थ एवं संतुलित जीवन था जिसके कारण अधिकतर आर्य सौ वर्ष के जीवन का उपभोग करते थे। परन्तु बाद में इन संस्थाओं में अनेक बुराइयाँ आ गईं और उन्होंने अपना वह स्थान आर्यों के सामाजिक जीवन में से खो दिया जो प्रारम्भिक रूप में था। वर्ण व्यवस्था में कट्टरता आ गई जिसके कारण व्यक्ति के स्वतंत्र विकास में बाधा पड़ गई, देश की एकता नष्ट हो गई। आश्रम व्यवस्था नष्ट हो गई और आर्य के जीवन का तेज लुप्त हो गया।

फिर भी इन संस्थाओं की महत्व की गुरुता की अवहेलना नहीं की जा सकती। इसी कारण स्वतंत्र भारत में इनके दोषों को दूर करने के प्रयास किये जा रहे हैं।

अध्याय ३

हमारी सांस्कृतिक परंपरा (ख)

प्रश्न १—प्राचीन भारत की साहित्यिक प्रगति पर प्रकाश डालते हुए अपने विचार लिखिए।

उत्तर—साहित्य समाज का दर्पण है, ऐसा कहा जाता है और यह कथन सत्य भी है। भारत का प्राचीन साहित्य आर्यों की अनुपम देन है। वेद, पुराण, महाकाव्य, स्मृतियाँ, वेदांग आदि हमारी साहित्यिक निधि हैं। भारत की साहित्यिक प्रगति का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है:—

१. वेद—वेदों की प्राचीनता का निर्णय करना अत्यन्त कठिन है। कुल वेद चार हैं—ऋगवेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। प्रत्येक वेद के चार प्रमुख अंग हैं—संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्। संहिता में देवी-देवताओं की उपासना की [illegible] ब्राह्मण

में वैदिक यज्ञों का वर्णन किया गया है। आरण्यक ग्रन्थों में यज्ञों के आध्यात्मिक पक्ष का वर्णन किया गया है। उपनिषद् ब्रह्म विद्या की अमूल्य निधि है।

२. वेदांग—प्राचीन काल में वेद इतने महत्वपूर्ण थे कि प्रत्येक प्रकार के साहित्य के लिए वेद का प्रयोग किया जाता था। उस समय शिक्षा कल्प, व्याकरण छंद, निरुक्त और ज्योतिष आदि छ: प्रकार के शास्त्र और भी थे, जिन्हें वेदांग कहा जाता था। वेदांग का दूसरा नाम सूत्र साहित्य है। सूत्र साहित्य वह कहलाता है जिसमें किसी बात को कहने के लिये कम से कम शब्दों का प्रयोग किया जाये। आयुर्वेद, धनुर्वेद-गंधर्व-वेद आदि चार उपवेद भी थे, जिनमें युद्ध विद्या, वैद्यक और संगीत शास्त्र आदि का वर्णन किया गया था। इस प्रकार प्राचीन भारत में साहित्य का पूर्ण रूप से विकास हुआ।

३. रामायण और महाभारत—वेदों के पश्चात् हमारे प्राचीन साहित्य का निरन्तर विकास होता गया। महर्षि वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य की रचना की, जिसमें 'राम कथा' को मानव समाज के सामने प्रस्तुत किया। इसके पश्चात् महर्षि वेदव्यास ने महाभारत की रचना की। इसमें मानव की जटिल समस्याओं को हल करने के लिए अमूल्य सुझाव दिये गये हैं। महाभारत काल में सामाजिक जीवन का पतन आरम्भ हो गया था। छल और कपट की प्रधानता हो गई थी। स्त्रियों का अपमान तो मामूली सी बात हो गई थी। ऐसी स्थिति में जैन और बौद्ध धर्म का जन्म हुआ, जिसका भारतीयों के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा।

४. बौद्ध तथा जैन साहित्य—महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म को जन्म दिया। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके उपदेशों को लिखित रूप प्रदान किया गया है। पाली भाषा में ग्रन्थों की रचना की गई। बौद्ध ग्रन्थों में तीन ग्रन्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं—(क) विनय पिटक (ख) सुत्त पिटक (ग) धम्म पिटक। महावीर स्वामी ने जैन धर्म का विकास किया। जैनियों के ग्रन्थ 'आगम' कहे जाते हैं।

५. पुराण—भारत में नवीन धार्मिक चेतना के कारण प्राचीन सा[illegible] का जीर्णोद्धार किया [illegible] ण की रचना की गई जिसमें

सरल और सुबोध कहानियों का समावेश कर देश की संस्कृति का ज्ञान कराया गया। पुराण का अर्थ है प्राचीन, परन्तु इसका ऐतिहासिक पक्ष विश्वसनीय नहीं है। इसका एक मात्र कारण यह है कि इसमें कल्पना की प्रधानता अधिक है।

६. स्मृतियाँ—स्मृति साहित्य प्राचीन साहित्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह उस प्रकार का साहित्य है, जिसमें सामाजिक व्यवस्था के तत्कालीन विचारों को लिपिवद्ध किया गया है। ऐसी प्राचीन स्मृतियों में मनुस्मृति और पाराशर स्मृति अत्यन्त आदरणीय समझी जाती है।

७. संस्कृत साहित्य का नवीन विकास—गुप्तकाल में संस्कृत साहित्य का पूर्ण रूप से विकास हुआ। महाकवि कालिदास ने मेघदूत, रघुवश और कुमार सम्भव सार आदि अमूल्य ग्रन्थों की रचना की। संस्कृत कथा साहित्य में हितोपदेश और पंचतंत्र सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हो चुके हैं। उस समय संस्कृत राष्ट्र-भाषा बन गई थी। चीनी यात्री इत्सिंग ने भारत आते समय सुमात्रा द्वीप में रुककर ६ माह तक संस्कृत भाषा का अध्ययन किया।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत में साहित्य का पूर्णरूप से विकास हुआ। हमें प्राचीन भारत में साहित्य की रक्षा करनी चाहिए तथा प्राचीन अनुभवों से लाभ उठाना चाहिये।

प्रश्न-२—तक्षशिला अथवा नालन्दा विश्वविद्यालयों के संबंध से आप क्या जानते हैं? संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—प्राचीन भारत शिक्षा का प्रमुख केन्द्रों में रहा है। हमारे देश में कई विश्वविद्यालय अत्यन्त प्रसिद्ध रहे हैं जिनमें तक्षशिला और नालन्दा विश्वविद्यालय प्रमुख माने जाते हैं। इन विश्वविद्यालयों में विदेशों से शिक्षा प्राप्त करने आते थे। दोनों विश्वविद्यालयों की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है।

१. तक्षशिला विश्वविद्यालय—भारत का प्राचीनतम विश्व-विद्यालय तक्षशिला था। इसी विश्वविद्यालय में प्रमुख व्याकरणाचार्य पाणिनि और राजनीति शास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान चाणक्य ने भी शिक्षा प्राप्त की थी। यह विश्वविद्यालय वेद, दर्शन, अर्थशास्त्र, नीति-शास्त्र और राजनीति शास्त्र के अध्ययन का केन्द्र था। उत्तर पश्चिमी भारत में यह

विश्वविद्यालय अत्यन्त प्रसिद्ध था।

२. नालन्दा विश्वविद्यालय—पूर्वी भारत में स्थित नालन्दा विश्वविद्यालय भी अत्यन्त प्रसिद्ध था। यहाँ हर्षवर्धन के शासनकाल में दस हजार विद्यार्थी एक साथ शिक्षा प्राप्त करते थे और १५०० प्राध्यापक शिक्षा प्रदान करते थे। धर्मपाल, शीलभद्र और शांतिरक्षित इसी विश्व-विद्यालय के प्रमुख आचार्य थे। चीनी यात्री भी इस विश्वविद्यालय के वातावरण से अधिक प्रभावित हुआ था। चीनी यात्री इत्सिग भी दस वर्ष तक इस विश्वविद्यालय में रहा था। इस विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने से पूर्व कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण होना पड़ता था।

इन विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश में काशी, सौराष्ट्र में वल्लभी, बंगाल में नवद्वीप, मगध में विक्रम शिला और मालवा में उज्जयिनी आदि विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में अत्यन्त प्रसिद्ध थे। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था।

प्रश्न ३—प्राचीन भारत की कला पर दो पृष्ठों का एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

उत्तर—प्राचीन भारत प्रत्येक दृष्टिकोण से उन्नति की चरम सीमा पर था। साहित्यिक विकास के साथ-साथ हमारे देश में कला का भी पूर्ण रूप से विकास हुआ। भारतीय कला पर धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। इसी कारण कला में भावना की प्रधानता हो गई। कला का क्षेत्र भी अत्यन्त व्यापक रहा है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में चौंसठ कलाएँ मानी गई हैं।

१. भारतीय वास्तु अथवा भवन निर्माण कला—किसी भी भवन का निर्माण कला उस देश के सामाजिक जीवन और संस्कृति की प्रतीक होती है। प्राचीन भारत की स्थापत्य कला अत्यन्त उन्नत अवस्था में थी। बौद्ध और जैन स्थापत्य कला के नमूने मन्दिरों में पाये जाते हैं। सम्राट् अशोक ने कलापूर्ण भवनों का निर्माण कराया। स्तूप, स्तम्भ, गुफाएँ और राजप्रासाद, अशोककालीन वास्तु कला के प्रधान अंग थे। साँची का स्तूप प्राचीन स्थापत्य कला का सर्वश्रेष्ठ नमूना है। शिला स्तम्भों में सरनाथ का स्तम्भ अत्यन्त प्रसिद्ध है। उसकी मृत्यु के पश्चात् वास्तु

कला का निरन्तर विकास होता गया। देश में अनेक सुन्दर मन्दिरों का निर्माण किया गया। ऐसे मन्दिरों में खजुराहों का शिव मन्दिर, आबू के जैन मन्दिर, उड़ीसा के भुवनेश्वर तथा कोणार्क मन्दिर और दक्षिण भारत के तंजोर रामेश्वर आदि प्रसिद्ध माने जाते हैं। ऐलोरा और अजन्ता की गुफाएं भी अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। भारतीय स्थापत्य कला दुर्ग निर्माण का भी विशेष महत्व रहा है। भारत के प्राचीन दुर्गों में चित्तौड़, ग्वालियर और रणथम्भौर के दुर्ग अत्यन्त प्रसिद्ध माने जाते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय स्थापत्य कला उन्नति को चरम सीमा पर था।

२. भारत की प्राचीन चित्रकला—प्राचीन भारत में चित्रकला का भी पूर्ण रूप से विकास हुआ। भारतीय चित्रकला का सर्वश्रेष्ठ नमूना अजन्ता की गुफाएं हैं। इसमें महात्मा बुद्ध के पवित्र जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत की गई हैं। इन चित्रों में लोकितेश्वर का चित्र तो इतना सुन्दर है कि उसके मुकाबले में दूसरा चित्र आसानी से नहीं मिल सकता है। मध्य-भारत में बाघ की गुफाएं भी चित्रकारी का सुन्दर नमूना है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत में कला का पूर्ण रूपेण विकास हुआ। भारत की प्राचीन स्थापत्य कला और चित्र कला को देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय हमारे देश में कितने कुशल कलाकार थे। हमें अपनी प्राचीन कला पर गर्व होना चाहिए और इसके साथ ही उन्हें सुरक्षित रखना चाहिए।

प्रश्न ४—संक्षेप में टिप्पणियाँ लिखिये—

(१) प्राचीन भारत में ज्ञान-विज्ञान की उन्नति।

(२) प्राचीन भारत की शिक्षा प्रणाली।

(६) भारतीय संस्कृति का विदेशों में प्रसार।

उत्तर—(१) प्राचीन भारत में ज्ञान-विज्ञान की उन्नति—प्राचीन भारत में ज्ञान और विज्ञान का भी पूर्ण रूप से विकास हुआ। भारत ने कई शताब्दी तक विदेशियों का मार्ग दर्शन किया हैं। आर्य ग्रहों और नक्षत्रों की उपासना करते थे, इसलिए उन्होंने इनके विषय में पर्याप्त जानकारी प्राप्त करली थी। वेदियों का निर्माण करने में भी वे रेखागणित के सिद्धान्तों को काम में लाते थे। अंकगणित के क्षेत्र में भी भारतवासियों

ने पूर्ण रूप से उन्नति की। शून्य और दहाई का प्रयोग भी सर्वप्रथम भारत में हुआ। बीजगणित का आविष्कार भी भारत में ही सर्वप्रथम हुआ। भारत की गणित विद्या को अरबवासियों ने सीखा और उन्होंने इस विद्या को यूरोप में पहुँचाया। भारत में कई प्रसिद्ध गणितज्ञ हुए, जिनमें आर्य भट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त आदि प्रमुख माने जाते हैं। ज्योतिष शास्त्र का भी पूर्ण रूप से विकास हुआ और कई प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य हुए, जिनमें गर्ग, पाराशर और कश्यप आदि प्रमुख माने जाते हैं। आर्य भट्ट ने सर्वप्रथम यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि पृथ्वी के अपनी धुरी पर भ्रमण करने के कारण दिन रात हुआ करते हैं। ब्रह्मगुप्त ने न्यूटन से पूर्व यह ज्ञात कर लिया था कि पृथ्वी सब वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है। वराहमिहिर भी अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति था। धन्वन्तरि तथा अश्विनीकुमार आयुर्वेद के जन्मदाता थे। नागार्जुन ने रसायन शास्त्र का उपयोग औषधि निर्माण में किया। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत में ज्ञान विज्ञान की भी पूर्ण रूप से उन्नति हुई।

(२) प्राचीन भारत की शिक्षा प्रणाली—प्राचीन भारत की शिक्षा प्रणाली अत्यन्त संगठित थी। शिक्षा शास्त्र में शिक्षा सम्बन्धी नियम और उपनियम बने हुये थे, जिनके अनुसार शिक्षा की व्यवस्था की जाती थी। प्राचीनकाल में शिक्षा का प्रबन्ध गुरुकुलों में किया जाता था। बारह वर्ष की आयु में उपनयन संस्कार होता था। इस संस्कार के पश्चात् ब्रह्मचर्य व्रत लेकर गुरुकुलों में प्रवेश होता था। हमारे देश में विद्यादान सर्वश्रेष्ठ दान माना जाता था। उस समय की शिक्षा खर्चीली नहीं थी और विद्यार्थियों को अनुशासन का पाठ पढ़ाया जाता था। हमारे देश में आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, विज्ञान, व्याकरण और युद्ध विद्या आदि की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा अधिकतर मौखिक दी जाती थी। गुरुओं के द्वारा ही परीक्षा ली जाती थी। स्त्रियों को भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। उनके द्वारा भी शास्त्रार्थ किया जाता था।

(३) भारतीय संस्कृति का विदेशों में प्रचार—प्राचीन भारत से भारतीय संस्कृति का भी विदेशों में प्रचार हुआ। अशोक जैसे

महान् सम्राट् ने बौद्ध-धर्म के माध्यम से विदेशों में भारतीय संस्कृति को फैलाने में सहयोग प्रदान किया। यूनान और चीन से भी भारत के अच्छे सम्बन्ध रहे। मलाया, कम्बोडिया, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो और बाली आदि देशों में साहसी भारतीय पहुँचे और वहाँ उन्होंने उपनिवेष स्थापित किये। इन प्रदेशों में बौद्ध और जैन धर्म का प्रचार हुआ लगभग एक हजार वर्ष तक भारतीयों का प्रभाव इन बस्तियों पर बना रहा। यहाँ पर भारतीय भाषा और प्रथाओं का प्रचार हुआ। कम्बोडिया के अंकोरवट और जावा में बोरोबुदुर भारतीयता के जीते जागते प्रमाण हैं। सम्राट् अशोक के पुत्र और पुत्री राजकुमार महेन्द्र और राजकुमारी संघमित्रा लंका गये। लंका और भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध इतने विकसित हुए कि सम्राट् समुद्रगुप्त के शासनकाल में लंका की राजकुमारी ने भारत में एक बौद्ध मठ का निर्माण कराया।

प्रश्न ५—भारतीय जीवन में सांस्कृतिक अवरोध के मुख्य कारण क्या थे? स्पष्ट कीजिये।

उत्तर—भारत की प्राचीन संस्कृति गुप्तकाल में उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई थी और हर्षवर्धन के शासनकाल में अन्तिम चमक दिखाकर लुप्त हो गई। भारत अपना सब कुछ दूसरों को देखकर भूल गया और धीरे-धीरे भारतीय संस्कृति अवनति की ओर अग्रसर होने लगी। हमारे देश में अंधविश्वास की प्रधानता हो गई, जिससे प्रगति के मार्ग में अनेक बाधाएँ उत्पन्न हो गई। उनकी व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती हैं:—

१. राजनैतिक दुर्बलता—प्राचीन भारत राजनीतिक दृष्टिकोण से अत्यन्त संगठित था। गुप्तकालीन शासकों और हर्षवर्धन के समय में भारत शक्तिशाली राष्ट्र था। हर्ष की मृत्यु के पश्चात् भारत की राजनैतिक एकता नष्ट हो गई और छोटे-छोटे राज्यों की स्थापना हो गई। विदेशी आक्रमणों के कारण देश की सुरक्षा भी एक समस्या बन गई। आपसी संघर्ष के कारण भारतीयों की शक्ति नष्ट हो गई।

२. समाज में विभाजन की प्रवृत्ति—आर्यों ने समाज का विभाजन मनोवैज्ञानिक आधार पर किया था। धीरे-धीरे वर्ण-व्यवस्था में कट्टरता की प्रधानता हो गई। सुरक्षा का भार केवल क्षत्रियों का

उत्तरदायित्व समझा जाने लगा। अन्य व्यक्ति अपने आपको मुक्त समझने लगे। जाति व्यवस्था के कारण ऊँच-नीच की भावना उत्पन्न हो गई, जो आज तक हमारे सामाजिक जीवन में विद्यमान है। समाज में निर्जीवता उत्पन्न हो गई और भारतीयों की कार्य कुशलता नष्ट होगई।

३. जीवन में असंतुलन—भारतवासी प्रारम्भ में भौतिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में उन्नति की चरम सीमा पर थे। प्राचीन भारत में जीवन चार प्रमुख आदर्श थे—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन प्राचीन आर्यों का प्रारम्भिक जीवन संतुलित था, परन्तु कालान्तर में उनका जीवन असंतुलित हो गया। ये इस लोक को माया और भ्रम मानने लगे तथा परलोक की चिन्ता में तल्लीन रहने लगे। भौतिक उन्नति और आत्म-चिन्तन का अभाव हो गया, जिससे हमारी संस्कृति का विकास नहीं हो सका।

४. संकुचित मनोवृत्ति—भारतवासी प्रारम्भ में उदार प्रवृति के थे। उन्होंने सदैव अपना ज्ञान दूसरों को सिखाया और स्वयं ने नवीन वस्तुओं को सीखा। इससे भारतीय संस्कृति का निरन्तर विकास होता गया। कालान्तर में भारतवासियों को मिथ्या अभिमान हो गया और स्वयं को सर्वश्रेष्ठ समझने लगे। इस प्रकार उनका दृष्टिकोण संकुचित हो गया। नवीनता के अभाव के कारण भारतीय संस्कृति का पतन प्रारम्भ हो गया।

५. निरन्तर युद्ध और आक्रमणकारियों की बर्बरता .....
एक ऐसा देश रहा है, जहां समय-समय पर विदेशियों के आक्रमण होते रहे हैं। भारत में कई विदेशी जातियों का आगमन हुआ, जिनमें हूण, शक, गुर्जर, पठान, मुगल आदि प्रमुख माने जाते हैं। भारतीयों ... अधिकतर समय इन जातियों से युद्ध करने में व्यतीत हुआ। उनके पास समय का अभाव हो गया, जिससे वे सांस्कृतिक विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दे सके।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपर्युक्त कारणों भारतीय संस्कृति का विकास नहीं हो सका। प्राचीन काल में हमा। संस्कृति गौरवपूर्ण थी। अंग्रेजों के शासन-काल में हमारा संस्कृति ~ कोई विकास नहीं हो सका। अब हमारा देश स्वतन्त्र है और हम सरकार सांस्कृतिक विकास के लिए प्रयत्नशील है।

अध्याय ४

हमारा सामाजिक जीवन

प्रश्न १—"मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है" इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—"मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है" इससे पूर्व कि इस वाक्य को स्पष्ट किया जाय यह समझ लेना आवश्यक है कि मनुष्य को ऐसे समूह की आवश्यकता रहती है जिसके अन्तर्गत वह शान्तिमय एवं मैत्रीपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके। समूह में रहना मनुष्य का स्वभाव है। वह समाज में ही जन्म लेता है, समाज में ही अपने जीवन का उपभोग करता है और अन्त में समाज में ही मर जाता है। मनुष्य दूसरों के साथ रहने-सहने, खेलने तथा सहयोग से ही आनन्द अनुभव करता है। यूनान के प्रसिद्ध विद्वान अरस्तू ने कहा था कि यदि कोई व्यक्ति समाज से बाहर रह सकता है तो वह या तो देवता है या पशु। मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास केवल समाज में ही हो सकता है। अतः मनुष्य के लिए समाज की नितान्त आवश्यकता है।

निम्न तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है:—

१. जन्मजात प्रवृत्तियों की संतुष्टि:—आधुनिक समाजशास्त्रियों व मनोवैज्ञानिकों का दावा है कि मनुष्य में कुछ स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ होती हैं जैसे समान प्राणियों में रहने की प्रवृति आदि जिनकी संतुष्टि केवल समाज ही में हो सकती है।

२. मनुष्य अपने समान प्राणियों की उपस्थिति में ही सन्तुष्ट एवं प्रसन्न रह सकता है—निर्जन एकांतवासी मनुष्य बहुत दुखी रहता है। ऐसी स्थिति में उसका जीवन निस्सार और भार स्वरूप हो जाता है। जिस प्रकार मछली बिना पानी के जीवित नहीं रह सकती ठीक उसी प्रकार मनुष्य को अपने साथियों से अलग हटने पर बेचैनी का अनुभव होता है। मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि मनुष्य के लिये सबसे कठोर दण्ड एकांत कारावास है।

३. आत्म-गौरव तथा आत्महीनता की संतुष्टि—मनुष्य अपनी

श्रेष्ठता तथा हीनता को प्रकट करने के लिए अन्य साथियों की उपस्थिति अनिवार्य समझता है। उसकी इस प्रवृत्ति की संतुष्टि भी समाज में ही सम्भव है।

४. जीवन की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति—मनुष्य अकेला अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता। बिना समाज के सहयोग के वह अपनी स्वाभाविक व अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता।

५. समाज मनुष्य के लिये स्वाभाविक है—मनुष्य के लिये समाज आवश्यक व स्वाभाविक है। मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास भी समाज में ही होता है। अपनी अनेक प्रवृत्तियों की संतुष्टि भी समाज में ही करता है। अपने जीवन की रक्षा भी समाज में ही कर सकता है। मनुष्य का उत्थान व पतन भी समाज में ही सम्भव है।

अतः प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू का यह कथन था कि "मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है" नितान्त सत्य है।

प्रश्न २—भारतीय समाज व्यवस्थाओं की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख दीजिए।

उत्तर—भारतीय समाज मानव-सभ्यता के सामाजिक जीवन के व्यवस्थित रूप में प्राचीनतम है। यह जीवन सदियों व्यतीत हो जाने के बावजूद भी समय की आवश्यकताओं के अनुसार केवल कुछ परिवर्तनों के साथ आज भी जीवित है। इसका कारण केवल मात्र इसका निरालापन व विशेषताएं हैं जो संसार के अन्य समाजों में नहीं हैं। भारतीय समाज-व्यवस्था की निम्न विशेषताएं हैं—

१. संयुक्त कुटुम्ब-प्रणाली—भारतीय समाज की प्रथम व सबसे बड़ी व्यवस्था संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली है। इस प्रणाली का ... आधार इसके सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि प्रत्येक पक्ष में है। इसकी एक प्रमुख विशेषता है कि इस परिवार ... दादा-दादी, माता-पिता, चाचा-चाची, भाई-बहिन, पुत्र-पुत्री आदि सभी सदस्य संगठित होकर रहते हैं। इस कारण भारतीयों के जीवन में सहयोग की भावना, निष्पक्षता, अनुशासन और कर्तव्य-पालन परिवार के सम्मान की रक्षा करना, चरित्र-नियंत्रण, सामाजिक सुरक्षा प्राप्त होना

आदि अनेकों गुणों का समावेश कट्टरता से हुआ। यही कारण है कि विदेशियों ने यद्यपि राजनीतिक दृष्टिकोण से हम पर अधिकार कर लिया था परन्तु सामाजिक आधार-शिला को संयुक्त-कुटुम्ब प्रणाली नहीं हिला सकी। यद्यपि समय व व्यक्तिवाद के प्रभाव के कारण यह प्रणाली आज शिथिल हो रही है परन्तु आज भी अपने गुणों के कारण अपनी आवश्यकता को प्रदर्शित कर रही है।

२. जाति प्रथा—यह भारतीय समाज की दूसरी विशेषता है। जाति-प्रथा वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप है। वर्ण व्यवस्था का आधार कर्म था। परन्तु कालान्तर में इसका रूप विकृत होगया। धार्मिक क्रिया कर्म करने वाले ब्राह्मण, सुरक्षा व शासन का कार्य करने वाले क्षत्रिय, व्यवसाय व व्यापार करने वाले वर्ग वैश्य एवं तीनों वर्गों की सेवा करने वाला शूद्र कहलाया। जाति प्रथा के कारण समाज एवं संस्कृति की रक्षा हुई। जाति प्रथा में श्रम विभाजन के कारण कार्य कुशलता की प्रगति हुई, रक्त की पवित्रता बनी रही, नागरिकता के अनेक गुणों का विकास हुआ। इस कारण जाति प्रथा अपने प्रारम्भिक रूप में भारतीय समाज के लिये वरदान थी। परन्तु कालान्तर में इसमें अनेक दोष आगये जिनके कारण यह एक अभिशाप बन गई। मनुष्य के स्वतन्त्र विकास में यह बाधक हुई, पारस्परिक संघर्ष व स्वार्थ भावना के कारण देशभक्ति व एकता को हानि पहुँची, मनुष्य मनुष्य से घृणा करने लगा आदि अनेकों दोष इस व्यवस्था में आगये।

३. आश्रम व्यवस्था—यह व्यवस्था भारतीय समाज की एक ऐसी व्यवस्था है जो संसार के किसी भी समाज में किसी भी रूप में नहीं है। भारतीय आर्य सौ वर्ष की आयु का उपभोग करना चाहते थे जिसके लिये उन्होंने अपने जीवन को व्यवस्थित व सन्तुलित करने के लिये आश्रम व्यवस्था की रूप-रेखा तैयार की। २५-२५ वर्ष के विभाजन पर जीवन को चार आश्रमों में बांटा गया—१. ब्रह्मचर्याश्रम—जिसमें विद्यार्थी जीवन में रहकर आर्य पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते थे। २. गृहस्थाश्रम—२५ वर्ष के बाद आर्य ग्रहस्थाश्रम में प्रवेश करते थे। इस आश्रम का उद्देश्य विवाह करके व सन्तान उत्पन्न करके धर्म पालन करते हुए अपने जीवन के २५ वर्ष व्यतीत करना था। ३. वानप्रस्थाश्रम—

आयु के बाद गृहस्थ जीवन का त्याग कर आर्य वन में आश्रम जीवन व्यतीत करते हुए लोक कल्याण करते थे। ४. संन्यासाश्रम—७५ वर्ष के पश्चात् के शेष जीवन को आर्य संसार की माया मोह का त्याग कर ईश्वर की आराधना में लिप्त हो जाता था।

इस प्रकार की आश्रम व्यवस्था से मनुष्य अपने व्यक्तित्व के गुणों का पूर्ण विकास करता हुआ सौ वर्ष की आयु का उपभोग करने की चेष्टा करता था।

इस विवरण से भारतीय समाज की प्रमुख व्यवस्थाएँ स्पष्ट हो जाती हैं। ये व्यवस्थाएँ संसार के किसी भी समाज में नहीं हैं।

प्रश्न ३—जाति प्रथा की उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? जाति प्रथा के दोषों की विवेचना कीजिए।

उत्तर—आर्य जाति ने भारतवर्ष में स्थाई रूप से बस जाने के पश्चात् वर्ण व्यवस्था को जन्म दिया, जिसका एक मात्र आधार कर्म था। यह स्थिति अधिक दिन तक नहीं रह सकी। कालान्तर में कर्म का स्थान जन्म ने ले लिया। गुणों का महत्व घट गया। विभिन्न व्यवसायों के आधार पर समाज का विभाजन आरम्भ हो गया। जाति व्यवस्था वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप है, जो आज तक हमारे सामाजिक जीवन में विद्यमान है। ऐसी स्थिति में जाति व्यवस्था के गुण व दोषों की व्याख्या करना आवश्यक हो जाता है।

१. जाति प्रथा के गुण—जाति प्रथा के निम्नलिखित गुण हैं—

(क) समाज एवं संस्कृति की रक्षा—जाति व्यवस्था के कारण हिन्दू संस्कृति की रक्षा सम्भव हो सकी। अनेक विदेशियों के आक्रमणों के पश्चात् भी प्रत्येक वर्ग ने अपने सांस्कृतिक तत्वों को सुरक्षित रखा। प्रत्येक वर्ग ने धर्म परिवर्तन का विरोध किया। इस प्रकार जाति व्यवस्था के कारण प्राचीन परम्पराएँ सुरक्षित रह सकीं।

(ख) कार्य-कुशलता और प्रगति का स्थायित्व—जाति व्यवस्था श्रम विभाजन सिद्धांत पर आधारित थी। इस विभाजन के कारण कार्य कुशलता की वृद्धि हुई। एक बढ़ई का पुत्र कुशल बढ़ई और एक जुलाहे का पुत्र कुशल जु[illegible] जाता था। इस प्रकार प्रगति को स्थायी रूप

देने का श्रेय जाति व्यवस्था को ही दिया जा सकता है।

(ग) रक्त की पवित्रता की सुरक्षा—वर्ग विभाजन के कारण प्रत्येक जाति में रक्त की शुद्धता बनी रही। जातिगत बन्धनों के कारण किसी भी व्यक्ति ने अपनी जाति से बाहर विवाह करने का साहस नहीं किया। इसके परिणामस्वरूप विशेषकर उच्च हिन्दू जाति में रक्त की पवित्रता बनी हुई है।

(घ) उच्चकोटि की नागरिकता का विकास—जाति व्यवस्था के कारण प्रेम सहयोग, सेवा, त्याग, सहनशीलता आदि गुणों का विकास हुआ, जिसने सामाजिक जीवन की एकता को बनाये रखा, जिससे हमारी संस्कृति का विकास होता गया।

(ङ) व्यक्ति के अनुशासन और सम्मान की रक्षा—प्रत्येक जाति के अपने निश्चित नियम थे, जिनका पालन प्रत्येक व्यक्ति के लिये अनिवार्य था। परिणाम यह हुआ कि अनुशासन का विकास हुआ। इसके अतिरिक्त अनुशासन रहित व्यक्ति को जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता था।

२. जाति प्रथा के दोष—जाति व्यवस्था जो प्रारम्भ में सामाजिक संगठन के लिये लाभप्रद सिद्ध हुई, कालान्तर में उसमें अनेक दोषों का समावेश हो गया, जिसमें निम्नलिखित प्रमुख हैं—

(क) व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में बाधक—जाति व्यवस्था व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में बाधक सिद्ध हुई। मनुष्य यदि समाज सुधार आदि की सोचता था तो वह जाति के भय से चुप हो जाता था। इस प्रकार उसे व्यक्तिगत इच्छाओं का दमन करना पड़ा।

(ख) देश भक्ति का अभाव—जाति व्यवस्था के कारण मनुष्य के हृदय में देश भक्ति के लिये स्थान नहीं रहा। आपसी संघर्ष में नित्य प्रति लगे रहने के कारण राष्ट्रीय हितों की अवहेलना की जाने लगी, जिससे राष्ट्रीय एकता को गहरा धक्का पहुँचा।

(ग) भेद-भाव और छूआछूत की प्रधानता—जाति व्यवस्था के सामाजिक जीवन मे छूआछूत और वर्ग की प्रधानता हो गई। आपसी भेद-भाव के कारण शूद्र स्वयं को हिन्दुओं से अलग मानने लगे [illegible] कारण

बहुत शुद्रों ने धर्म परिवर्तन कर लिया जिससे हिन्दू संगठन को गहरा धक्का पहुँचा।

(घ) उच्च शिक्षा में बाधक—जाति व्यवस्था उच्च शिक्षा के लिए भी बाधक सिद्ध हुई। निम्न वर्ग के व्यक्तियों को शिक्षा प्राप्त करने से वंचित कर दिया गया, परिणाम यह हुआ कि बहुत से व्यक्ति से अपनी प्रतिभा का परिचय देने से वंचित रह गये और उन्हें हीनता का जीवन व्यतीत करना पड़ा।

(ङ) विवाह में बाधक—जाति व्यवस्था के कारण इच्छानुसार विवाह करने का कोई महत्व नहीं रहा। विवाह एक थोपने का विषय रह गया जिसे प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य रूप से ग्रहण करना पड़ा। इस प्रकार विवाह सम्बन्धी अनेक बाधाएँ उत्पन्न हो गईं।

(च) आर्थिक भार की प्रधानता—जाति व्यवस्था के कारण साधारण व्यक्ति अर्थ भार से दब गया। उसको अपनी जाति वालों के सम्मान, खान-पान और प्राचीन प्रथाओं का पालन करने के लिए अधिक धन राशि खर्च करनी पड़ी। परिणाम यह हुआ कि साधारण श्रेणी के व्यक्ति का जीवन कठिन हो गया।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि जाति व्यवस्था प्रारम्भ में सामाजिक जीवन के लिये वरदान सिद्ध हुई, परन्तु कालान्तर में जाति व्यवस्था में इतने दोषों का सामावेश हो गया कि यह हमारे सामाजिक जीवन के लिए एक अभिशाप से अधिक कुछ नहीं रही। वर्तमान भारत सरकार के कानून के अन्तर्गत जाति व्यवस्था से उत्पन्न सामाजिक जीवन के दोषों को दूर करने के लिए भरसक प्रयत्न किया गया है। आशा की जाती है कि यह अभिशाप शीघ्रता से समाप्त हो जायेगा।

प्रश्न ४—संयुक्त परिवार प्रथा का हमारे सामाजिक जीवन में क्या स्थान रहा है? किन-किन कारणों से संयुक्त परिवार प्रथा आज शिथिल हो रही है?

उत्तर—प्राचीन भारत के सामाजिक जीवन में संयुक्त परिवार प्रथा एक प्रमुख विशेपता थी। परिवार के सभी व्यक्ति एक साथ रहते थे और संयक्त आमदनी [illegible] मुखिया के हाथ में रहती थी। इस प्रकार

संयुक्त परिवार के कारण सम्मान प्रभाव, और आर्थिक स्तर उत्तम बना रहा। परिवार के प्रत्येक सदस्य को बिना किसी भेद समान रूप से उन्नति करने का अवसर मिल सका। इसके अतिरिक्त सहयोग, त्याग, स्नेह और सहानुभूति आदि गुणों का विकास भी संयुक्त परिवार में हुआ जो आदर्श नागरिकता के लिए वरदान सिद्ध हुआ। श्रम के विभाजन के कारण योग्यता का विकास हुआ। कृषि कार्य को भी इस प्रणाली के द्वारा सफलतापूर्वक संचालित किया जा सका। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत में संयुक्त परिवार का सामाजिक जीवन में विशेष महत्व था।

संयुक्त परिवार की शिथिलता के कारण—वर्तमान आर्थिक व्यवस्था ने संयुक्त परिवार पर घातक प्रहार किया है, जिससे इस प्रणाली में निरन्तर शिथिलता आती गई। इसके निम्नलिखित कारण प्रमुख माने जाते हैं—

(क) शिक्षा के प्रसार के साथ नौकरी की प्रधानता हो गई जिससे संयुक्त परिवार का महत्व नित्य प्रति घटता गया। तबादले के कारण भी परिवार के सभी सदस्यों का एक साथ रहना असम्भव हो गया।

(ख) औद्योगिक क्रांति के कारण कल कारखानों की स्थापना हो जाने से आर्थिक स्थिति में अनेक परिवर्तन हो गये। अधिक व्यक्तियों की यह धारणा बन गई कि वे संयुक्त परिवार में रहकर पूर्ण रूप से मौज नहीं उड़ा सकते हैं।

(ग) आर्थिक कठिनाइयों के कारण भी एक ही स्थान पर और एक ही व्यवसाय पर आश्रित रहना नितान्त असम्भव हो गया।

(घ) प्राचीन काल में स्त्रियाँ अंकुश में रहती थीं, परन्तु आधुनिक शिक्षा प्रणाली के कारण उन्होंने यह अनुभव किया कि हम स्वतन्त्रतापूर्वक यहाँ नहीं रह सकती हैं। ऐसी स्थिति में अनबन रहने लगी और इस समस्या को हल करने के लिए व्यक्तिगत परिवारों की प्रधानता हो गई।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संयुक्त परिवार भारतीय सामाजिक जीवन की प्रमुख विशेषता रही है, परन्तु वर्तमान युग में इस प्रकार के परिवारों का अस्तित्व नहीं के बराबर रहा है। इतना होते हुए भी इस परिवार से सम्बन्धित [illegible] आवश्यकता हमें जीवन

भर रहेगी।

प्रश्न ५—हमारे समाज की वर्तमान प्रमुख समस्याओं का उल्लेख कीजिये और बताइये कि प्राचीन भारत की समाज व्यवस्था को देखकर हम वर्तमान समस्याओं के हल में खास मदद क्या ले सकते हैं ?

उत्तर—वर्तमान सामाजिक जीवन समस्या प्रधान है। आज के इस युग में अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं, जिसके कारण हमारा सामाजिक जीवन अस्त-व्यस्त सा हो गया। इस काल की निम्नलिखित समस्याएँ प्रमुख हैं—

१. भ्रष्टाचार और नैतिक पतन—वर्तमान सामाजिक जीवन में जनता का नैतिक पतन हो गया है। भारतीयों के जीवन में भ्रष्टाचार की प्रधानता हो गई। अधिकतर व्यक्ति कर्त्तव्य विमुख हो गये हैं। यही कारण है कि देश का विकास पूर्ण रूप से नहीं हो सका है। नैतिकता के विकास और कर्त्तव्य परायणता के लिए प्राचीन आश्रम व्यवस्था से विशेष रूप से सहायता ले सकते हैं।

२. बेकारी, अशिक्षा और निर्धनता की समस्या—हमारे देश में भ्रष्टाचार के अतिरिक्त बेकारी, अशिक्षा और निर्धनता की समस्या अत्यन्त प्रबल है। हमारे देश में शिक्षा की कोई प्रगति नहीं हो पाई है। जो व्यक्ति शिक्षित भी हैं वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ हैं। ऐसी स्थिति में देश की परिस्थितियों के अनुकूल शिक्षा की व्यवस्था करके ही बेकारी और निर्धनता का अन्त किया जा सकता है। प्राचीन गुरुकुल की शिक्षा प्रणाली और कुटीर उद्योगों का विकास इन समस्याओं का हल हो सकता है।

३. सामाजिक कुरीतियों का अन्त—जीवन में अनेक सामाजिक अवगुणों की प्रधानता हो गई है। अस्पृश्यता, वर्ग भेद, ऊँच-नीच, बाल-विवाह, भिक्षावृति, स्त्रियों को सामाजिक जीवन से अलग रखने की प्रवृति आदि कुछ ऐसे दोष हैं, जिन्हें दूर करना स्वास्थ्य सामाजिक परम्परा के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इन दोषों के प्राचीन साधनों को ग्रहण करके दूर किया जा सकता है।

दोषों की प्रधानता हो जाने के कारण हमें दासता का जीवन व्यतीत करना पड़ा। यदि आज ऋषि मुनि होते तो हमें समस्याओं का सामना नये ढंग से करते। उन्हें लकीर का फकीर मानना हमारी मूर्खता का प्रतीक है। अतः ऐसी स्थिति में हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि हमें वर्तमान समस्याओं को सरलतापूर्वक हल करना चाहिए।

प्रश्न ६—वर्तमान युग में जाति व्यवस्था एक सामाजिक दोष क्यों माना जाता है ?

उत्तर—भारतीय समाज-व्यवस्था की प्रमुख विशेपताओं में एक जाति-प्रथा है। अपने प्रारम्भिक रूप में यह भारतीय समाज का एक गुण थी परन्तु कालान्तर में इसका रूप इतना विकृत होता चला गया कि अब यह एक सामाजिक दोष माना जाता है। इसके अनेकों कारण हैं परन्तु उनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं—

१. समाज में भेद-भाव व अस्पृश्यता—जात-पात की विकृति का सबसे घृणित रूप यही है कि मनुष्य मनुष्य से घृणा करने लग गया है। हिन्दू धर्म की किसी भी प्रामाणिक पुस्तक में अस्पृश्यता को मान्यता नहीं दी गई है। यह तो केवल इसी विचार से कि शूद्र वर्ग जो काम करता आया है करता रहे, हम अपने स्वार्थ की पूर्ति करते आ रहे हैं। इस भावना को वर्तमान समाज में एक भयानक अपराध माना गया है। शनैः २ शूद्र वर्ग के उद्धार के लिये प्रयत्न किये जा रहे हैं। संविधान में भी उनके लिये विशेष स्थान सुरक्षित है।

२. वैवाहिक सम्बन्धों में बाधक—प्राचीन युग में अनेक प्रथायें ऐसी प्रचलित थीं जिनसे विवाह की स्वतन्त्रता प्रमाणित होती है। एक वर्ण से दूसरे वर्ण में विवाह होते थे। परन्तु वर्ण व्यवस्था ने जब विकृत रूप में पहुँच कर जात-पात का रूप धारण किया तो इच्छानुसार विवाह करने का महत्व समाप्त हो गया। वैवाहिक कर्म अब केवल अनिवार्य होकर रह गया। जात-पात का यह दोष बड़ा घृणित है। इस कारण से जात-पात वर्तमान युग में एक अभिशाप मानी गई है।

३. शिक्षण-प्रसार में बाधा—जात-पात के कारण बहुत से व्यक्ति शिक्षा से वंचित हो जाते थे जिसके [illegible] उनकी प्रतिभा विकसित नहीं

हैं। वर्तमान समाज में जात-पात के दोष को दूर करने के अनेक प्रयत्न किये गये हैं। कारण यह है कि केवल शिक्षा ही ऐसा साधन है जिसके द्वारा सदियों से जमी हुई हीनता शूद्र सम्प्रदाय में से दूर हो सकती है।

४. स्वतन्त्र व्यक्तित्व में बाधा—जात-पात ने कुछ ऐसे बन्धन उपस्थित किये जिनके कारण मनुष्य अपने व्यक्तित्व का स्वतन्त्रता से विकास नहीं कर पाता था। उसे अपनी इच्छाओं का दमन करना पड़ता था। इसी बन्धन के कारण समाज सुधार नहीं हो पाता था। परन्तु वर्तमान समाज में कुछ ऐसा वातावरण स्वतः पैदा हुआ कि व्यक्तित्व का विकास होने लगा।

५. पारिवारिक रहस्य के कारण कला-कौशल के स्तर में गिरावट—जात-पात के कारण भारतीय कला-कौशल काफी नष्ट हो गये। हुनर को जातीय और पारिवारिक रहस्य माना जाकर इस हुनर को परिवार ने बाहर किसी व्यक्ति को नहीं बताया। इस कारण भारतीय कला-कौशल का अन्त हो गया।

उक्त कारणों के कारण वर्तमान समाज में जात-पात की व्यवस्था को एक सामाजिक दोष माना गया है। इस दोष को दूर करने में समय और सरकार दोनों सहयोग दे रहे हैं। इसके बन्धन अब कुछ शिथिल पड़े हैं।

प्रश्न ७—आधुनिक परिस्थितियों में भारत की प्राचीन समाज व्यवस्था पर जो प्रभाव पड़ रहा है उसका वर्णन कीजिए। आज की स्थिति को देखते हुए उसमें आप किस प्रकार का परिवर्तन करना पसन्द करेंगे?

उत्तर—भारत की प्राचीन समाज-व्यवस्था—भारत की प्राचीन समाज-व्यवस्था का मूल आधार परिवार था। परिवार के कारण अनेकों व्यवस्थाओं का निर्माण किया गया। वर्ण-व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली, आदि कुछ व्यवस्थाएं ऐसी थीं जिन्होंने भारतीय समाज को एक अनोखा रूप दिया परन्तु काल प्रभाव से इनमें परिवर्तन होता रहा। अनेकों परिस्थितियों ने इन व्यवस्थाओं पर प्रभाव डाला।

१. पाश्चात्य सभ्यता—भारत पाश्चात्य सभ्यता के संपर्क में आया और उसमें रूढ़िवादी तत्वों के स्थान पर प्रगतिशील तत्वों का ध।

हुआ। इन तत्वों के कारण जात-पात के आधार पर हुए वर्गीकरण को अभिशाप माना जाता था। समाज में व्यक्तिवादी भावनाओं को भरकर संयुक्त-कुटुम्ब प्रणाली को शिथिल कर दिया, आचार-विचार, खान-पान, वेशभूषा आदि प्रत्येक पर इस सभ्यता का प्रभाव पड़ा।

२. शिक्षा का प्रसार—शिक्षा-प्रसार के कारण जो परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं उन्होंने भी भारत की समाज-व्यवस्थाओं पर काफी प्रभाव डाला। भारतीयों के विचारों में परिवर्तन हुआ। उन्होंने अपने रूढ़िवाद द्वारा हो रही हानियों को समझा और प्रेरित होकर युगान्तकारी परिवर्तन किये।

३. औद्योगिक क्रांति—१९ वीं सदी में विश्व में औद्योगिक क्रांति हुई, उसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा। नये २ उद्योगों की स्थापना ने भारत के समाज में आई बुरी प्रवृतियों को बदला। मनुष्य दूसरे मनुष्यों के सम्पर्क में आया और वह यह जान सका कि उसके समाज में क्या दोष हैं और उनमें समयानुकूल क्या परिवर्तन होने चाहिएँ?

भारतीय नारी में क्रांतिकारी परिवर्तन—भारत की समाज व्यवस्था में नारी को घर के कामों में व्यस्त रहना पड़ता है। उसे सामाजिक जीवन में भाग लेने का बहुत कम अवसर मिल पाता है परन्तु आज शिक्षा और पाश्चात्य जीवन के कारण ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हुई हैं जिनसे घर की चहार दीवार में बन्द नारी ने सामाजिक गतिविधियों में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया है।

इसके अतिरिक्त उक्त कारणों में पाश्चात्य प्रभाव के कारण जो परिस्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं वही इतनी प्रबल हैं कि अन्य सब नगण्य हैं। परन्तु प्रत्येक परिस्थितियाँ व समस्याओं में कुछ ऐसे परिवर्तन किये जा सकते हैं जिनसे ये उपयोग हो सकते हैं।

वर्तमान परिस्थितियों में परिवर्तन—वर्तमान भारत के समाज की जो व्यवस्था चल रही है उसमें परिवर्तन के लिए आन्दोलनों की एक बाढ़ सी आगई है। राजा राम मोहनराय, दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परम हंस, विवेकानन्द जैसे महान सुधारकों ने भारत की समाज व्यवस्था में आमूल परिवर्तन किये। इस रूढ़िवाद समाज को प्रगति के मार्ग की ओर मोड़ दिया। उनके प्रयासों के फलस्वरूप जो परिवर्तन हुए हैं, इनके अलावा

अब भी निम्न परिवर्तन करना चाहिये:—

१. धर्म के प्रति भारतीयों में सजगता उत्पन्न करना—भारत एक आध्यात्मिक देश रहा है। प्राचीन काल से ही यहां के चरित्र का स्तर नैतिकता के उच्चतम शिखर पर रहा है। परन्तु पाश्चात्य सामाजिक जीवन के प्रभाव के कारण भारत बड़ी तेजी से भौकितवाद की ओर अग्रसर होता हुआ पतन के गर्त की ओर जा रहा है। शिक्षा में ऐसा पाठ्यक्रम होना चाहिए कि छात्रों को चरित्र और नैतिकता का महत्व समझ में आ जाए। धर्म का अर्थ मूर्ति पूजा नहीं अपितु अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजगता है।

२. समाज व्यवस्था में आई बुराइयों को दूर करने का प्रयास—भारतीय समाज में अनेक कुरीतियां हैं। स्त्री-शिक्षा के प्रचार द्वारा अनेक बुराइयां स्वत: दूर हो जायेंगी जिनका सम्बन्ध नारी वर्ग से है। जात-पांत के बन्धन को भी शिक्षा के प्रसार, स्थान २ पर चलचित्र प्रदर्शन व नाटकों द्वारा समाज में आन्तरिक जागृति जगाकर दूर की जा सकती है। वर्णाश्रम व्यवस्था को बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन कर स्थापित करना चाहिए। समाज में हमें सहानुभूति और सहयोग की भावना जाग्रत करनी चाहिए।

३. नारी शिक्षा का प्रसार—भारतीय समाज में नारी की स्थिति काफी शोचनीय रही है। उन्हें पर्दा-प्रथा के कारण समाज में हो रही प्रगति से वंचित रखा। उन्हें शिक्षा से वंचित रखा जिस कारण उनकी स्थिति पशुतुल्य हो गई। अत: नारी-उत्थान का एक मात्र उपाय उनमें शिक्षा प्रसार है। उनमें शिक्षा द्वारा ऐसे संस्कारों को जगाना है जिनके प्रभाव से सामाजिक कुरीतियों की जड़ स्वत: कट जाय।

४. प्राचीन समाज व्यवस्थाओं को समयानुकूल परिवर्तित करना—संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली, आश्रम व्यवस्था व वर्ण-व्यवस्था कुछ ऐसी व्यवस्थाएं हैं जिनमें समय व पाश्चात्य जीवन के प्रभावों को ध्यान में रखकर कुछ परिवर्तन कर पुनर्स्थापित की जा सकती हैं। हम विदेशियों की नकल न कर अपनी ही संस्कृति को समझें और आत्मनिर्भर बने।

५. नैतिक भ्रष्टता को दूर करना—नैतिक पतन आज हमारे समाज में भीषणतम रूप में है। हमें न्याय नहीं मिल पाता। कर्मचारी व

नागरिक अपने कर्त्तव्यों का ईमानदारी से पालन नहीं करते। इसके लिए हमें चारित्रिक शिक्षा पर जोर देना चाहिए। भ्रष्टता धारण किए हुए कर्मचारियों व नागरिकों को कठोरतम दंड मिलना चाहिए।

उक्त कुछ ऐसे उपाय हैं जिनके द्वारा वर्तमान स्थिति में भारतीय समाज को बचाया जा सकता है।

अध्याय ५

मध्यकालीन समन्वय

प्रश्न १—तुर्क अफगान राज्य काल और मुगल राज्य काल में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों में किस प्रकार का अन्तर आ गया था? इस प्रकार का अन्तर आने का कारण आपकी राय में क्या था?

उत्तर—भारत एक ऐसा देश रहा है जहाँ पर समय-समय पर विदेशियों के आक्रमण होते रहे हैं। प्रारम्भ में तुर्क अफगान राज्यकाल और मुगल राज्यकाल क्रमश: स्थापित हुए। दोनों ही जातियों ने भारत पर अपना प्रभाव जमाने का प्रयास किया। इन जातियों में मुगल विदेशी रूप से सफल रहे क्योंकि वे जानते थे कि भारत के मूल निवासी अर्थात् हिन्दू जाति से अपना सम्पर्क स्थापित किये बिना सुदृढ़ शासन व्यवस्था को संचालित नहीं किया जा सकता है।

१. तुर्क अफगान राज्य और मुगल राज्य में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों में अन्तर—तुर्क अफगान और मुगल राज्यकाल में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों में अन्तर आने के निम्नलिखित कारण थे—

(१) तुर्क अफगानी राज्य में जितने भी शासक हुए, उनमें अधिकतर कट्टर और बर्बर थे, जिससे उन्होंने भारत के मूल निवासियों अर्थात् हिन्दू वर्ग के साथ कोई सम्बन्ध रखने का प्रयास नहीं किया। प्रारम्भ में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध कटुतापूर्ण बना रहा। हिन्दू जनता के प्रति शासकों की उदासीनता तुर्क अफगानी राज्य के पतन का कारण बनी।

(२) मुगल राज्य के प्रारम्भिक शासकों ने भी हिन्दू वर्ग को हीनता की दृष्टि से देखा परन्तु मुगलकालीन शासकों में अकबर महान् प्रथम शासक हुआ, जिसने हिन्दुओं के साथ उदारता की नीति को ग्रहणकर मुगल

साम्राज्य की स्थिति को सुदृढ़ बनाया।

(३) मुगलकाल के शासकों ने हिन्दुओं के साथ अच्छा व्यवहार किया और उन्हें ऊँचे-ऊँचे पद दिये और उनके प्रति धार्मिक सहिष्णुता की नीति को अपनाया और धीरे-धीरे हिन्दू मुस्लिम समन्वय हुआ।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मुगल शासन काल में प्रारम्भिक कटुता के सम्बन्ध मित्रता और सौहार्दपूर्ण वातावरण में परिवर्तित हो गये। हिन्दू-मुस्लिम मिलकर एक तो नहीं हो सके, परन्तु दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित हुए बिना नहीं रहे। शासकों की उदार नीति और मध्यकालीन सन्तों ने भी इस कार्य को पूर्ण करने में विशेष रूप से सहयोग प्रदान किया।

प्रश्न २—हिन्दू मुस्लिम समन्वय का भारत की कला और साहित्य पर क्या प्रभाव पड़ा ?

उत्तर—भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता समन्वय रही है समन्वय का अर्थ होता है कुछ झुकना और कुछ झुकाना अथवा दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अच्छाइयों को ग्रहण करने के लिए तत्पर रहना और अपनी विशेषताओं के प्रति दूसरों को आकर्षित करना भारत की संस्कृति और मुस्लिम संस्कृति एक दूसरे के भिन्न होने के कारण प्रारम्भिक दिनों में तो संघर्ष की स्थिति में रही। धीरे-धीरे भेद-भाव की समाप्ति हुई। दोनों विभिन्न संस्कृतियाँ मिलकर एक तो नहीं हो सकीं, परन्तु दोनों में समन्वय अवश्य हुआ। इस समन्वय का भारतीय कला और साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिसके द्वारा इनका निरन्तर विकास होता गया।

१. भारतीय कला पर प्रभाव—हिन्दू-मुस्लिम समन्वय का भारतीय कला पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। मूर्तिकला के क्षेत्र में कोई प्रगति नहीं हो सकी, क्योंकि इस्लाम धर्म में मूर्ति पूजा एक पाप समझा जाता था। प्रारम्भिक मुस्लिम शासकों ने स्थापत्य कला की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया। विशाल नगर, मस्जिद, महल और मकबरे आदि बनवाये। मुस्लिम युग की इमारतें विशालता और सरलता के लिए प्रसिद्ध हैं। इतना होते हुए भी इन इमारतों में भावना प्रधान और सजीव भारतीय कला का प्रभाव दिखाई नहीं देता है। इस काल की इमारतों

कुतुबमीनार, ढाई दिन का झोंपड़ा और फिरोजाबाद नगर भी प्रसिद्ध हैं। धीरे-धीरे इन मुस्लिम इमारतों पर भारतीय कला का प्रभाव पड़ा। इसके फलस्वरूप सादगी कम होती गई और उसमें सजावट की प्रधानता हो गई।

१. भारतीय साहित्य पर प्रभाव—मुस्लिम शासकों ने साहित्यिक क्षेत्र में विशेष रूप से रूचि प्रदर्शित की। उनके संरक्षण में उच्चकोटि के साहित्य का निर्माण हुआ। अमीर खुसरो, जायसी और रसखान इस युग के प्रसिद्ध कवि हुए। फिरोज तुगलक के समय में ज्योतिष और दर्शन ग्रन्थों का फारसी भाषा में अनुवाद हुआ। सिकन्दर लोदी के समय में आयुर्वेद के ग्रंथों का अनुवाद भी फारसी भाषा में हुआ। कबीर और रामानन्द ने जनसाधारण की भाषा में उपदेश दिये 'पृथ्वीराज रासो' का लेखक चन्दबरदाई भी इसी समय में हुआ था। मुस्लिम शासक वर्ग और जनता के मध्य सीधा सम्पर्क स्थापित होने के कारण 'उर्दू' भाषा का जन्म हुआ।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मध्य युग में हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों का समन्वय हो जाने के कारण भारतीय कला और साहित्य का पूर्ण रूप से विकास हुआ। समन्वय से भारतीय संस्कृति को किसी प्रकार की कोई हानि नहीं पहुँची।

प्रश्न ३—मुगल काल में स्थापत्य का बड़ा विकास हुआ। इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उत्तर—स्थापत्य कला के क्षेत्र में भारत एक पिछड़ा हुआ देश नहीं था। हिन्दू काल में भारतीय स्थापत्य कला उन्नति की चरम सीमा पर थी। मुसलमानों ने भारतीय स्थापत्य कला को हानि पहुँचाई परन्तु मुगल शासकों ने स्थापत्य कला के विकास पर पूर्ण रूप से ध्यान दिया। अकबर के शासन काल में स्थापत्य कला का विकास प्रारम्भ हुआ और शाहजहाँ के शासन काल में मुगल स्थापत्य कला उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई। शाहजहां के शासन काल में सुन्दर और भव्य इमारतों का निर्माण कराया गया।

१. मुगल स्थापत्य कला की विशेषताएँ—मुगल स्थापत्य कला की निम्न विशेषताएँ हैं—

(क) मुगल स्थापत्य कला पर पठान कला का प्रभाव है । इस शैली की इमारतें विशाल होती थीं, जिनमें मीनारें ऊंची और दीवारें सादा होती थीं।

(ख) राज-भवनों में गुम्बदों की प्रधानता थी । इमारतों के प्रवेश द्वार खुले और विशाल होते थे ।

(ग) मुगल स्थापत्य कला पर ईरानी शैली का विशेष प्रभाव पड़ा। इसके अतिरिक्त मुगल शासकों के समय में स्थापत्य कला का सुन्दर प्रदर्शन हुआ ।

१. मुगल स्थापत्य कला और हिन्दू स्थापत्य कला का समन्वय—मुगल सम्राटों के शासन काल में विशेषकर अकबर के शासन काल में मुगल कला पर ईरानी शैली का प्रभाव कम हो गया और उसका स्थान हिन्दू स्थापत्य कला ने ग्रहण कर लिया। आगरे के किले में जहाँगीर का महल और फतहपुर सीकरी का राजमहल हिन्दू कला के प्रतीक हैं । जहांगीर के शासन काल में भी मुगल स्थापत्य कला का पूर्ण रूप से विकास हुआ। अकबर का मकबरा और एत्माऊदौला का मकबरा उसके समय की महत्वपूर्ण इमारतें हैं। शाहजहाँ के शासन काल में भी स्थापत्य कला उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई थी । आगरे की मोती मस्जिद, ताजमहल और लाल किला मुगल स्थापत्य कला के जीते जागते प्रमाण हैं। औरङ्गजेब के शासन काल में मुगल स्थापत्य कला का पतन प्रारम्भ हो गया।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मुगल स्थापत्य कला उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई। मुगल शासकों के शासन काल में जितने भी भव्य भवनों का निर्माण किया गया उन सब पर हिन्दू स्थापत्य कला का स्पष्ट प्रभाव है। मुगल स्थापत्य कला देशी और विदेशी शैलियों का उत्तम समन्वय है।

प्रश्न ४—हिन्दू और मुसलमानों के बीच धार्मिक सहिष्णुता उत्पन्न करने में हमारे देश के सन्तों का क्या हाथ रहा ? सूफीमत क्या है ? हिन्दुओं के भक्ति-आन्दोलन की सूफीमत से तुलना कीजिये ।

उत्तर—हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों में विभिन्नता होने के कारण प्रारम्भ में कटुता का वातावरण बना रहा, परन्तु धीरे-धीरे यह धार्मिक जोश ठण्डा हुआ और दोनों ने समन्वित नीति से आगे बढ़ने का प्रयास किया। यद्यपि दोनों संस्कृतियाँ मिलकर पूर्णरूप से एक तो नहीं हो सकीं परन्तु दोनों एक दूसरे से प्रभावित हुए बिना नहीं रहीं। धार्मिक सहनशीलता के कारण निरन्तर आपसी सम्पर्क बढ़ता गया।

१. हिन्दू मुस्लिम एकता में सन्तों का सहयोग—हिन्दू मुस्लिम एकता और धार्मिक सहिष्णुता को जन्म देने में देश के महान् मध्यकालीन सन्तों ने विशेष सहयोग प्रदान किया। साधु सन्तों ने जाति भेद, छूआ-छूत और अन्धविश्वास को मिटाने का उपदेश दिया, जिसका तत्कालीन जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा। साधुओं ने सारे देश में एक ही ध्वनि गुंजादी। "जाति-पाँति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।" सन्तों की यह वाणी धार्मिक सहनशीलता के दृष्टिकोण से रामबाण सिद्ध हुई। सन्तों ने धार्मिक आडम्बरों को समाप्त कर आदर्श जीवन व्यतीत करने का आदेश दिया। ऐसे मध्यकालीन सन्तों में रामानन्द, रामदेव, कबीर, दादू, ज्ञानेश्वर, रैदास और नानक प्रसिद्ध माने जाते हैं। कबीरजी ने हिन्दुओं और मुसलमानों को अपने दोषों को दूर करने के लिए समान रूप से फटकारा। इस प्रकार भारत के महान् सन्तों के सहयोग से मस्जिद और मन्दिर के भेद समाप्त हुए। राम और रहीम के झगड़े समाप्त हुए और इस प्रकार भारत में धार्मिक सहिष्णुता का जन्म हुआ।

२. सूफीमत का जन्म—मध्यकालीन साधु सन्तों के प्रयत्नों के फलस्वरूप धार्मिक कट्टरता का अन्त हुआ और मुसलमानों में भी सूफी सम्प्रदाय का जन्म हुआ। सूफी सन्त भारत की आध्यात्मिकता और दर्शन ग्रन्थों से बहुत अधिक प्रभावित हुए। ऐसे सन्तों में निजामुद्दीन औलिया प्रसिद्ध माने जाते हैं। इस्लाम धर्म में भी सन्त पूजा प्रारम्भ हुई।

३. भक्ति आन्दोलन और सूफीमत की तुलना—मुगल काल में हिन्दू धर्म में भी नवीनता का संचार हुआ। उत्तरी भारत धर्म का केन्द्र

न गया। राम और कृष्ण की भक्ति सगुण रूप में की जाने लगी। सूरदास और तुलसीदासजी ने हिंदू जनता को भक्ति भाव से अवगत कराया। दक्षिणी भारत में रामदास और नामदेव ने भी भक्ति आन्दोलन को नवीन रूप प्रदान किया। जनता भक्ति भावना से झूम उठी। हिंदू धर्म के भक्ति आन्दोलन के प्रभाव के कारण मुसलमानों ने सूफी सम्प्रदाय को जन्म दिया। सूफी मत में ईश्वर को अपना प्रेम पात्र मानकर उसकी प्रीति में तल्लीन रहना जीवन का सार माना है। गुरु का महत्व भी सूफी सम्प्रदाय में है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भक्ति आन्दोलन और सूफीवाद के कारण धार्मिक कटुता का अंत हुआ और हिन्दू-मुस्लिम सहिष्णुता का जन्म हुआ। इस प्रकार सद्भावनापूर्ण वातावरण का जन्म हुआ।

प्रश्न ५—मुस्लिम सम्पर्क का प्रभाव हमारे गाँवों की अपेक्षा नगरों पर अधिक क्यों पड़ा ?

उत्तर—भारत में जितने भी विदेशी आक्रमणकारी आये, उनका कार्य क्षेत्र विशेषकर शहरों तक ही सीमित रहा और उनका प्रभाव भी केवल नगर जीवन पर ही अधिक पड़ा और ग्राम जीवन उससे कम प्रभावित हुआ। इसके निम्नलिखित कारण थे:—

(१) मुस्लिम विदेशी होने के कारण भारत की भौगोलिक स्थिति से पूर्णरूप से परिचित नहीं थे। इस कारण उन्होंने गाँवों तक पहुँचने का कोई प्रयास नहीं किया।

(२) प्राचीन भारत में यातायात के साधन बहुत कम होने के कारण नगरवासियों और ग्रामवासियों के जीवन में पृथकता बनी रही और उन्हें एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने का कोई अवसर प्राप्त नहीं हो सका।

(३) ग्रामवासियों का जीवन प्रारम्भ से आत्म-निर्भर रहा अर्थात् वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर लेते थे। ऐसी स्थिति में उन्हें नगर में होने वाली घटनाओं के प्रति कोई रुचि नहीं रही और वे अपनी परम्पराओं का पालन उसी रूप में करते रहे।

(४) शासकों ने ग्रामों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जिससे

ग्राम जीवन उनकी भाषा अथवा संस्कृति से कोई विशेष प्रभावित नहीं हुआ।

(५) नगरवासियों को अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये मुस्लिम व्यवहार के अनुकूल स्वयं को परिवर्तित करना पड़ा और ग्रामवासियों को परिवर्तन की कोई विशेष आवश्यकता अनुभव नहीं हुई।

उपर्युक्त कारणों को दृष्टिगत रखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि मुस्लिम सम्पर्क का ग्रामों पर नगरों की अपेक्षा कम प्रभाव पड़ा। मुस्लिम सम्पर्क द्वारा जितने भी परिवर्तन हुए, उनका प्रभाव नगरों तक ही सीमित रहा।

प्रश्न ६—हिन्दू मुस्लिम मेल-जोल में सम्राट् अकबर के कार्यों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—हिन्दू मुस्लिम सम्पर्क को बढ़ाने के लिए मुगल काल के सम्राटों में सम्राट् अकबर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना जाता है। उसके शासन काल में धार्मिक सहिष्णुता उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई थी। उसने हिन्दू मुस्लिम एकता के महत्व को समझा, क्योंकि वह इस बात से भली भाँति परिचित था कि हिन्दुओं के सहयोग के बिना किसी भी रूप में सुदृढ़ शासन स्थापित नहीं किया जा सकता है।

१. हिंदू-मुस्लिम सम्पर्क के लिए कार्य—अकबर ने हिन्दू-मुस्लिम सम्पर्क को बढ़ाने के लिए निम्नलिखित काम किये—

(क) अकबर ने हिन्दू-मुस्लिम सम्पर्क को बढ़ाने के लिए दोनों को समान मानकर अपने में योग्यतानुसार प्रत्येक व्यक्ति को उच्च पद प्रदान किये।

(ख) प्रत्येक वर्ग को समान धार्मिक सुविधाएं प्रदान कीं। उसने धार्मिक जीवन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया। उसने हिन्दुओं को जजिया कर से मुक्त किया।

(ग) उसने धार्मिक उदारता की नीति को ग्रहण किया। उसने 'सुलह कुल' (विश्व शान्ति) की नीति को अपनाया।

(घ) उसने धर्म को राजनीति से बिल्कुल ~

श्रौर धर्म-भेद को समाप्त करने के लिए दीन-ए-इलाई धर्म को जन्म दिया।

(उ) उसने 'धर्म निरपेक्ष' राज्य की स्थापना की और अपने सद् प्रयत्नों के द्वारा हिन्दू-मुस्लिम कटुता को कुछ समय के लिए बिल्कुल समाप्त कर दिया।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि अकबर ने अपने शासनकाल में उदारता की नीति को अपनाकर हिन्दू मुस्लिक सम्पर्क को प्रोत्साहित किया। मुस्लिम काल में अकबर के अतिरिक्त कोई भी ऐसा सम्राट् नहीं हुआ जिससे हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए उससे अधिक कार्य किए हों। उसने दोनों संस्कृतियों को एक करने का भरसक प्रयत्न किया।

अध्याय ६

पश्चिम से संपर्क तथा उसका प्रभाव

प्रश्न १—पाश्चात्य शिक्षा का हमारे जीवन में क्या प्रभाव पड़ा?

उत्तर—अंग्रेजों ने भारत पर अपना प्रभाव अवश्य जमा लिया था. परन्तु उन्होंने इस आवश्यकता को महसूस किया कि भारत में एक शिक्षित वर्ग होना चाहिए, जो जन्म से भारतीय हो, परन्तु खान-पान, रहन-सहन और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से अंग्रेज हो। यह प्रस्ताव सर्वप्रथम लार्ड मेकाले ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार के लिए रखा और हमारे देश में पाश्चात्य शिक्षा का जन्म हुआ जिसने हमारे जीवन को पूर्ण रूप से परिवर्तित कर दिया।

१. सामाजिक जीवन पर प्रभाव—अंग्रेजों के आगमन के कारण सहशिक्षा का प्रचार हुआ, जिससे भारतीयों ने रुढ़िवादिता की नीति का परित्याग कर नवीन दृष्टिकोण को अपनाया। हमारे समाज में जाति-भेद और सम्प्रदायवाद की प्रधानता थी, परन्तु अंग्रेजी शिक्षा के कारण भारत में जाति-भेद समाप्त तो नहीं हुआ, परन्तु जातीय बन्धन ढीले अवश्य हो गये। सरकारी नौकरी प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति को समान रूप से दी जाने

लगी। पाश्चात्य शिक्षा के कारण भारतीय स्त्रियों की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। मध्यकाल में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित कर दिया था। पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह और सती प्रथा जैसे दोषों का समावेश हमारे सामाजिक जीवन में हो गया था। उन्हें राजनैतिक गति-विधियों में भी किसी प्रकार का भाग लेने का अधिकार नहीं था। ऐसी शोचनीय स्थिति को पाश्चात्य शिक्षा ने पूर्ण रूप से परिवर्तित कर दिया। प्राचीन भारत में संयुक्त परिवार की प्रधानता थी, परन्तु पश्चिमी देशों में व्यक्तिवादी परिवारों की प्रधानता है। इस कारण भारत के नवयुवकों ने भी व्यक्तिवादी परिवारों का समर्थन किया। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नवयुवकों के हृदय में अपने माता-पिता के रूढ़िवादी नियन्त्रण के प्रति विरोध पैदा होने लगा। खाने-पान और रहन-सहन में भी आमूल परिवर्तन हो गये। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नवयुवकों ने कोट, पैंट, टाई और हैट आदि का प्रयोग प्रारम्भ कर दिया। भोजन में चाय, विस्कुट, केक आदि का प्रयोग सर्वव्यापी हो गया। भवन-निर्माण और उनकी सजावट भी पश्चिमी ढंग से की जाने लगी। मनोरंजन के क्षेत्र में भी आमूल परिवर्तन हो गये। भारतवासियों ने चित्रपट, रेडियो, फुटवाल, टेनिस, वासकेट वाल आदि के द्वारा मनोरंजन करना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार अंग्रेजी शिक्षा ने हमारे सामाजिक जीवन में परिवर्तन अवश्य किए, परन्तु भौतिकवादी दृष्टिकोण के कारण भारतीयों का नैतिक पतन प्रारम्भ होगया। इस शिक्षा-प्रणाली के कारण व्यभिचार, निर्लज्जता और काम वासना को प्रोत्साहन मिला।

२. धार्मिक जीवन पर प्रभाव—पश्चिमी शिक्षा का हमारे धार्मिक जीवन पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। स्वतन्त्रता एवं वैज्ञानिक शिक्षा और स्वतन्त्र विचारधारा के कारण धार्मिक अन्धविश्वासों का अन्त हुआ। जादू-टोने और अन्धविश्वास का स्थान तर्क और जिज्ञासा ने ग्रहण कर लिया। प्रत्येक वस्तु की सत्यता का आधार ढूंढा जाने लगा। हिन्दू धर्म में दोषों का समावेश हो जाने के कारण निम्न वर्ग के व्यक्तियों ने ईसाई धर्म को स्वीकार करना प्रारम्भ कर दिया। इस बात ने हिन्दू आन्दोलनों को जन्म दिया। वर्ण व्यवस्था और मूर्ति पूजा का विरोध किया जाने लगा।

३. आर्थिक जीवन पर प्रभाव—पश्चिमी शिक्षा का भारत के आर्थिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। हमारे गृह-उद्योगों को बहुत हानि पहुँची और उनका स्थान यन्त्रों ने ग्रहण कर लिया। प्रारम्भ में भारतीयों का आर्थिक जीवन आत्मनिर्भर था, परन्तु वह परस्पर निर्भरता में रूप में परिवर्तित हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का जन्म भी इसी कारण हुआ। पूँजीवादी व्यवस्था का जन्म हुआ, जिसने आर्थिक विषमता को जन्म दिया। साधारण भारतीय का आर्थिक स्तर इतना निम्न हो गया कि उन्हें अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

४. राजनैतिक जीवन प्रभाव—पश्चिमी शिक्षा ने हमारे राजनैतिक जीवन में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये। नई शिक्षा के कारण भारतीयों के हृदय में भी देश-भक्ति और स्वतन्त्रता की भावना का जन्म हुआ। इस भावना के कारण राजनैतिक चेतना का जन्म हुआ और इसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय आन्दोलन संचालित किया गया। अन्त में भारतवासियों को अंग्रेजों की दासता से मुक्ति प्राप्त हुई और उन्हें अपना भाग्य निर्माण करने का अवसर प्राप्त हुआ।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि पाश्चात्य शिक्षा ने हमारे जीवन में परिवर्तन अवश्य किये परन्तु इसके साथ हमारे सांस्कृतिक विकास के मार्ग में अनेक बाधायें उत्पन्न हो गईं। उदार पाश्चात्य लेखकों ने जब भारतीय संस्कृति की महानता के गीत गाये, तो भारतीयों में जो अपनी संस्कृति के प्रति श्रद्धा के भाव उत्पन्न हुये और उन्होंने विकास कार्य प्रारम्भ कर दिये। पश्चिमी शिक्षा के कारण आधुनिक भारत का निर्माण हुआ।

प्रश्न २—पश्चिम के संपर्क से भारत में जिस नयी चेतना का उदय हुआ उसने किन क्षेत्रों को प्रभावित किया ?

उत्तर—पश्चिमी सम्पर्क के कारण भारत में नवीन शिक्षा-प्रणाली का जन्म हुआ। भारतीयों को पश्चिमी देशों से अपना सम्बन्ध स्थापित करने का अवसर प्राप्त हुआ। शिक्षित वर्ग में नवीन चेतना आई और नव जागरण के कारण नई और पुरानी प्रवृत्तियों का समन्वय हुआ।

१. साहित्य पर प्रभ—पश्चिमी अंग का भारत के साहित्य पर

गहरा प्रभाव पड़ा। भारत का साहित्य जिसका विकास कुछ समय के लिए रुक गया था उसे तीव्र गति से आगे बढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। मैकोले ने यद्यपि भारतीय साहित्य को निम्न कोटि का माना, परन्तु कुछ समय पश्चात् अंग्रेजों को भारत का वास्तविक ज्ञान इस देश के प्राचीन साहित्य के द्वारा हुआ। गीता और अन्य धर्म-शास्त्रों का यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद किया। भारत में प्राचीन संस्कृति और साहित्य का पुनः विकास हुआ। भारतीय भाषा में भी आधुनिकता का समावेश हुआ। हिंदी साहित्य में गद्य-शैली का विकास हुआ। उपन्यास, नाटक, निबन्ध आदि की रचना उग्रता से की जाने लगी। बंगला-साहित्य का भी विकास हुआ। स्वदेश प्रेम को भी साहित्य के विकास ने जन्म दिया। छापाखाने के आविष्कार ने पत्रकारिता को जन्म दिया। केसरी, मराठा, हिन्दू आदि पत्रों ने नवजागरण के कार्यों को आगे बढ़ने में सहयोग प्रदान किया।

२. **कला पर प्रभाव**—मुगल काल मे भारतीय कला की उन्नति भी चरम सीमा पर पहुँच गई थी, परन्तु उनके पतन के पश्चात् अंग्रेजों ने भारतीय कला को उपेक्षा की दृष्टि से देखा। दक्षिणी भारत में प्राचीन कला कुछ जीवित रह सकी, परन्तु अधिकतर भारतीयों का ध्यान पश्चिमी कला की ओर केन्द्रित होने लगा। नवजागरण के पूर्व भारतीय कला पर किसी विदेशी का कोई ध्यान नहीं रहा, परन्तु नवजागरण के पश्चात् फर्ग्युसन और हैवेल ने भारतीय कला को परखा। इसके अतिरिक्त डा० अनन्दकुमार स्वामी ने विदेशियों का ध्यान भारतीय कला की ओर आकर्षित किया। संगीत के विकास में रवीन्द्र साहित्य, विष्णु दिगम्बर तथा भातखण्डे ने विशेष रूप से सहयोग प्रदान किया। भारतीय संगीत कला अकादमी की स्थापना की गई। पश्चिमी वाद्य-यन्त्र 'आर्गन' का परिवर्तित रूप हारमोनियम का प्रयोग भारत में अधिकता से किया जाने लगा। भारत की चित्रकला को जीवित रखने में अवनीन्द्रनाथ उनके शिष्य नंदलाल बोस ने विशेष सहयोग दिया। पश्चिमी प्रभाव के कारण 'स्वाभाविक-शैली' का जन्म हुआ। बम्बई का जे० जे० स्कूल आफ आर्ट्स अत्यन्त प्रसिद्ध है।

३. **वैज्ञानिक और भौतकि उन्नति**—पश्चिमी सम्पर्क के कारण जिस नवीन चेतना का जन्म भारत में हुआ, उसने वैज्ञानिक और भौतिक

प्रगति में विशेप योगदान दिया। प्रारम्भिक दिनों में अंग्रेजों ने भारतीयों को अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा दिखाने का अवसर नहीं दिया। परन्तु कुछ समय पश्चात् इसका महत्व समझा गया। जगदीशचन्द्र बोस और प्रफुल्ल-चन्द्रराय ने अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा का परिचय दिया। रामानुजम् ने अपने गणित की अभूतपूर्व प्रतिभा के द्वारा सम्पूर्ण विश्व को चकित कर दिया। वैज्ञानिक कार्यों से विकास के लिए 'इण्डियन इन्स्टीट्यूट आफ साइन्स' की स्थापना की गई। ब्रिटिश सरकार को महायुद्धों के कारण भारत में औद्योगिक विकास की ओर विशेप रूप से ध्यान देना पड़ा। सड़कों का निर्माण किया गया और रेल, डाक तथा तार आदि की भी व्यवस्था की गई। इस प्रकार नवीन चेतना के कारण भारतीयों की स्थिति में परिवर्तन हुए।

३. राजनैतिक विचारधारा पर प्रभाव—पश्चिमी संसार की राजनैतिक क्रांतिकारियों ने हमारे राष्ट्रीय जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया। पाश्चात्य और आधुनिक समाज व्यवस्था ने स्वतंत्रता की भावना को जागृत किया। भारतीय विदेशों की यात्रा करने लगे। वर्तमान भारत में जो प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था आज हमें दिखाई पड़ रही है, वह नव जागृति का परिणाम है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पश्चिमी सम्पर्क के कारण भारत में नवीन चेतना का जन्म हुआ, जिसने भारतीयों के जीवन को प्रत्येक दृष्टिकोण से प्रभावित किया। वर्तमान सभ्यता और पश्चिमी सभ्यता की देन है।

प्रश्न ३—पाश्चात्य सामाजिक जीवन और भारतीय सामाजिक जीवन में क्या अन्तर है?

उत्तर—भारतीय सामाजिक जीवन और पाश्चात्य सामाजिक जीवन का यदि हम सूक्ष्मता से अध्ययन करें तो यह स्पष्टतया विदित हो जायेगा कि दोनों सामाजिक जीवन में बहुत अधिक भिन्नता है। इस के अतिरिक्त भारतीय सामाजिक जीवन पर पश्चिमी सामाजिक जीवन के जो भी प्रभाव पड़े वे केवल नगरों तक ही सीमित रहे। नगरवासियों का बाहरी परिवर्तन अवश्य हो गया, परन्तु उनकी आत्मा में कोई अन्तर नहीं आ सका।

भारतीय सामाजिक जीवन	पाश्चात्य सामाजिक जीवन
१. भारतीय का सामाजिक जीवन आध्यात्मिक दृष्टिकोण पर आधारित है।	१. पाश्चात्य निवासियों का सामाजिक जीवन भौतिक दृष्टिकोण पर आधारित है।
२. भारत के सामाजिक जीवन में संयुक्त कुटुम्ब-प्रणाली का विशेष महत्व है जहाँ एक ही रक्त से संबन्धित व्यक्ति एक साथ मिल कर रहते हैं।	२. पाश्चात्य सामाजिक जीवन में संयुक्त कुटुम्ब-प्रणाली जैसी कोई वस्तु नहीं है। वहाँ तो व्यक्तिवादी परिवारों की प्रधानता है। प्रत्येक लड़का विवाह के पश्चात् नया घर बसाता है।
३. एक भारतीय गृहणी को दिनभर घर के काम काज में लगा रहना पड़ता है। उन्हें सामाजिक जीवन में भाग लेने का बहुत कम अवसर मिलता है। यद्यपि आज कुछ स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्त कर सामाजिक गतिविधियों में भाग लेने लगी हैं।	३. पश्चिमी नारी को घर के काम-काज में बहुत कम भाग लेना पड़ता है। यन्त्रों के कारण उनका जीवन भौतिकवादी हो गया है। उसका अधिकतर समय सामाजिक व राजनैतिक गतिविधियों में व्यतीत होता है।
४. जातिवादी सती-प्रथा और बाल विवाह, अनमेल विवाह हमारे सामाजिक जीवन की कुरीतियाँ हैं।	४. पश्चिमी सामाजिक जीवन में ऐसे कोई दोष नहीं हैं। वहाँ प्रत्येक व्यक्ति को समानता का अधिकार है।
५. भारत में लड़के व लड़कियों का विवाह अधिकतर माता-पिता की इच्छानुसार किया जाता है। यद्यपि कुछ पढ़े लिखे व्यक्ति 'प्रेम विवाह' करने लगे हैं। हमारे देश में तलाक-प्रथा नहीं के बरा-	५ पश्चिमी देशों में लड़के लड़कियाँ अपना विवाह स्वयं की इच्छानुसार करते हैं। उनके माता-पिता को कोई आपत्ति नहीं होती है। तलाक प्रथा भी वहाँ प्रचलित है।

वर है।

५. मदिरापान और स्त्रियों का पर पुरुषों के साथ फिरना अपमान जनक और असभ्यता का प्रतीक माना जाता है।

६. पश्चिमी सामाजिक जीवन में मदिरापान और स्त्रियों का पर-पुरुषों के साथ घूमना और नृत्य करना सभ्यता का अंग माना जाता है।

७. भारतीयों का दाम्पत्य जीवन अत्यन्त सुखी है, क्योंकि विवाह हमारे सामाजिक जीवन का नैतिक कर्त्तव्य है।

७. पश्चिमी दाम्पत्य जीवन में विलासिता की प्रधानता है वहाँ तो विवाह का दृष्टिकोण मनो-रंजन मात्र है।

८. भारतीय स्त्री माता बनना गौरव का विषय समझती है और अपने उत्तरदायित्व का पालन करती है।

८. पाश्चात्य स्त्री माता बनने से दूर रहने का प्रयास करती हैं। अपने पारिवारिक उत्तर-दायित्व को नहीं समझती है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत का सामाजिक जीवन आदंश और कर्त्तव्य-पालन का प्रतीक है जब कि पश्चिमी सामाजिक जीवन में इन वस्तुओं का कोई मूल्य नहीं है। अपनी विशेषताओं के कारण भारत का सामाजिक जीवन स्थायी है और कोई भी विदेशी परिवर्तन करने में सफलता प्राप्त नहीं कर सका। भारतीय संस्कृति के अमर रहने का कारण भी यही है।

प्रश्न ४—पश्चिमी सम्पर्क से भारतीय जीवन में क्या परि-वर्तन हो रहे हैं ?

उत्तर—इसके उत्तर का प्रारम्भ प्रश्न नं० १ के सामाजिक जीवन के प्रभाव से शुरू करिये और अन्त निम्न प्रकार से होगा।

पाश्चात्य सम्पर्क का प्रभाव केवल नगरों के जीवन तकसीमित रहा और ग्रामीण भारत इससे वंचित रह गया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि पश्चिमी प्रभाव को ग्रामों तक पहुँचने में काफी समय लगेगा। शिक्षा का व्यापक प्रचार ग्रामीण और नागरिक जीवन के भेद-भाव को समाप्त कर सकेगा। इस नवीन परिवर्तन को भारत के पांच लाख से अधिक गांवों तक पहुँचने के लिए [illegible] प्रयत्न करने पड़ेंगे।

प्रश्न ५—निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

उत्तर—रिक्त स्थानों की पूर्ति नीचे की जाती है—

(क) पुर्तगाली नाविक वास्कोडिगामा भारत के समुद्र तट पर उतरा।

(ख) अंग्रेज कप्तान हाकिन्स ने मुगल सम्राट जहांगीर से भेंट की।

(ग) मैकाले अंग्रेजी भाषा का समर्थक था।

(घ) प्रेमचन्द के गोदान, गबन आदि हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

(ङ) रामानुज ने अपनी गणित की विलक्षण प्रतिभा से सबको चकित कर दिया।

अध्याय ७

भारत में धार्मिक तथा सामाजिक जागृति

प्रश्न १—अठारहवीं शताब्दी में भारत में धार्मिक तथा सामाजिक स्थिति की विवेचना कीजिए।

उत्तर—भारत में प्रारम्भ में वैदिक धर्म की प्रधानता थी, परन्तु कालान्तर में इसमें दोनों दोषों का समावेश होगया, जिससे भारतीयों की सामाजिक और धार्मिक स्थिति नित्यप्रति बिगड़ती गई। प्रारम्भ में जितनी संस्थाएं स्थापित की जाती हैं, उस समय उनके सिद्धांत उच्च और पवित्र होते हैं। परन्तु कालान्तर में आडम्बरों का समावेश होता जाता है, जिससे जन साधारण का जीवन वास्तविकता से परे हो जाता है। १८ वीं शताब्दी में हिन्दु धर्म विनाश की ओर अग्रसर हो गया था।

१. तत्कालीन भारत की धार्मिक और सामाजिक स्थिति—

(क) धार्मिक जीवन में कुप्रथाओं, भ्रष्टाचार, अन्धविश्वास और रूढ़िवाद की प्रधानता हो ग

(ग) अंग्रेजों के शासनकाल में भी सांस्कृतिक जीवन को गहरा आघात पहुँचाया गया था।

(घ) धार्मिक और सामाजिक कुरीतियों के कारण निम्न वर्ग के व्यक्तियों ने हिन्दू धर्म को छोड़कर ईसाई धर्म को ग्रहण करना प्रारम्भ कर दिया।

(ङ) देश की एकता समाप्त हो गई थी और समाजिक विकास के मार्ग में अनेक बाधाएं उत्पन्न हो गई थी।

तत्कालीन भारत की परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए देश के सामाजिक जीवन में परिवर्तन की आवश्यकता थी। ऐसी स्थिति में हमारे देश में कई महान् सुधारक उत्पन्न हुए, जिनमें राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द आदि प्रमुख माने जाते थे। उन्होंने अपने सद्प्रयत्नों द्वारा धार्मिक दोषों को दूर किया तथा समाज को नवीन स्फूर्ति प्रदान की। इसलिए यह माना जाता है कि भारत के धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों ने राष्ट्रीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि तैयार की।

प्रश्न २—आर्य समाज तथा ब्रह्म समाज का भारत के धार्मिक और सामाजिक जागरण में क्या स्थान है? समझाकर लिखिये।

उत्तर—किसी भी देश के सामाजिक और धार्मिक जीवन में, जब भी दोषों का समावेश हो जाता है तो जनता का मार्ग प्रदर्शन करने के लिए महान् सुधारकों का जन्म होता है, जो धर्म को सच्चे रूप में जनता के सामने प्रस्तुत करते हैं। भारत की धार्मिक और सामाजिक स्थिति १८ वीं शताब्दी में अत्यन्त शोचनीय थी। ऐसी विषम परिस्थितियों में भारत में भी कई महान् धर्म और समाज-सुधारक उत्पन्न हुए, जिनमें स्वामी दयानन्द सरस्वती और राजा राममोहन राय प्रमुख माने जाते हैं। उन्होंने समाज कल्याण के निम्नलिखित कार्य किये:—

आर्यसमाज—ब्रह्म समाज ने पूर्वी भारत में समाज का पुनर्संगठन किया। अभी तक कोई संस्था न थी जिसने समाज का स्तर ऊँचा किया हो। ऐसे समय में आर्यसमाज का जन्म हुआ तथा इसने समाज के स्तर को ऊँ[illegible] का भरसक प्रयत्न किया। आर्य समाज एक

धार्मिक संस्था ही नहीं वरन् भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन की शक्ति थी। इस संस्था के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुये, वेदों का अध्ययन किया। इनका कहना था कि वेद ही सम्पूर्ण ज्ञान के स्रोत हैं। भारतीय शिक्षा के सम्बन्ध में उनकी राय अच्छी थी। उनका विचार था कि भारत का उद्धार केवल मात्र वेद ही कर सकते हैं। हिन्दू समाज की प्रचलित कुप्रथाओं जैसे--मूर्ति पूजा, श्राद्ध, बाल-विवाह, अस्पृश्यता आदि से स्वामी जी को घृणा थी। इन कुप्रथाओं को दूर करने के लिए स्वामीजी ने काफी परिश्रम किया। स्वामीजी विधवा-विवाह के समर्थक थे। जो हिन्दू-मुसलमान अथवा ईसाई बन गये थे उनको हिन्दू बनाया। स्वामी दयानन्दजी एकेश्वरवादी थे। वे ईश्वर को शक्तिमान, सर्वव्यापक व सम्पूर्ण जगत का नियंत्रक मानते थे। वे आत्मा के अमरत्व, पुनर्जन्म तथा कर्म के सिद्धांतों में विश्वास करते थे। ज्ञान व भक्ति पर इन्होंने अधिक ध्यान दिया। दयानंदजी वर्णव्यवस्था में विश्वास करते थे तथा उसे आदर्श समाज-व्यवस्था मानते थे। वे कर्म को वर्ण-व्यवस्था का आधार मानते थे न कि जन्म को। दयानंदजी ने हिन्दू समाज में क्रांतिकारी आन्दोलन किया। इसका नाम था शुद्ध आन्दोलन। शिक्षा के क्षेत्र में भी स्वामीजी ने अत्यन्त परिश्रम किया। वे आधुनिक शिक्षा के विरोधी थे। उनका विश्वास था कि आधुनिक शिक्षा-प्रणाली भारतीय आत्मा के प्रतिकूल है। हमारी शिक्षा का आधार हमारी सभ्यता व संस्कृति होनी चाहिये। उन्होंने संस्कृत के पठन-पाठन पर विशेष जोर दिया। स्वामीजी को गुजराती व संस्कृत भाषा का भी अच्छा ज्ञान था। वे हिन्दी को राष्ट्र-भाषा बनाना चाहते थे। स्वामीजी ही प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने कहा कि "सुशासन स्वशासन का स्थान नहीं ले सकता।" स्वामीजी ने जर्जर हिन्दुओं में विशेष उत्साह व प्रोत्साहन भरा। हम देखते हैं कि आर्य समाज का हमारे जीवन पर अत्यन्त प्रकाश पड़ा है।

ब्रह्म समाज—ब्रह्म समाज का उदय उस समय हुआ जबकि ईसाई धर्म का काफी प्रचार हो चुका था तब हिन्दू चुपचाप बैठे थे। हिन्दू धर्म पर सब तरह से टीका टिप्पणी की जा रही थी। ऐसे ही समय में भारतीय रंगमंच पर कुछ महान् पुरुषों [illegible] रखा, उनमें सर्वप्रथम

राजा राममोहन राय थे। राजा राममोहन राय संस्कृत, बंगला, अरबी व अंग्रेजी के अच्छे विद्वान् थे। उन्होंने हिन्दुओं की प्रचलित रीति-रिवाजों का विरोध किया। वे एकेश्वरवादी थे। उन्हें देवी-देवता व मूर्ति-पूजा में श्रद्धा नहीं थी। उन्होंने हिन्दु ग्रंथों का बंगला में अनुवाद किया अपने विचारों को प्रसारित करने के लिये संगठन कायम किया जिसे हम ब्रह्म समाज के नाम से पुकारते हैं। राजा राममोहन राय समाज सुधारक थे। उन्होंने सती प्रथा, बाल-विवाह आदि प्रथाओं का विरोध किया। सती प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन किया। उस समय ऐसी २ कुरीतियाँ प्रचलित थीं जो हमारे समाज के लिये महान् घातक थीं। यदि कोई स्त्री विधवा हो जाती तो उसे जबरदस्ती पति के साथ चिता में जलाया जाता था। विधवाओं की दशा अत्यन्त दयनीय थी। उन्हें कुल्टा, पापिन आदि नामों से पुकारा जाता था। कोई उनकी शक्ल तक देखना पसन्द नहीं करता था। राजा राममोहन राय ने इन सब कुरीतियों को दूर किया। उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया। उनकी मान्यता थी कि पाश्चात्य साहित्य, दर्शन विज्ञान आदि के द्वारा ही भारत की उन्नति सम्भव है। उन्होंने सेना के भारतीकरण, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के पृथक्करण आदि के सम्बन्ध में अपने मत रखे। ब्रह्म समाज के अनुसार ईश्वर एक है। वह सर्वव्यापक सृष्टि का करता है। अनन्त व अनादि है। प्रत्येक व्यक्ति धार्मिक क्षेत्र में पूर्णतः स्वतंत्र है। ब्रह्म समाज मूर्ति पूजा का खंडन करता था, अतः उपासना के लिए किसी मूर्ति की स्थापना नहीं की। वे अहिंसा में विश्वास रखते थे। उनका कहना था कि ईश्वर प्रत्येक मनुष्य को उसके कर्मों के अनुसार फल देता है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन महान धर्म और समाज सुधारकों ने जनता को अन्धकार के गर्त से निकालकर उनको सच्चा मार्ग दर्शन कराया। इस प्रकार उनके प्रयत्नों के द्वारा सामाजिक स्फूर्ति का जन्म हुआ, जिससे सारा देश एकता के सूत्र में बंध गया।

प्रश्न ३—भारत की सामाजिक स्थिति सुधार करने के लिए कौन २ से कानू[illegible] गये उनका उल्लेख कीजिये।

उत्तर—भारत के सामाजिक जीवन में अनेक दोषों का समावेश हो गया था, जिन्हें दूर करने के लिए हमारे सुधारकों ने भरसक प्रयत्न किये। इतना होते हुए भी वर्तमान भारत सरकार ने इन दोषों को दूर करने के लिए कानूनी कदम उठाये और समय-समय पर विभिन्न कानूनों का निर्माण किया जिससे सामाजिक दोषों को दूर करके समाज को नवीन रूप प्रदान किया जा सके। ऐसे सामाजिक कानूनों में निम्नलिखित प्रमुख माने जाते हैं, जिनके द्वारा हमारे सामाजिक जीवन में अनेक परिवर्तन हो गये हैं।

१. कन्या वध, सती प्रथा तथा विधवा विवाह—प्राचीन काल में कन्या का जन्म लेना ही एक अभिशाप समझा जाता था। कारण था कि लड़की के विवाह में माता-पिता को अनेक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता था। उनकी आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी कि वे मुँह माँगा दहेज दे सकें। अतः वह कन्या का जन्म होते ही उनको मार डालते थे ताकि उन्हें भविष्य में किसी प्रकार की कठिनाइयों का सामना न करना पड़े। ऐसे समय में हमारे देश में समाज-सुधारक हुये जिन्होंने इस कार्य को अत्यन्त घृणित बताया। लार्ड विलियम बेंटिंग के शासन काल में इसको रोकने के लिए कानून बनाया गया। इसके अतिरिक्त यह भी हमारे देश में कुप्रथा थी कि यदि पति मर जाये तो पत्नी को जबरदस्ती चिता पर जला दिया जाता था। विधवाओं की स्थिति अत्यन्त ही शोचनीय थी। कोई उनकी सूरत देखना तक पसन्द नहीं करता था। बेचारी पुनः विवाह भी नहीं कर सकती थी। यदि कोई १६ साल की उम्र में ही वैधव्य को प्राप्त हो जाती थी तो उसे जीवन पर्यन्त सादा जीवन व्यतीत करना पड़ता था। श्वेत वस्त्र धारण करती थी, सिर में कंघी आदि करना भी वर्जित था। वे कभी हँस भी नहीं सकती थी। विधवा विवाह की ओर ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने सबसे पहले ध्यान दिया। उन्होंने सिद्ध किया कि विधवाओं का विवाह करना कोई पाप नहीं है। सन १९३७ में विधवा सम्पत्ति नियम पास किया जिससे विधवायें सम्पत्ति में हिस्सा ले सकें। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा का अन्त किया। देश में बाल विवाह का अत्यत जोर था। छोटे-छोटे बच्चों को विवाह के सूत्र में बाँध [illegible] जो कि विवाह का

वास्तविक अर्थ नहीं समझते थे। १२-१३ साल की लड़की का विवाह करना धर्म के अन्तर्गत समझा जाता था। जो माँ-बाप १६-१७ साल की लड़की का विवाह करते हैं वे पाप के भागीदार होते हैं, ऐसा समझा जाता था। इस कुप्रथा को रोकने का प्रयास केशवचन्द्र सेन ने किया। स्वामी दयानन्दजी ने भी बाल विवाह का घोर विरोध किया। उन्होंने लड़की की आयु १६ वर्ष व लड़के की आयु २५ वर्ष निर्धारित की। इससे पहले लड़के-लड़की की शादी नहीं करनी चाहिये। १ अप्रेल सन् १९३० को श्री हरविलास शारदा के अथक प्रयत्नों से एक कानून बनाया जिसमें बाल विवाह कानूनी जुर्म घोषित किया गया।

२. **कन्या तथा वर विक्रय**—हिन्दू समाज में यह भी प्रथा थी, कि जो गरीब माँ-बाप होते थे, वे अपनी लड़की का विवाह धन आदि लेकर किसी वृद्ध पुरुष के साथ कर देते थे तथा पुरुष भी यही करते थे। इस प्रथा के कारण अनमेल विवाह का आरम्भ बड़ी तेजी से हो गया। यद्यपि अभी तक कोई अखिल भारतीय दहेज संबंधी कानून नहीं बना है। परन्तु यह क़ानून लोक सभा के समक्ष है। आशा की जाती है कि इस प्रकार के कानून का निर्माण कर इस सामाजिक कुप्रथा को समाप्त किया जावेगा।

३. **साम्प्रदायिकता का अन्त**—भारतीय समाज का सबसे बड़ा दोष साम्प्रदायिकता की भावना है। एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय को घृणा की दृष्टि से देखता है। ब्रिटिश शासन काल में इस भावना ने जोर पकड़ा। उन्होंने फूट डालो और शासन करो की नीति को अपनाया। हिन्दू व मुसलमानों को एक दूसरे के प्रति भड़काया। ऐसे संकट के समय इस भूमि पर कुछ महान् पुरुषों ने पदार्पण किया तथा इस कुप्रथा का अंत करने के लिए अथक प्रयत्न किया। बापू ने तो हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए अपने प्राणों की बाजी भी लगादी।

४. **अस्पृश्यता का निवारण**—अस्पृश्यता हिन्दू समाज का सबसे बड़ा कलंक है। अछूतों की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक दशा सुधारने के लिए प्रयत्न किया। महात्मा बुद्ध ने भी अस्पृश्यता का खंडन किया। कबीर, तुकाराम, राजाराममोहनराय आदि सभी ने इसको दूर करने का प्र[illegible] व सफलता भी मिली। आर्य समाज ने

भी इस दिशा में अपना कदम उठाया। उन्होंने अछूतों में शिक्षा का प्रसार किया। अछूतोद्धार का सबसे सफल प्रयास महात्मा गांधी का रहा। उन्होंने अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। गांधी जी ने हरिजनों को हरि के भक्त की उपाधि से सुशोभित किया। भारतीय संविधान ने छूत-छात का प्रायः अन्त ही कर दिया है। गांधीजी ऐसे मन्दिर में दर्शनार्थ को नहीं जाते थे, जिसमें हरिजनों को न जाने दिया जाता हो। गांधीजी के प्रयास से ही हरिजन कुओं पर पानी भरने लगे। गांधी जी के अथक परिश्रम के परिणामस्वरूप हरिजनों के प्रति जो घृणा की भावना थी वह प्रेम और सहानुभूति में परिणित हो गई।

५. अन्तर्जातीय विवाह—हिन्दू समाज में विवाह जाति में ही किये जाते हैं। परन्तु अब अन्तर्जातीय विवाह की प्रथा भी चल पड़ी है तथा इस प्रथा को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। दिन प्रतिदिन इस प्रकार के विवाह बढ़ते ही जा रहे हैं। इन पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं है। फरवरी, १९४९ में अन्तर्जातीय विवाह को वैधानिक ठहराने वाला कानून भी बन गया है।

६. स्त्री सुधार—ब्रह्म समाज तथा आर्य समाज सती प्रथा, बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा आदि रिवाजों को कम कर चुके थे, फिर भी स्त्रियों की दशा में कोई विशेष सुधार नहीं कर सके थे। श्रीमती सरोजिनी नायडू व सरलादेवी ने नारी सुधार की ओर विशेष ध्यान दिया। उन्होंने सन् १९१७ में सर्वप्रथम अपने अधिकारों की माँग पेश की। स्त्रियों को प्रांतीय धारा सभाओं और केन्द्रीय असेम्बली के सदस्यों के निर्वाचन में वोट देने का अधिकार मिल गया। सन् १९२३ में स्त्रियों ने प्रांतीय धारा सभाओं व केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव में भाग लिया। सन् १९२५ में धारासभा के सदस्य पद पर खड़े होने का अधिकार १९३६ के संविधान द्वारा ६६ लाख से अधिक स्त्रियों को मताधिकार मिला। अब उन्हें सभी अधिकार मिल चुके हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न कानूनों के द्वारा भारत के सामाजिक जीवन के प्रमुख दोषों को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया गया है। इन कानूनों के द्वारा समाज का नवीनीकरण नहीं हो सका है। परन्तु फिर भी सामाजिक [illegible] का संचार हुआ है।

सामाजिक विकास के लिए जनता का सहयोग अत्यंत आवश्यक है। इसके बिना समस्त कानून व्यर्थ हैं।

प्रश्न ४—महात्मा गांधी ने भारत के सामाजिक जीवन को उन्नत बनाने के लिये क्या प्रयत्न किये? उनका विवरण दीजिये।

उत्तर—महात्मा गांधी ने भारतवर्ष के विकास के लिए जो कुछ किया है, उसका वर्णन शब्दों में करना अत्यन्त कठिन है। भारतीयों के जीवन का शायद ही कोई ऐसा अंग होगा, जिसका उन्होंने अध्ययन नहीं किया हो और दोषों को दूर करने के लिए प्रयत्न नहीं किये हों। भारत के सामाजिक जीवन में भी दोषों की प्रधानता थी। महात्मा गांधी जिस समय भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन को संचालित कर रहे थे, उस समय भी उन्होंने सामाजिक दोषों को दूर करने का प्रयास किया। उनकी इच्छा भारत के सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने की थी। इसके लिए उन्होंने भरसक प्रयत्न किये। उन्होंने निम्नलिखित कार्य सामाजिक जीवन को उन्नतिशील बनाने के लिए किये:—

१. जाति भेद का अन्त—गांधीजी गुलामी से अत्यंत परेशान थे। गुलामी का एक मात्र कारण जाति प्रथा थी। उन्होंने जातियों रूपी मणियों में बिखरे भारतवासियों को राष्ट्रीयता के धागे में पिरोकर एक धागे में बांधा। विद्वान् लोगों ने भी जाति प्रथा का विरोध किया गांधीजी ने बताया कि हम सब समान हैं, कोई ऊँचा अथवा नीचा नहीं है। 'हम सब भारतीय हैं।" यद्यपि गांधीजी जाति प्रथा को समूल नष्ट तो नहीं कर सके फिर भी काफी सफल रहे।

२. पर्दा प्रथा का अन्त—भारत में पर्दा प्रथा का काफी प्रचलन था। गांधीजी इस प्रथा को बिल्कुल पसन्द नहीं करते थे। उनका कहना था कि घर के भीतर रहकर कोई स्त्री उन्नति नहीं कर सकती। उन्नति के पथ पर अग्रसर होने के लिये गांधीजी ने पर्दा प्रथा को बुरा बताया। आज नारी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के बराबर कार्य कर रही हैं। हिंदू कोडबिल ने उसके वैवाहिक उत्तराधिकार और विवाह विच्छेद को भी स्वीकार कर लिया है। आज नारी को राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक सभी क्षेत्रों में पुरुषों के समान अधिकार मिले हुये हैं। प्रत्येक विभाग में

आज नारी उच्च पद पर आसीन है। पर्दा प्रथा का अन्त कर नारी को ऊँचे स्थान पर आसीन करने का श्रेय पूज्य महात्मा गांधीजी को ही है।

३. **बाल-विवाह का अन्त**--बाल विवाह हमारे समाज के लिए घातक है। इससे उत्पन्न संतान कमजोर होती हैं जो भविष्य में राष्ट्र की कुछ सेवा नहीं कर सकतीं। राष्ट्र की उन्नति के लिये यह आवश्यक था कि बाल विवाह का अन्त किया जावे। गांधीजी को इस क्षेत्र में भी सफलता प्राप्त हुई।

४. **विधवा विवाह का प्रचलन**--भारत में विधवाओं की दशा बहुत ही खराब थी। उन्हें जीवन पर्यन्त सादा जीवन व्यतीत करना पड़ता था। कोई उनकी शक्ल देखना पसन्द नहीं करता था। घर के काम-काज में उनकी जिंदगी पूरी होती थी। उन्हें पुनः विवाह करने का अधिकार नहीं था। गांधीजी ने इस कुप्रथा का अंत कर विधवाओं को पुनः विवाह करने, जिंदगी के प्रत्येक क्षेत्र में उतरने के लिए अवसर प्रदान किया।

५. **अस्पृश्यता का अन्त**--गांधीजी ने सबसे महत्वपूर्ण कार्य इस क्षेत्र में किया। गांधीजी ने देखा कि हरिजनों की हालत बहुत खराब है। उन्हें मंदिरों में नहीं जाने दिया जाता था। यदि हरिजन किसी से छू जावे तो उस व्यक्ति को स्नान करना पड़ता था। उन्हें शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार भी नहीं था। जब गांधीजी ने अछूतों की इस प्रकार की स्थिति देखी तो उन्हें अत्यंत दुःख हुआ। उनकी स्थिति सुधारने का प्रयत्न गांधीजी ने किया। हरिजन की व्याख्या ईश्वर के भक्त से की। गांधीजी उन मंदिरों में नहीं जाते थे जिनमें हरिजनों को नहीं जाने दिया जाता था। गांधीजी ने अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। भारतीय संविधान ने अस्पृश्यता का बिल्कुल अंत कर दिया है। आज हरिजन को भी राजनैतिक क्षेत्र में उतना ही अधिकार प्राप्त है जितने कि किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति को। आज हरिजन बच्चे स्कूलों में भी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

महात्मा गांधी के उपर्युक्त कार्यों का अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वास्तव में उन्होंने भारतीयों के सामाजिक जीवन को उन्नतिशील बनाने के लिए भरसक प्रयत्न किये। यह उनके

प्रयत्नों का परिणाम है कि अस्पृश्यता जो हमारे समाज का कलंक था, दूर हुई तथा आज कानूनी जुर्म माना गया है। उनकी सामाजिक सेवाओं को दृष्टिगत रखते हुए इन्हें सामाजिक क्रांति का पिता कहा जाता है।

प्रश्न ५—स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द तथा राजा राममोहन राय पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये।

उत्तर—(स्वामी दयानन्द और राजा राममोहन राय की टिप्पणियों के लिए प्र० नं० २ देखिए।)

स्वामी विवेकानन्द—स्वामी विवेकानन्दजी संस्कृत व अंग्रेजी के अच्छे ज्ञाता थे। विवेकानन्दजी नास्तिक थे फिर भी उनमें धर्म के स्वरूप को जानने की प्रबल इच्छा थी। अपने अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप स्वामी जी धर्म की वास्तविकता को जान सके। हिन्दुओं को अपने धर्म के प्रति बिल्कुल भी आस्था नहीं थी। अतः सबसे पहले स्वामीजी ने हिन्दुओं में हिन्दू धर्म के प्रति विश्वास पैदा किया। भारतीयों में आत्म गौरव का प्रायः ह्रास सा हो गया था। स्वामीजी ने आत्म गौरव को भी ऊँचा उठाया। श्री दिनकर ने लिखा है, "विवेकानन्द वह सेतु है जिस पर प्राचीन और नवीन भारत परस्पर आलिंगन करते हैं। विवेकानन्द वह समुद्र है जिससे धर्म और राजनीति, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता तथा उपनिषद् और विज्ञान सबके सब समाहित होते हैं।" स्वामीजी ने धर्म की अनूठी व्याख्या की। "धर्म मनुष्य के भीतर निहित देवत्व का विकास है।" धर्म न तो पुस्तकों में है न धार्मिक सिद्धान्तों में। वह केवल अनुभूति में निवास करता है। धर्म अंधविश्वास नहीं है, धर्म अलौकिकता में नहीं है वह जीवन का अत्यन्त स्वाभाविक तत्व है। उन्होंने विश्वधर्म महासम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन में जो भाषण स्वामीजी ने दिया उससे हिन्दू जनता अत्यन्त प्रभावित हुई। स्वामीजी ने अपने गुरु के नाम पर रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। वेदान्त के सिद्धांतों के आधार पर जीवन की एकता तथा धर्मों के पारस्परिक मेल की भावनाओं का प्रचार करना इस मिशन का कार्य था। मिशन का ऐसा विश्वास है कि मानव सेवा ही ईश्वर सेवा का सर्वोत्तम रूप है। स्वामीजी ने हिन्दू धर्म व भारतीय संस्कृति की अमिट सेवा की।

अध्याय ८

भारतीय स्वतन्त्रता के संघर्ष का इतिहास

प्रश्न १—१८५७ की भारतीय सशस्त्र क्रांति के क्या कारण थे ? संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—अंग्रेजों ने भारतवासियों की राष्ट्रीय भावना को प्रत्येक दृष्टिकोण से हानि पहुँचाने का प्रयास किया। विशेषकर लार्ड डलहौजी ने राजहड़प सिद्धांत के द्वारा बहुत से ऐसे राज्यों को जिनके शासक निसंतान थे उन्हें पुत्र गोद लेने के अधिकार से वंचित कर, उन्हें अंग्रेजी साम्राज्य का अंग बना लिया। ऐसी स्थिति में भारतीय शासकों में असंतोष की भावना व्यापक हो गई। सन् १८१६ से लेकर १८५६ तक कुछ ऐसी घटनाएँ हुईं जो १८५७ में क्रांति के रूप में प्रगट हुईं।

भारतीयों द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति की ओर यह प्रथम महत्वपूर्ण कदम था, जिसका दमन अंग्रेजों ने सैनिक बल पर किया।

१. १८५७ की क्रांति के कारण—१८५७ की क्रांति के निम्नलिखित कारण थे:—

राजनैतिक कारण—

(१) डलहौजी की गोद न लेने की नीति ने देशी राजाओं तथा नवावों को पक्का शत्रु बना दिया। अवध, नागपुर, झाँसी और सतारा को अंग्रेजों ने अपने राज्य में मिला लिया था तथा इन राज्यों के राजा तो अंग्रेजों से नाराज थे ही इसके साथ अन्य देशी राजा तथा नवाब भी शंकित हो उठे थे।

(२) बहादुरशाह मुगल सम्राट् जानता था कि उसके मरने के पश्चात् उसके उत्तराधिकारियों को लाल किला छोड़ना पड़ेगा तथा उसकी रही सही सत्ता भी समाप्त हो जायेगी। इसलिए बहादुरशाह भी डलहौजी से नाराज था।

(३) डलहौजी ने कर्नाटक तथा तंजौर के शासकों की उपाधियां हटाकर वहाँ के शासकों को भी अपना शत्रु बना लिया था। फलस्वरूप दिल्ली, अवध के मुसलमानों, मराठों तथा अन्य देशी राजाओं तथा नवाबों की जनता ने विद्रोह को फैलाने में अपना पूरा-पूरा सहयोग दिया।

(४) नाना साहब की पेंशन बन्द कर देने से वह भी रुष्ट हो गया था।

सामाजिक कारण—

(१) भारतवासियों को ऊँचे पदों पर नियुक्ति न देने के कारण जनता में विद्रोह की भावना उत्पन्न हो गई थी।

(२) राज्य छिन जाने के कारण राजा, महाराजाओं के यहाँ कार्य करने वाले बहुत से सेवक बेकार हो गये तथा उन्होंने भी इस युद्ध में अपना सहयोग दिया।

(३) जागीरदारों पर भूमि कर लगाने से तथा जागीरों को छीन लेने से जागीरदार तथा उनके सेवक भी असन्तुष्ट हो गये।

सैनिक कारण—

(१) ऊँचे सैनिक पदों से भारतीयों को वंचित रखा जाता था।

(२) प्रथम अफगान युद्ध में अंग्रेजों की हार हो जाने से सैनिकों ने अनुमान लगा लिया कि अंग्रेज भी हराये जा सकते हैं।

(३) ब्राह्मण समुद्र यात्रा को धर्म की दृष्टि से खराब मानते थे इसलिये वे समुद्र पार सेना को भेजने पर विरोध करते थे।

(४) भारतीय सैनिकों के साथ अंग्रेजों का व्यवहार बहुत खराब था।

(५) बंगाल की सेना में अधिकतर अवध के ही नौकर थे जो अंग्रेजों के द्वारा अवध को अंग्रेजी शासन में मिलाने का विरोध करते थे।

(६) नये कारतूसों को चलाने से पहले मुँह से खोलना पड़ता था। सैनिकों ने सोचा कि कारतूसों के मुँह पर चर्बी लगी हुई है जिसको मुँह में लेने से उनका धर्म बिगड़ जाने का डर है।

धार्मिक कारण—

(१) पश्चिमी शिक्षा का प्रसार हो रहा था।

(२) रेलवे की स्थापना से ऊँच-नीच एक हो गये।

(३) डाक तार का प्रचलन होने से लोगों ने इसे भी धर्म भ्रष्ट का एक उपाय समझा।

(४) ईसाई प्रचारकों का प्रचार बहुत अधिक था।

(५) धर्म बदलने पर भी सम्पत्ति पर अधिकार किया जा सकता [illegible] गया कि अग्रेज उन्हें ईसाई बनायेंगे।

(६) विधवा विवाह का नियम भी हिन्दुओं के लिए बड़ा धर्म विमुख माना गया।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत की तात्कालिक परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुये स्वतन्त्रता संग्राम का होना अनिवार्य हो गया था। भारतीयों ने प्रथम वार अंग्रेजों के प्रति रोष की भावना का प्रदर्शन १८५७ में किया जो कि एक महान् क्रांति मानी जाती है।

प्रश्न २—१८५७ की क्रांति के असफल होने के क्या कारण थे ? संक्षेप में लिखिये।

उत्तर—भारत में १८५७ की क्रांति एक महत्वपूर्ण घटना मानी जाती है। भारत के नेताओं ने इस क्रांति को सफल बनाने के लिए भरसक प्रयत्न किये, परन्तु अंग्रेजों की दमनकारी नीति के आगे उनकी एक न चल सकी और यह क्रांति पूर्ण रूप से असफल रही। इसके निम्नलिखित कारण थे:—

१८५७ की क्रांति की असफलता के कारण—

(१) साधारण जनता ने इसमें कोई सक्रिय भाग नहीं लिया था। दक्षिण, सिंध तथा राजपूताना भी शान्त रहे थे।

(२) नेता अलग २ उद्देश्यों को लेकर लड़ रहे थे। उन पर कोई केन्द्रीय नेतृत्व नहीं था। मुगल सम्राट् बहादुरशाह ने इनका साथ इसलिए दिया था कि सम्भवतः उसका साम्राज्य पुनः स्थापित हो जायेगा। इसी प्रकार मराठे भी अपना राज्य बढ़ाने की सोच रहे थे।

(३) इस संग्राम के प्रारम्भ होने की निश्चित तिथि १३ मई, १८५७ थी। परन्तु कई जगह इससे पूर्व ही आरम्भ हो जाने से अंग्रेज सतर्क हो गये।

(४) भारतीय नेता इतने अधिक रणकुशल नहीं थे जितने कि अंग्रेज सेनापति।

(५) कई भारतीय राजाओं तथा नवाबों तथा सिंधिया, होल्कर, निजाम ने अंग्रेजों को सहायता दी। इसके साथ ही अंग्रेजों की गोरखा तथा पंजाबी सेनाओं ने सहायता की।

(६) समुद्रों पर अधिकार होने से सेना तथा सामग्री इंगलैंड से पहुंचाई गई थी अतः अंग्रेजों की शक्ति बढ़ गई।

(७) आवागमन के साधनों पर सरकार का पूरा नियंत्रण होने से अंग्रेजी सहायता इधर उधर भेजी जा सकती थी ।

(८) १८५७ की क्रान्ति की असफलता का अंतिम कारण भारतीयों के पास अनुशासन व युद्ध सामग्री का अभाव होना है। जबकि अंग्रेजों के पास इन वस्तुओं का आधिक्य सेना में अनुशासन भी था ।

इस प्रकार उपर्युक्त कारण हमारे समक्ष ऐसे आते हैं जो क्रांति की असफलता के कारण मुख्य रूप से रहे । किन्तु इससे अंग्रेजों को भी इस बात का पूर्ण रूप से पता लग गया कि भारतीय इतने गिरे नहीं हैं जो सब प्रकार के अत्याचारों को सहन कर लेंगे । इस प्रकार अंग्रेजों की भविष्य के लिए आँखें खुल गईं ।

प्रश्न ३—रानी लक्ष्मीबाई, तांत्याटोपे, नाना साहब तथा सम्राट् बहादुरशाह पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिये ।

उत्तर—महारानी लक्ष्मीबाई—महारानी लक्ष्मीबाई झाँसी की विधवा रानी थी । उनका १८५७ के आन्दोलन में एक महत्वपूर्ण स्थान है। लार्ड डलहौजी के राज्य हड़प सिद्धांत के कारण झांसी को अंग्रेजी साम्राज्य का एक अंग घोषित कर दिया गया । इस घोषणा से रानी बहुत क्रोधित हुई तथा उसने अंग्रेजी शासन का डटकर विरोध किया । महारानी ने जो वीरता इस युद्ध में दिखाई, उसका शब्दों में वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। वह लड़ती हुई वीर गति को प्राप्त हुई । अंग्रेजों ने इस क्रांति का दमन करने के लिए जिस बर्बरता और क्रूरता का परिचय दिया, वह सदैव उसके लिए कलंक बना रहेगा ।

तांत्याटोपे—तांत्याटोपे १८५७ की क्रांति का एक प्रमुख स्तम्भ था । उसने इस क्रांति में वीरता का अपूर्व परिचय दिया । तांत्याटोपे में नायक होने के सभी यथोचित गुण मौजूद थे । परन्तु राजवंश में संबन्धित नहीं होने के कारण उसे इस पद से वंचित रखा गया । वह योग्यता रखते हुए भी अपनी प्रतिभा का परिचय नहीं दे सका । १८५७ की क्रांति उसके भरसक प्रयत्नों के फलस्वरूप भी असफल रही ।

नाना साहब—१८५७ की क्रांति का कानपुर में नेतृत्व करने वाले [illegible] इस क्रांति में अपनी वीरता का

अद्भुत परिचय दिया क्रांति समय के पूर्व हो जाने के कारण सफल नहीं हो सकी। इनके सभी प्रयत्न असफल रहे। इस क्रांति की असफलता पश्चात् नाना साहब नैपाल की ओर चले गये।

सम्राट् बहादुरशाह—सम्राट् बहादुरशाह भारत का अंतिम निर्बल सम्राट् था। वह पूर्ण रूप से अपने साम्राज्य की रक्षा करने में असफल रहा। अंग्रेजों ने उसके साथ बुरा व्यवहार किया। इसलिए उसने भी १८५७ की क्रांति में भाग लिया, परन्तु उसका जनता पर कोई प्रभाव नहीं था। इस कारण यह क्रांति पूर्ण रूप से असफल रही। अंग्रेजों ने मुगल शहजादों के सिर कटवा कर उसे भेंट किये। उसे देश निकाला देकर रंगून भेज दिया गया जहाँ उसकी मृत्यु हो गई।

प्रश्न ४—राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में महात्मा गांधी का स्थान निर्धारित कीजिये।

उत्तर—राष्ट्रीय आन्दोलन में महात्मा गांधी एक विशेष स्थान रखते हैं। उन्होंने प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् राष्ट्रीय कांग्रेस में प्रवेश किया और उसी समय से भारत के राष्ट्रीय गतिविधियों से क्रांतिकारी परिवर्तन हो गये। महात्मा गांधी के कार्यों का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है—

१. महात्मा गांधी और राष्ट्रीय आन्दोलन—

महात्मा गांधी ने असहयोग और अहिंसात्मक कार्यों पर विशेष रूप से ध्यान दिया। इसके प्रयत्नों के फलस्वरूप एक बार फिर हिन्दू मुस्लिम एकता स्थापित हो गई। सन् १९२० में कलकत्ते में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ और असहयोग की घोषणा की गई। स्वराज्य की मांग पुनः तेज ही हो गई तथा नगर में यह निश्चित किया गया कि हमें स्वराज्य मिलना चाहिये। उग्रवासियों के विरोध को महात्मा गांधी ने विवेक से हल कर दिया। यह भी निश्चित किया गया कि स्वराज्य को [illegible] करने के लिए वैधानिक उपायों को काम में लाया जाये। स्वराज्य [illegible] में श्री सी. आर. दास, मालवीयजी, मोतीलाल नेहरू और विठ्ठल [illegible] पटेल प्रमुख माने गये। महात्मा गांधी ने सरकार का दिया हुआ सम्मान चिन्ह वापिस लौटा दिया। महात्मा गांधी ने इस

को सदैव शान्तिपूर्ण ढंग से चलाने के लिए कहा, परन्तु ४ फरवरी को जनता ने चौरा-चोरी नामक स्थान पर पुलिस थाने को जलाया और सिपाहियों को मार डाला। इस कृत्य से महात्मा गांधी बहुत दुखी हुए और उन्होंने अपना आन्दोलन वापिस ले लिया। उन्होंने हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए अनशन किये और उपवास किये। कुछ समय के लिए परिवर्तन भी हुए। तत्कालीन परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए अंग्रेजी सरकार ने १६३५ का एक्ट स्वीकृत किया, परन्तु कोई संतोषजनक परिणाम नहीं रहा। महात्मा गांधी ने १६३० में नमक आन्दोलन का सूत्रपात किया, जिसे डंडी मार्च के नाम से पुकारा जाता है। इसका मुख्य कार्य-क्रम असहयोग, सविनय अवज्ञा, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, शराब वन्दी, नमक बनाना और अफीम की दुकानों पर सत्याग्रह करना आदि था। यह आन्दोलन तीव्र गति से आगे बढ़ा। बड़े-बड़े नेताओं जैसे मोतीलाल नेहरू आदि को गिरफ्तार कर लिया। अतः गांधी इर्विन समझौता हुआ। जिसके अनुसार भारतीय नेताओं को मुक्त कर दिया गया। उन्होंने १६११ की दूसरी गोल मेज सभा में कहा, 'जब तक मैं यह प्रमाणित नहीं करदूं कि कांग्रेस अधिक भारतवासियों का प्रतिनिधित्व करती है, मुझे भारत वापिस जाना चाहिए और अवज्ञा आन्दोलन करना चाहिए।" सन् १६३२ में अंग्रेजों ने साम्प्रदायिक निर्णय की घोषणा की। इस निर्णय के विरुद्ध महात्मा गांधी ने आमरण घोषणा की और अन्त में समझौते के अन्तर्गत अंग्रेजों को अपना निर्णय वापिस लेना पड़ा।

सन् १६४० के लाहौर अधिवेशन में पाकिस्तान के निर्माण को प्रोत्साहन मिल चुका था। अंग्रेजों ने शोचनीय स्थिति पर काबू पाने के लिए सन् १६४२ में सर स्टेफोर्ड क्रिप्स का भारत आगमन हुआ। क्रिप्स ने सुरक्षा के अतिरिक्त और सभी विभाग देने के लिए कहा, परन्तु कांग्रेस इसके लिए तैयार नहीं हुई। अंग्रेजों ने कांग्रेस को अवैध संस्था घोषित किया। भारतीय नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। महात्मा गांधी ने जेल में २१ दिन का अनशन किया। सन् १६४४ में जेल से मुक्त होने के पश्चात् अपने देश को दासता से मुक्त कराने के लिए नवीन योजना बनाई। कांग्रेस का नेतृत्व अकेले महात्मा गांधी ने किया। सन् १६४५

में शिमला कान्फ्रेन्स के अवसर पर समस्त कांग्रेसी नेताओं को जेल से मुक्त कराया। केबिनेट मिशन के अन्तर्गत सन् १९४६ में आन्तरिक सरकार की स्थापना की गई और दीर्घकालीन योजना के अन्तर्गत संविधान निर्मात्री सभा का संगठन किया गया। उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप १५ अगस्त, १९४७ को भारत मुक्त हुआ।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में महात्मा गांधी का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। महात्मा गांधी ने अपनी नवीन विचारधाराओं के द्वारा कांग्रेस को समाजवाद का समर्थक बनाया। सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन जैसे महत्वपूर्ण अस्त्र बताये। उनकी महानता के विषय मे विचार प्रगट करते हुए हमारे राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन ने सत्य ही लिखा है, "महात्मा गांधी एक स्वतन्त्र जीवन के अग्रदूत थे, जो अपनी अलौकिक पवित्रता और वीरता के गुण से लाखों मनुष्यों पर अपनी शक्ति का प्रभाव रखते थे।"

प्रश्न ५—भारतीय राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) का संक्षिप्त इतिहास दीजिए। राष्ट्रीय भावनाओं के प्रचार में उसकी सेवाओं का उल्लेख कीजिये।

उत्तर—राष्ट्रीय आन्दोलन को संचालित करने के लिए एक राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता थी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए श्री ह्यूम ने जो कि एक अवकाश प्राप्त आई० सी० एस० अधिकारी थे, कलकत्ता के स्नातकों के नाम एक खुला पत्र लिखा और उन्हें देश की सेवा करने का निमन्त्रण दिया। तत्कालीन वाइसराय लार्ड डफरिन की अनुमति से सन् १८८५ में एक आयोजन किया गया और बहुमत से इस सम्मेलन का नाम इण्डियन नेशनल कांग्रेस रखा गया, परन्तु हैजे के प्रकोप के कारण इसका अधिवेशन नहीं हो सका। उसका अधिवेशन बम्बई में किया गया, जिसमें ७२ प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

१. कांग्रेस के उद्देश्य—बम्बई अधिवेशन के सभापति श्री डब्लू० सी० बनर्जी ने कांग्रेस के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये :—

(क) देश के हित और विकास के लिए प्रेम और सहयोग से कार्य

(ग) ऐसी योजनाओं का निर्माण करना, जिससे भारत के शासन में परिवर्तन हो सके।

(ग) महत्वपूर्ण और आवश्यक सामाजिक विचारों पर शिक्षित व्यक्तियों की जानकारी प्राप्त कर सिद्धान्तों का निर्माण करना।

(घ) देश के महत्वपूर्ण पदों पर भारतवासियों को नियुक्त करना।

२. राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रथम काल–(१८८५ से १९०५ तक)

भारतीय कांग्रेस एक राष्ट्रीय संस्था थी, इस कारण प्रत्येक भारतीय ने पूर्ण रूप से सहयोग प्रदान किया। सर्वप्रथम कांग्रेस का एक मात्र लक्ष्य सामाजिक परिवर्तन करना था। अंग्रेजों की पक्षपात आर्थिक नीति के कारण कांग्रेस को अपनी नीति में परिवर्तन करना पड़ा। इस प्रकार कांग्रेस एक स्वाधीनता संग्राम को संचालित करने वाली संस्था बन गई। लार्ड डफरिन ने कहा, "भारतीय राजनीतिज्ञ वर्ष में एक बार कांग्रेस के नेतृत्व में एकत्रित हों और सरकार के सामने शासन सम्बन्धी सुधारों की मांग रखें। धीरे २ यह संस्था विरोध संस्था बन गई। अंग्रेज गवर्नरों ने ऐसी स्थिति में भारतीय नेताओं से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया, उन्हें अपने यहां बुलाकर दावतें दीं, ताकि जनता यह समझे कि सरकार व जनता के मध्य अच्छे सम्बन्ध हैं। यह विश्वास अधिक दिन तक स्थाई न रह सका। कांग्रेस दल में तिलक, लाला लाजपतराय जैसे उग्र विचार वाले व्यक्तियों का प्रभाव पड़ा। सन् १८९२ में वैधानिक परिवर्तन भी हुये। ठीक उसी समय कलकत्ता के कारपोरेशन, भारतीय विश्वविद्यालय के अधिनियमों और बंगाल के विभाजन ने जनता के विश्वास को खो दिया। मिश्र, ईरान व आयरलैंड को स्वतन्त्रता की सूचना ने भारतीयों को नवीन प्रेरणा दी। कांग्रेस उग्रवादी दल तथा उदारवादी दल में विभक्त हो गई।

३. राष्ट्रीय आन्दोलन का द्वितीय काल–(१९०५ से १९१९ तक)

कांग्रेस का यह दूसरा काल भी अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। दोनों दलों में यह मत-भेद शिक्षा की नीति पर था, जिसे आपसी स[illegible]ते के द्वारा शांत करवा दिया गया। कांग्रेस का अधिवेशन सन् १९०६ में कलकत्ते में दादा नौरोजी की अध्यक्षता में हुआ। तिलक ने यह घो[illegible]णा की "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।" स्वदेशी वस्तुओं को

अपनाने की ओर ध्यान देने के लिए विशेष प्रस्ताव स्वीकृत किया गया। १९०७ का सूरत का अधिवेशन भी महत्वपूर्ण है। उग्रदल का नेतृत्व तिलक ने और उदारवादी दल का नेतृत्व गोपालकृष्ण गोखले ने किया। वहाँ दोनों दलों में अशिष्ट व्यवहार हुआ। इसके पश्चात् इलाहाबाद में नम्र दल का सम्मेलन बुलाया गया, जहाँ कांग्रेस का विधान तैयार किया। ठीक उसी समय १९०७ में अंग्रेजी सरकार ने अजीतसिंह और लाला लाजपतराय को बिना मुकदमा चलाये बन्दी बना लिया। श्री तिलक को केसरी के कुछ आपत्तिजनक लेखों के आधार पर गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें ६ वर्ष का कठोर कारावास दिया गया। समाचार पत्रों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। पत्रकारों को जेल में रखा गया। क्रांति के प्रमुख केन्द्र बंगाल, महाराष्ट्र व पंजाब रहे। ऐसी स्थिति में अंग्रेजों ने अपनी नीति बदली। उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों में फूट डालने की चेष्टा की। मुसलमानों का पक्षपात किया। अलीगढ़ के आन्दोलन को प्रोत्साहन दिया। सर सैयद अहमदखाँ ने मुसलमानों का नेतृत्व किया तथा थ्योडर बेकर ने मुस्लिम कॉलेज के प्रिंसिपल के पद से इस आन्दोलन को संगठित किया। साम्प्रदायिकता का धीरे-धीरे विकास होता गया। उन्होंने "लड़ाओ और राज्य करो" नीति को अपनाया। इसी वर्ष आगाखाँ के नेतृत्व में मुसलमानों का शिष्ट मण्डल लार्ड मिण्टो से मिला। सन् १९०९ में मुसलमानों को प्रथक प्रतिनिधित्व का अधिकार मिला। श्रीमती एनीबीसेन्ट ने राष्ट्रीय आन्दोलन को सफल बनाने के लिये प्रयास किये। साम्प्रदायिक भावना राष्ट्रीय हित के लिये घातक थी, इसलिये केसरी व मरहठा अखबारों में इस नीति की आलोचना की गई। सन् १९११ में बंगाल विभाजन की घोषणा की गई। इस घोषणा से असंतोष फैल गया। सन् १९१६ में कांग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में हुआ जिसमें मोहम्मदअली जिन्ना ने मुस्लिम लीग का नेतृत्व किया और मुस्लिम हिन्दू एकता का प्रयास किया, किन्तु पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। लखनऊ का अधिवेशन कांग्रेस के दो दलों को एक करने में सफल रहा, इसका श्रेय श्रीमती एनीबीसेंट को है। ठीक उसी समय तिलक जेल से रिहा हुये व स्वराज्य सम्बन्धी प्रस्ताव भारी बहुमत से पास हुआ। इसी साथ भारतीयों ने उत्तरदायी शासन की मांग रखी। जिस समय कांग्रेस उग्ररूप धारण

किये हुये थी, इसी समय विश्वयुद्ध का काल था व अंग्रेज बुरी तरह फँसे हुये थे। इसलिये उन्होंने कांग्रेस को सहयोग प्रदान किया, यह आश्वासन दिया कि युद्ध की समाप्ति पर स्वतन्त्रता प्रदान कर देंगे। कांग्रेस ने पूर्ण सहयोग दिया, परन्तु अंग्रेजों ने १९१७ के एक्ट द्वारा फिर फूट उत्पन्न करदी। रालेट अधिनियम ने देशवासियों के हृदय में विद्रोह की ज्वाला भड़का दी। अमृतसर कांग्रेस के अधिवेशन में कांग्रेस को महात्मा गांधी का नेतृत्व मिला। उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध ६ अप्रेल १९१९ को देश भर में हड़ताल, उपवास तथा प्रार्थना का कार्य-क्रम रखा। अंग्रेजों ने पलवल स्टेशन पर गांधीजी को गिरफ्तार कर लिया। इस गिरफ्तारी के कारण असन्तोष फैल गया। अमृतसर विद्रोह का क्षेत्र बन गया। १३ अप्रेल, १९१९ को जलियावाले बाग में डायर ने निहत्थे व्यक्तियों पर गोली चलवादी। गोली कांड का परिणाम देशव्यापी हुआ तथा देश का नेतृत्व गांधीजी के हाथ में आ गया।

नोट—(शेष प्रश्न के भाग का उत्तर प्र० नं० ४ में पढ़िए।)

प्रश्न ६—उन परिस्थितियों का संक्षेप में उल्लेख कीजिए जिन्होंने अंग्रेजी शासन को भारत से हट जाने पर विवश कर दिया।

उत्तर—अंग्रेजों ने भारत में अपनी नींव मजबूत रखने के लिए भरसक प्रयत्न किये। भारतीयों की राष्ट्रीय भावना को संतुष्ट करने के लिए समय-समय पर विभिन्न एक्ट अंग्रेजों के द्वारा स्वीकृत किये गये, परन्तु उनके सभी प्रयत्न असफल रहे। तत्कालीन भारत की परिस्थितियां इतनी विकट हो गई थीं जिन्हें दृष्टिगत रखते हुए अंग्रेजों को भारत छोड़ देने को विवश होना पड़ा।

तत्कालीन भारत की परिस्थितियां—तत्कालीन भारत की निम्नलिखित परिस्थितियों ने अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए विवश कर दिया।

(क) आजाद हिन्द फौज के तीन प्रमुख नेताओं जिनमें से एक हिन्दू, एक मुसलमान और एक सिक्ख थे, उन पर देहली में मुकदमा

चल रहा था और समस्त देशवासी उनको मुक्त कराने की माँग कर रहे थे।

(ख) उस समय के होने वाले चुनावों ने जनता में उत्साह कूट-कूट कर भर दिया था।

(ग) अंग्रेजी शिष्टमण्डल ने भारत में दौरा किया। जिसके विरुद्ध भी प्रतिक्रिया हुईं।

(घ) राष्ट्रीय भावना केवल नागरिकों तक ही सीमित नहीं रही थी, अपितु नौ सेना भी विद्रोही हो गई थी। यह विद्रोह धीरे-धीरे बम्बई, करांची और मद्रास आदि स्थानों पर फैल गया था। विद्रोहियों ने यूनियन जेक को उतार फेंका था और कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग के झण्डे साथ-साथ लहराये।

उपर्युक्त परिस्थितियों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि देश की तत्कालीन अवस्था ब्रिटिश सरकार के पक्ष में नहीं थी। ऐसी स्थिति में उन्हें भारत स्वाधीनता विधेयक स्वीकृत करना पड़ा, जिसके अन्तर्गत देश का विभाजन कर दिया गया। इस प्रकार भारत और पाकिस्तान दो स्वतन्त्र राज्यों की स्थापना हुई।

प्रश्न ७—भारत के राष्ट्रीय नेताओं ने भारत का विभाजन, क्यों स्वीकार कर लिया ? कारण सहित लिखिये।

उत्तर—भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा संचालित राष्ट्रीय आन्दोलन के परिणामस्वरुप भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। एक ओर तो हमें अपने भाग्य को निर्माण करने का अधिकार मिला, तो दूसरी ओर अखण्ड भारत का विभाजन हो गया। ऐसी स्थिति में यह जानना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि विभाजन देश के नेताओं के द्वारा क्यों स्वीकार कर लिया गया।

विभाजन स्वीकार करने के कारण—भारत के महान् नेताओं ने निम्नलिखित परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुये देश के विभाजन को स्वीकृत किया:—

(क) भारत में जून, १९४७ में देश के नेतृत्व की प्रमुख समस्या थी। कांग्रेस और मुस्लिम लीग में गहरे मतभेद थे; क्योंकि मुस्लिम लीग पर साम्प्रदायिकता का भूत सवार था।

(ख) केबिनेट मिशन के अन्तर्गत जिस मिले-जुले शासन की व्यवस्था की गई थी वह मुस्लिम लीग को मंजूर नहीं थी।

(ग) मुस्लिम लीग की तत्कालीन गतिविधियों को दृष्टिगत रखते हुए कांग्रेस को यह विश्वास हो गया था कि लीग के साथ मिलकर शासन-व्यवस्था को किसी भी रूप में संचालित नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकार भारत के नेताओं को मजबूर होकर राष्ट्र के विभाजन को स्वीकृत करना पड़ा, यद्यपि उनकी हार्दिक इच्छा देश के विभाजन के पक्ष में नहीं थी। महात्मा गांधी इस निर्णय से अत्यन्त दुखी थे। जब उनसे संदेश देने के लिए कहा गया तो उन्होंने केवल इतना कहा कि "मैं सूख गया हूं मुझे कुछ नहीं कहना।" इस विभाजन के पश्चात् देश को विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ा। सारे देश में साम्प्रदायिक झगड़े प्रारम्भ हो गये। भाई ने भाई का खून बहाया और सब ओर अव्यवस्था फैल गई। इतना होते हुए भी हमारी सरकार ने दृढ़ता के साथ इन सब कठिनाइयों का सामना किया और देश के विकास के लिए प्रयत्नशील है।

प्रश्न ८—नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, लोकमान्य तिलक तथा पंडित जवाहरलाल नेहरू पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये।

उत्तर—सुभाषचन्द्र बोस—इनका जन्म कटक में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा योरोपियन स्कूल में प्राप्त की। इसी स्कूल में अंग्रेज सहपाठियों के बर्ताव से शासक वर्ग और शासित वर्ग के भेद को पहचाना। इसके बाद नेताजी इंगलैण्ड गये। वहां सिविल सर्विस की परीक्षा उत्तीर्ण की। उनका मन देश-भक्ति की तरफ था, अतः १९२१ में सिविल सर्विस से त्याग-पत्र दिया। राजनीति में उन्होंने देशबन्धु सी० आर० दास को अपना गुरु बनाया। जब देशबन्धु ने राष्ट्रीय-शिक्षा के हेतु एक कॉलेज खोला तो सुभाष बाबू को उसका प्रिंसिपल चुना गया। सन् १९२३ में देशबन्धु कलकत्ता कॉर्पोरेशन के मेयर चुने व नेताजी एक्जीक्यूटिव ऑफिसर बने। उनकी संगठन शक्ति व प्रबन्ध की सबने प्रशंसा की। सरकार ने नेताओं को अपनी तरफ करना चाहा। नेताजी के इनकी तरफ न जाने से सरकार ने इन्हें नजरबन्द कर दिया। सन् १९२५ में मॉडल भेजा गया, वहाँ इनका स्वास्थ्य खराब हो गया, अतः १९२७ में जेल से रिहा कर दिये गये।

सन् १९२८ में श्री नेहरू के साथ नेहरू रिपोर्ट द्वारा स्वीकृत औपनिवेशिक स्वराज्य का विरोध किया। १९३० व १९३२ में फिर बन्दी बनाये गये १९३८ में नेताजी कांग्रेस के सभापति चुने गये फिर स्वदेश लौटे। अगले वर्ष भी उन्हें कांग्रेस का सभापति चुना गया, इस बार गांधीजी नें विरोध किया, अतः नेताजी ने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया और अग्रगामी दल नामक संगठन चलाया। अभी तक नेताजी के मन में गांधीजी के प्रति किसी प्रकार का द्वेष भाव नहीं था। उन्होंने एक वक्तव्य में कहा था "मैं महात्माजी को भारत का सर्वश्रेष्ठ महापुरुष मानता हूँ और उनके प्रति श्रद्धा रखता हूँ, परन्तु श्रद्धा का अर्थ उनकी इच्छा और विचारों की आधीनता नहीं है।

सन् १९३९ में दूसरा विश्वयुद्ध छिड़ जाने पर उन्होंने देश का दौरा किया व जनता को इस अवसर से लाभ उठाने के लिये प्रेरित किया। सरकार ने उनको घर पर ही नजरबंद किया। अवसर पाकर भेष बदल कर नेताजी काबुल होते हुये जर्मनी पहुँचे तथा हिटलर से भेंट की। जून, १९४२ के बाद से नेताजी ने सारा समय आजाद हिंद फौज के संगठन में लगाया। उन्होंने आजाद हिंद फौज के सैनिकों से कहा था, "मैं आपको भूख, घोर युद्ध और कठिनाइयों के सिवा कुछ भी नहीं दे सकता। लाल किले तक पहुँचने और राष्ट्रीय झण्डा फहराने से पूर्व आपको अपना सब कुछ स्वाहा करना पड़ेगा।" अगस्त, सन् १९४४ में वायुयान दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई। नेताजी की आश्चर्यजनक संगठन शक्ति, निर्भय, आत्म-बलिदान से भारतवासियों को हमेशा के लिए शिक्षा मिलती रहेगी।

लोकमान्य तिलक—उनका सार्वजनिक जीवन पूना में स्थापित हुये न्यू इङ्गलिश स्कूल के साथ सन् १८८८ में प्रारम्भ हुआ। उन्होंने 'केसरी' और 'मराठा' नाम के दो साप्ताहिक पत्रों का मराठी व अंग्रेजी भाषा में सम्पादन किया। सन् १८९० में उन्होंने कांग्रेस में प्रवेश किया। उसके द्वारा उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में उग्रवाद को जन्म दिया। इन्होंने भाषण द्वारा जनता को अपनी विद्वता का परिचय दिया। तिलकजी जनता में देशभक्ति और राष्ट्रीयता की भावनाओं को जगाना चाहते थे। अतः गणपति उत्सव व शिवाजी उत्सव मनवाने शुरू किये। उन्होंने शिवाजी द्वारा अफजलखां के वध को न्यायसंगत सिद्ध करने का प्रयत्न किया। जब

का जनता में

१८९८ में दक्षिण में दुर्भिक्ष पड़ा तो उन्होंने अकाल पीड़ितों के लिए स्वयं सेवक दल का संगठन किया। पूना में अंग्रेजों की हत्या की गई। ऐसा घृणित कार्य करने पर अपराधियों को १॥ वर्ष की सजा हुई। १९०५-६ में उनकी लोकप्रियता सर्वत्र पहुंच गई। सन् १९०७ में उन्हें कांग्रेस छोड़नी पड़ी। अगले वर्ष में राजद्रोह के अपराध में ६ वर्ष के लिये निर्वासित किया गया। मांडले जेल में अमर ग्रंथ रत्न 'गीता रहस्य' लिखा। १९१४ में उन्हें छोड़ा गया। एनीबीसेंट द्वारा चलाये गये 'गृह शासन' आन्दोलन को चलाया सन् १९१६ में फिर कांग्रेस में आ मिले। अंग्रेज लेखक शिरोल ने लिखा है कि "वह नये राष्ट्रवादी के महान् पुजारी थे, तथा जनता में द्वेष फलाने वाले सबसे खतरनाक अग्रदूतों में से एक थे, परंतु देशवासियों की दृष्टि में तो सबसे महान् थे, पहले वह महाराष्ट्र के छत्र रहित राजा तथा आगे चलकर सम्पूर्ण देश के बेताज बादशाह कहलाये।" 'स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और इसे मैं लेकर रहूंगा' का नारा देशवासियों को दिया।

पं० जवाहरलाल नेहरू—नेहरूजी का बचपन बड़ी शान-शौकत से व्यतीत हुआ। सन् १९०४ में उच्च शिक्षा के लिये इंगलैंड ले जाये गये। १९१२ में बैरिस्टरी पास की। सन् १९१४ में गोखले की अपील पर इन्होंने प्रवासी भारतीयों की सहायता के लिये ५० हजार रुपये इकट्ठे करके 'दक्षिणी अफ्रीका' भेजे। बाद में 'होम रूल आंदोलन' में भाग लिया। १९१९-२० में अवध के किसानों के साथ कार्य किया। १९२०-२२ में जेल की यातनायें सहीं। नेहरू १९२३ से २७ तक कांग्रेस के मंत्री रहे। १९२८ में औपनिवेशिक स्वराज्य के ध्येय का विरोध किया। सन् १९३०-३२, १९४० और ४२ के आन्दोलनों में भाग लिया। सन् १९३६-३७, १९४६ व १९५१-५२ के चुनावों में कांग्रेस की जीत का श्रेय इन्हीं को है। सन् १९४६ में नेहरू ने प्रथम अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार का निर्माण किया तथा भारत के प्रधान मंत्री बने। नेहरू बाल्य-काल से तेजस्वी व स्पष्टवादी रहे हैं। जोखम में आनन्द आता है। विद्रोह व उग्रता की भावनायें पैतृक हैं। कार्य करने की शक्ति अपरिमित है। नेहरू ने कहा, "सरकार की सारी मशीन किसानों के पैसे से ही चल रही

भविष्य किसानों के हाथ में हैं।" नेहरू के गुणों को राष्ट्रपिता ने भी देख लिया था। महात्माजी ने उनके विषय में कहा था, 'पक्के समाजवादी होने के नाते जवाहरलाल अपने देश के लिए ऐसी वस्तु चाहते हैं, जिसकी व्यवस्था केवल यही देश कर सकता है। वे एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ हैं। उन्होंने अपने आदर्शों को परिस्थितियों के अनुरूप बना लिया है। परन्तु व्यक्तिगत रूप से वे आदर्शवादी हैं और सदैव अपने आदर्शों के अनुसार जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। भारत को गर्व होना चाहिए कि उन्हें नेहरू जैसा व्यक्ति मिला। परन्तु खेद का विषय है कि इस महान् विभूति का स्वर्गवास २७ मई, १९६४ को हो गया। इस महान् क्षति की पूर्ति असम्भव है।

अध्याय ९

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की देन

प्रश्न १—गाँधीजी केवल भारत के नहीं थे वे विश्व के कल्याण के लिए कार्य करते थे। इस सम्बन्ध में अपना मत प्रकट कीजिये।

उत्तर—महापुरुष वास्तव में किसी देश का नहीं अपितु विश्व-कल्याण के दृष्टिकोण से कार्य करते हैं। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो उस व्यक्ति को किसी भी रूप में महापुरुष नहीं कह सकते हैं। ऐसे ही महापुरुषों में महात्मा गांधी एक विशेष स्थान रखते हैं, जिन्होंने सम्पूर्ण मानव-समाज के लिए पथप्रदर्शक के रूप में कार्य किया। उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में ऐसे सिद्धान्तों का निर्माण किया, जिसके द्वारा जन-कल्याण सरलतापूर्वक हो सकता है। महात्मा के सिद्धान्त नवीन नहीं होते हुए भी नवीनता के लिए प्रसिद्ध हैं। इसका सीधा सा अभिप्राय यह है कि उन्होंने प्राचीन सिद्धान्तों को अपनी विलक्षण बुद्धि से इस रूप में रखा, जिसे संसार का अन्य कोई महापुरुष नहीं कर सका।

महात्मा गाँधी के सिद्धान्त—महात्मा गाँधी ने अपने जीवन में सत्य और अहिंसा [illegible] अपनाया जिसका एक मात्र लक्ष्य मानव [illegible]

साधनों के पक्षपाती थे। उन्होंने आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों में भी विकेन्द्रीकरण की नीति को अपनाया। सही अर्थ में देखा जाये तो उनके सिद्धांतों का दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक था। उन्होंने प्रत्येक कार्य बिना किसी जाति भेद को दृष्टिगत रखते हुए किया। उन्हें मानव कल्याण का जनक कहा जा सकता है।

महात्मा गांधी के महान् उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि वे एक ऐसे पथ-प्रदर्शक थे, जिन्होंने मानव कल्याण को दृष्टिगत रखकर ही प्रत्येक सिद्धांत को ग्रहण किया। उनकी गणना संसार के महान् पुरुषों में की जाती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

नोट—महात्मा गांधी के सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या प्रश्न नं० २ में की गई है।

प्रश्न २—महात्मा गाँधी की मानव मात्र को क्या देन है ? संक्षेप में लिखिये।

उत्तर—महात्मा गांधी ने अपने जीवन में केवल एक मात्र लक्ष्य यह रखा कि अधिक से अधिक ऐसे कार्य किये जायें, जिससे जन-कल्याण सम्भव हो सके। महात्मा गांधी ने जितने भी कार्य मानव जाति की उन्नति के लिये किये हैं, उनका वर्णन करना एक सरल कार्य नहीं है, फिर भी उनके सिद्धान्तों की व्यवस्था करने का प्रयास किया गया है।

१. सत्य और अहिंसा का सिद्धान्त—महात्मा गांधी का प्रथम जन कल्याणकारी सिद्धांत सत्य और अहिंसा का है। अधिकतर व्यक्तियों का यह विश्वास था कि राजनीति के क्षेत्र में सत्य और अहिंसा का मार्ग नहीं अपनाया जा सकता है। उन्होंने इस धारणा को निर्मूल कर दिया। उन्होंने भारत का स्वाधीनता संग्राम सत्याग्रह के आधार पर संचालित किया। उनका कहना था कि मानव-हृदय परिवर्तन के लिए अहिंसा ही एक मात्र साधन है। सत्याग्रह उनकी मानव-समाज को सबसे बड़ी देन है। उन्होंने सत्याग्रह का सामूहिक रूप से सफल प्रयोग किया।

२. सर्वोदय के पक्षपती—महात्मा गांधी सर्वोदय सिद्धांत के पक्षपाती थे। उनकी इच्छा एक ऐसे समाज की स्थापना करना था जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को बिना जाति-भेद के उन्नति करने का समान अवसर मिल सके। इस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था में शोषण को कोई स्थान नहीं...

होगा। सर्वोदय-समाज की स्थापना आर्थिक विकेन्द्रीकरण के द्वारा ही सम्भव हो सकती है।

३. हिंसा की नीति का परित्याग—महात्मा गांधी हिंसा के विरोधी थे। उनका कहना था कि राष्ट्रों में आपसी झगड़ों को हल करने के लिए युद्ध और हिंसा की नीति का परित्याग करना चाहिए। विश्व शांति की समस्याओं को हल करने के लिए हिंसा और युद्ध से सब राष्ट्रों को घृणा करनी चाहिये।

४. शुद्ध साधन—महात्मा गांधी का कहना था कि अच्छे लक्ष्य को बना लेना ही काफी नहीं है, यदि उसको प्राप्त करने के लिए शुद्ध साधन नहीं हैं। उन्होंने मानव जाति को यह सन्देश दिया कि अच्छे साधनों के अभाव में लक्ष्य यदि प्राप्त भी कर लिया गया तो वह दूषित होगा। इसलिये महात्मा गांधी ने भारत की स्वाधीनता के लिए सत्याग्रह को ग्रहण किया।

५. ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त—पूंजीपतियों और मजदूरों के मध्य संघर्ष एक प्रमुख समस्या है। इसके लिए महात्मा गांधी ने ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने कहा, "यदि हम धनवानों को समाज की ओर से जो सम्पति उन्होंने जमा कर रखी है उसका ट्रस्टी स्वीकार करलें, यदि उनके हृदय में यह भाव उत्पन्न हो जायें कि मेरी आवश्यकताओं से अधिक जो कुछ मेरे पास है वह मेरा न होकर समाज का है और मैं उसका केवल ट्रस्टी मात्र हूं तो वर्ग संघर्ष का अन्त हो सकता है।" महात्मा गांधी के समालोचकों का कथन है कि कोई भी धनवान अपनी स्वेच्छा से कुछ भी धन समाज को देने के लिए तैयार नहीं होगा। इसके प्रत्युत्तर में गांधीवादी विचारधारा के समर्थकों का कथन है कि भूदान इसका स्पष्ट प्रमाण है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि महात्मा गांधी की मानव समाज को अमूल्य देन है। यही एक मात्र उपाय है जिसके द्वारा विश्व-शांति की समस्या को सरलतापूर्वक हल किया जा सकता है।

प्रश्न ३—महात्मा गांधी ने भारत के लिए जो कुछ विशेष उल्लेख कीजिये।

दृष्टिकोण से किया, परन्तु उनका कार्य-क्षेत्र भारतवर्ष रहा है। वास्तव में देखा जाये तो भारतीयों के सामाजिक जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जिस ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया हो। उन्होंने भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन का संचालक किया परन्तु सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को हल करने के लिए रचनात्मक दृष्टिकोण से नीति का निर्माण किया। महात्मा गांधी ने भारतीयों की जो अमूल्य सेवायें की हैं उनका वर्णन करना एक सरल कार्य नहीं है परन्तु कुछ भी उन्होंने किया है उसकी संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करने का साहस किया गया है।

१. भारत को स्वतन्त्रता दिलाना—महात्मा गांधी का यह विश्वास था कि देश का आर्थिक, सामाजिक और नैतिक विकास उस समय तक सम्भव नहीं हो सकता है, जब तक कि भारत अंग्रेजों की दासता से मुक्त न हो। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन का संचालन सफलतापूर्वक किया और अन्त में भारत स्वतन्त्र हुआ।

२. ग्रामों का विकास—महात्मा गांधी का कहना था, "भारत ग्रामों में रहता है।" भारत की उन्नति के लिए ग्रामों की स्थिति का सुधारना अत्यन्त आवश्यक है। इस कारण उन्होंने खादी और ग्रामोद्योगों के विकास की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया। उन्होंने अखिल भारतीय चर्खा संघ और ग्रामोद्योग मण्डल की स्थापना की। प्रत्येक कांग्रेसी के लिए खादी पहनना अनिवार्य कर दिया गया। इस प्रकार ग्रामों का विकास महात्माजी के जीवन का प्रमुख लक्ष्य था।

३. साम्प्रदायिक एकता—महात्मा गांधी का विश्वास था कि देश की उन्नति के लिए विभिन्न सम्प्रदायों का एक होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर विशेष रूप से बल दिया। प्रारंभ में उन्हें सफलता प्राप्त हुई परन्तु अंग्रेजों की कूटनीति के कारण देश का विभाजन हो गया।

४. धार्मिक सहनशीलता—महात्मा गांधी का कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति में धार्मिक सहनशीलता होनी चाहिये। उनके अनुसार प्रत्येक धर्म अच्छा था। उनकी प्रार्थना-सभा में सभी धार्मिक ग्रंथों से प्रार्थना की जाती थी। यही कारण है कि प्रत्येक धर्म मानने वाला व्यक्ति महात्माजी के प्रति श्रद्धा रखता है।

५. गौ वंश की उन्नति—महात्मा गांधी ने गो वंश का समर्थन दो आधारों पर किया। प्रथम तो गायों से दूध प्राप्त होता है और दूसरे कृषि के लिए बैल प्राप्त होते हैं। उन्होंने गायों की नस्ल सुधारने के लिए गौ सेवा संघ की स्थापना की।

६. हरिजन उद्धार और अस्पृश्यता निवारण—अस्पृश्यता हिंदू समाज का एक कलंक रहा है, जिससे देश की एकता को बहुत हानि पहुँची है। महात्मा गांधी ने अपने जीवन की बाजी लगाकर हरिजनों को हिंदुओं से किसी भी रूप में अलग नहीं होने दिया। उन्होंने हरिजन सेवक संघ की स्थापना की और हरिजन उद्धार का बीड़ा उठाया। उन्होंने हरिजनों को हिन्दुओं के समान ही उच्च स्थान प्रदान कराने की कोशिश की। उन्हें समान सामाजिक सुविधाएँ दिलवाईं। हरिजनों को सार्वजनिक स्थानों जैसे—मन्दिर, होटल आदि में प्रवेश करने का अधिकार प्राप्त हो गया। वर्तमान भारत सरकार ने महात्मा गांधी के स्वप्न को सरकार रूप प्रदान कर दिया। अस्पृश्यता एक्ट का निर्माण कर छूआ-छूत एक कानूनी अपराध घोषित किया गया। वे भंगी-बस्तियों में ही ठहरते थे और अक्सर कहा करते थे कि भारत का प्रथम राष्ट्रपति भंगी की लड़की को होना चाहिये।

७. साधारण जीवन व्यतीत करना—महात्मा गांधी ने भारतवासियों को समझाया कि उनका देश निर्धन है। इसलिए हमारा यह कर्त्तव्य है कि हमें कम से कम आवश्यकताएँ रखनी चाहिएँ। उन्होंने स्वयं साधारण जीवन व्यतीत किया और प्रत्येक कार्य कर्त्ता को सरल और साधारण जीवन व्यतीत करने के लिये कहा। उन्होंने नैतिकता का विशेष रूप से समर्थन किया।

८. बुनियादी शिक्षा-प्रणाली—महात्मा गांधी ने आधुनिक शिक्षा प्रणाली के दोषों को दृष्टिगत रखते हुए बुनियादी शिक्षा का समर्थन किया। उनका कहना था कि शिक्षा केवल पुस्तकीय नहीं होनी चाहिए। अपितु उन्हें शिक्षा के काल में कुछ उद्योगों की शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए। इसलिए उन्होंने हिंदुस्तानी तालीमी संघ की स्थापना की। वर्तमान शिक्षा शास्त्रियों ने इसे हमारी राष्ट्र-शिक्षा का आवश्यक अङ्ग मान लिया है।

९. राष्ट्र-भाषा का प्रचार—महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के लिए राष्ट्र-भाषा की आवश्यकता को महसूस किया। उन्होंने सरल हिंदी अर्थात् हिंदुस्तानी को राष्ट्र-भाषा बनाने पर जोर दिया। इस कार्य को वास्तविक रूप प्रदान करने के लिए राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति का निर्माण किया। आज भी भाषा सम्बंधी झगड़े हमारे देश में सब ओर हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में हमें महात्माजी की दूरदर्शिता को स्वीकार करना ही पड़ता है।

१०. सामाजिक क्रांति के पिता—महात्मा गांधी ने भारत के सामाजिक जीवन के अनेक दोषों जैसे बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, शराब-बन्दी आदि कुप्रथाओं का अंत करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाये। उन्होंने जाति-भेद का विरोध किया। स्त्रियाँ भी उनकी प्रेरणा से राजनैतिक क्षेत्र में कूदीं और सक्रिय रूप से भाग लिया।

११. प्राकृतिक चिकित्सा को प्रोत्साहन—महात्मा गांधी ने स्वयं प्राकृतिक चिकित्सा का अध्ययन किया और इसका प्रयोग भी किया। यही कारण है कि इस समय सरकार द्वारा प्राकृतिक शिक्षा पर भी विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है। उन्होंने अच्छे खाद्य पदार्थों पर विशेष रूप से ध्यान दिया।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि महात्मा गांधी ने भारतीयों के जीवन को प्रत्येक क्षेत्र में ऊँचा उठाने के लिए भरसक प्रयत्न किये। उन्होंने राष्ट्रीय जीवन के किसी भी अंग की कोई अवहेलना नहीं की। उन्होंने प्रत्येक समस्या का अध्ययन किया और उसका हल ढूंढ़ा। यही कारण है कि समस्त देश उनको श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

प्रश्न ४—हम भारतवासी महात्मा गांधी को राष्ट्र-पिता क्यों कहते हैं? लिखिये।

उत्तर—भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी सामाजिक क्रांति के जनक महात्मा गांधी भारतीय राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र में सर्वप्रथम रहे। भारतीय स्वतंत्रता के इतिहास में आपका स्थान महत्वपूर्ण है क्योंकि तिलक की मृत्यु के बाद आपने भारतीय राजनैतिक आंदोलन को एक नया मोड़ दिया। आपके प्रयत्नों से ही भारत स्वतंत्र हुआ तथा

भारत में नव चेतना का विकास हुआ। हम महात्मा गांधी को राष्ट्रपिता इसलिए कहते हैं कि उनके कार्य भारतीय जीवन के स्तर को प्रभावित करते हैं। निम्नलिखित कारणों से महात्मा गांधी को राष्ट्रपिता कहते हैं:—

(अ) स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए शांति पूर्ण ढंग द्वारा राष्ट्रीय आंदोलन चलाया। सत्य और अहिंसा का राजनीति में सफल प्रयोग किया। इसी आधार पर सत्याग्रह आंदोलन को संचालित किया।

(ब) उन्होंने सामाजिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किए। उन्होंने सामाजिक दोषों को दूर करने के लिए रचनात्मक कार्य किया। उन्होंने जाति भेद का विरोध किया। समानता के सिद्धांत पर विशेष बल दिया। उन्होंने नशा बंदी आंदोलन संचालित किया। यही कारण है कि उन्हें सामाजिक क्रांति का जनक कहा जाता है।

(स) सत्ता के दुरुपयोग को रोकने के लिये राजनैतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण का समर्थन किया अर्थात् पंचायती राज्य की स्थापना पर विशेष बल दिया। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की नीति उनके प्रयत्नों का ही परिणाम है।

(द) देश के आर्थिक विकास के लिये आर्थिक विकेन्द्रीकरण की नीति को अपनाकर पूंजीवादी और समाजवादी व्यवस्था के दोषों को दूर किया।

(प) धार्मिक क्षेत्र में सहनशीलता की नीति को अपनाकर राष्ट्रीय विकास में अकथनीय सहयोग प्रदान किया।

(म) शिक्षा के क्षेत्र में पाश्चात्य शिक्षा के दोषों को दूर करके बुनियादी शिक्षा को जन्म दिया, जिसे आज राष्ट्रीय शिक्षा के रूप में मान्यता दे दी गई है।

महात्मा गांधी की महान् सेवाओं को देखते हुये स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने भारतीयों के जीवन के प्रत्येक अंश को महानतापूर्वक अध्ययन कर उसका समाधान हमारे सम्मुख रखा। देश का कोई भी नेता इतने महान् कार्य न कर सका। यही कारण है कि भारतवासी उन्हें प्यार सम्मान से "बापू" कहते हैं। समस्त देशवासी उनकी सेवाओं को ध्यान में रखकर श्रद्धांजलियां अर्पित करते हैं।

प्रश्न ५—महात्मा गांधी ने राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए जो आंदोलन किया उसके साथ समाज सुधार तथा अन्य रचनात्मक कार्यों को क्यों हाथ में लिया ?

उत्तर—इसके उत्तर के लिये प्रश्न नं० ३ पढ़िये।

प्रश्न ६—सर्वोदय के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं ? संक्षेप में लिखिये।

उत्तर—सर्वोदय के जन्मदाता महात्मा गांधी थे। उनका कहना था कि मानव जीवन को सुखी बनाने के लिए सर्वोदय समाज की स्थापना करना अत्यन्त आवश्यक है। उनकी मृत्यु के पश्चात् आचार्य विनोबा भावे इस विचाराधारा को फैलाने के लिये भरसक प्रयत्न कर रहे हैं।

१. सर्वोदय का अर्थ—सर्वोदय शब्द का अर्थ है सब का उदय अर्थात् सब का विकास। समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को समान रूप से उन्नति करने का अवसर प्राप्त हो। जिस प्रकार हाथी के पैर में सब के पैर समा सकते हैं, ठीक उसी रूप में सर्वोदय के व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और संसार का सभी कल्याण निहित है।

२. सर्वोदय के सिद्धांत—गांधीजी के अनुसार सर्वोदय के निम्नलिखित सिद्धांत प्रमुख हैं:—

(क) सबके हित में ही अपना हित निहित है।

(ख) वकील, डाक्टर और नाई के कार्य की समान कीमत होनी चाहिए क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आजीविका का पूर्ण रूप से अधिकार है।

(ग) परिश्रमी व्यक्ति का जीवन ही सच्चा जीवन है।

(घ) हृदय परिवर्तन से लिये सर्वोदय ही एक मात्र साधन है।

(ङ) सब व्यक्ति समान हैं चाहे वे किसी भी धर्म के मानने वाले हों और किसी भी जाति से सम्बन्धित हों।

(च) सर्वोदय मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक उन्नति का समर्थक है।

(छ) यह दया, प्रेम और सहयोग के सिद्धांत पर आधारित है।

(ज) रचनात्मक कार्य जैसे ग्रामोद्योग का विकास साम्प्रदायिक एकता, आर्थिक समानता स्थापित करना आदि इसके प्रमुख अंग हैं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो गया है कि सर्वोदय एक मानववादी विचारधारा है। इसके द्वारा ही विश्व-शांति की समस्या को हल किया जा सकता है।

प्रश्न ७—सत्याग्रह का क्या अर्थ है संक्षेप में बतलाइये ?

उत्तर—सत्याग्रह महात्मा गाँधी की मानव जाति को एक अमूल्य देन है जिसे संसार का कोई महापुरुष नहीं दे सका है। महात्मा गाँधी का कहना था कि जीवन में प्रत्येक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अच्छे साधन होने चाहिए अन्यथा यदि उद्देश्य की प्राप्ति हो भी जाये तो वह निरर्थक है। वे सत्य और अहिंसा के प्रबल पक्षपाती थे और इसके द्वारा ही प्रत्येक समस्या को हल करना चाहते थे।

सत्याग्रह का अभिप्राय—सत्याग्रह दो शब्दों से मिलकर बना है। सत्य+आग्रह अर्थात् सत्य के द्वारा किया हुआ अनुरोध। महात्मा गाँधी ने भारत का राष्ट्रीय आंदोलन इसी आधार पर संचालित किया जो हिंसात्मक साधनों से परे था, सत्याग्रह ही एक मात्र ऐसा साधन है, जिसके द्वारा हृदय परिवर्तन संभव हो सकता है। सत्य के बल पर प्राप्त विजय ही सच्ची और स्थायी विजय है। हिंसात्मक आधार पर किया हुआ कोई भी कार्य स्थायी नहीं रह सकता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि महात्मा गाँधी ने राजनैतिक क्षेत्र में भी सत्य और अहिंसा के आधार पर सत्याग्रह संचालित किया और अंग्रेजों को भारत छोड़कर जाना पड़ा। उन्होंने अधिकतर व्यक्तियों की इस धारणा को राजनैतिक क्षेत्र में नैतिकता का कोई मूल्य नहीं गलत सिद्ध कर दिया। प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन में उच्च लक्ष्य की प्राप्ति के लिए शुद्ध साधनों का प्रयोग करना चाहिए। अन्याय और हिंसा का सत्याग्रह में कोई स्थान नहीं है।

अध्याय १०

सर्वोदय और भूदान

प्रश्न १—सर्वोदय से आप क्या समझते हैं? समझाकर लिखिए।

उत्तर—सर्वोदय के जन्मदाता हमारे राष्ट्र-पिता महात्मा गांधी थे। उन्होंने कहा था कि मानव जाति को सुखी बनाने का एक मात्र उपाय सर्वोदय का सिद्धांत है। महात्मा गांधी के स्वर्गवास होने के पश्चात् आचार्य विनोबा भावे के नेतृत्व में सर्वोदय आन्दोलन शीघ्र गति से आगे बढ़ रहा है। वे सर्वोदय समाज की स्थापना के लिए प्रयत्नशील हैं।

१. सर्वोदय का अभिप्राय—सर्वोदय का अर्थ उसका उदय है। सम्पूर्ण समाज की उन्नति इसका एक मात्र लक्ष्य है। यदि समाज में कुछ व्यक्ति धनवान हैं, तो इसका यह अभिप्राय नहीं है कि संपूर्ण समाज पूर्ण रूप से सुखी है। सर्वोदय का अर्थ है सबकी भलाई में ही अपनी भलाई निहित है। सर्वोदय एक ऐसा शब्द है जो उदय, उन्नति, प्रगति अथवा उत्कर्ष को प्रत्येक व्यक्ति में देखना चाहता है। उन्नति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज की होनी चाहिए, अन्यथा ऐसी प्रगति का कोई महत्व नहीं है। यदि हमारे पड़ौस में हाहाकार मच रहा हो, तो हम किस प्रकार चैन की नींद सो सकते हैं अथवा सुख की सांस ले सकते हैं। जिस प्रकार एक हाथी के पैर में सबके पैर समा जाते हैं ठीक उसी प्रकार सर्वोदय में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और संसार का हित निहित है। सर्वोदय का प्रमुख लक्ष्य यह है कि प्रतियोगिता के स्थान पर सहयोग के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को व्यक्तिगत और सामूहिक उन्नति करने का अवसर प्राप्त हो। समाज में ईर्ष्या, द्वेष और किसी भी प्रकार की असमानता नहीं होनी चाहिये।

संक्षेप में, सर्वोदय का अभिप्राय यह है कि सबका कल्याण, शोषण का अभाव और प्रत्येक व्यक्ति की समाज में समान प्रतिष्ठा हो, चाहे वह वकील हो, डॉक्टर हो, चपरासी हो, हरिजन हो। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आजीविका के लिए कार्य करता है। गांधीजी ने सर्वोदय की व्याख्या निम्न शब्दों में की है। "सबके हित में अपना हित, आजीविका का सबको

समान अधिकार और प्रत्येक को समान रूप से उन्नति करने का अवसर प्राप्त हो।"

प्रश्न २—महात्मा गाँधी द्वारा निर्धारित सर्वोदय सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।

उत्तर—महात्मा गांधी ने सर्वोदय के निम्नलिखित सिद्धान्त निर्धारित किये हैं—

(१) सबके हित में अपना हित निहित है। समाज एक वृक्ष के समान है और हम सब उसकी शाखाएं हैं। हमें किसी भी रूप में एक दूसरे को अपना शत्रु नहीं अपितु मित्र समझना चाहिए।

(२) प्रत्येक व्यक्ति को आजीविका प्राप्त करने का समान अवसर प्राप्त हो और समान मूल्य हो। समाज में वकील, डॉक्टर, धोबी, नाई और लोहार के कार्य में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए परिश्रम करता है।

(३) परिश्रम ही सच्चा जीवन है और किसी भी व्यक्ति को इससे मुख नहीं मोड़ना चाहिए अन्यथा मानव जीवन व्यर्थ है।

(४) सर्वोदय में सबका उदय निहित है, जिसमें किसी को कोई हानि नहीं होती है। प्रत्येक वर्ग को एक दूसरे का सहायक बनना चाहिए।

(५) हृदय परिवर्तन सर्वोदय का प्रमुख साधन है। यही मानव क्रांति का मूल साध. है। मानव के सद्गुणों में सर्वोदय का आत्मविश्वास है।

(६) सम्पूर्ण सम्प्रदायों के प्रति प्रेम और सहानुभूति का सन्देश सर्वोदय ही है।

(७: सर्वोदय शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति का समान रूप से समर्थक है।

(८) सर्वोदय प्रेम, सेवा और त्याग का सिद्धान्त है।

(९) रचनात्मक कार्य करना सर्वोदय का प्रमुख लक्ष्य है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत साम्प्रदायिक एकता, छूआ-छूत, मांस, मद्यनिषेध, खादी-ग्रामोद्योग, (नयादी शिक्षा और आर्थिक समानता स्थापित करना शामिल है।

(१०) महात्मा गांधी 'अधिकतम जनता का अधिकतम हित' के सिद्धांतों के समर्थक नहीं थे। उनका कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति को अधिकतम सुख प्राप्त होना चाहिए। सर्वोदय के द्वारा ही इस लक्ष्य को पूरा किया जा सकता है।

महात्मा गांधी के द्वारा निर्धारित सर्वोदय सिद्धांत की व्याख्या करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ईर्ष्या, द्वेष, वर्ग-भेद आदि संकुचित भावना को नष्ट कर कल्याणकारी समाज की स्थापना करना सर्वोदय का प्रमुख लक्ष्य है। इस सर्वोदय सिद्धांत के द्वारा ही मानव-जीवन को सुखी बनाया जा सकता है।

प्रश्न ३—भूदान यज्ञ अथवा भूदान आन्दोलन पर एक छोटा लेख लिखिए।

उत्तर—१. भूदान का अर्थ और उसका क्षेत्र—भूदान का अर्थ है कि अपनी इच्छाओं से भूमि का दान करना। दूसरे शब्दों में भूस्वामियों से भूमि प्राप्तकर भूमिहीन किसानों में उसका वितरण करना है। दान का अभिप्राय भिक्षा दान नहीं है। यह एक वृहत्तर श्लोक का संक्षिप्त भाग है जिसका अभिप्राय है 'समान वितरण'। भूदान विकेन्द्रीकरण का सर्वश्रेष्ठ दर्शन है। भूदान आंदोलन का कार्य-क्षेत्र केवल भू... तक ही सीमित नहीं है अपितु जिनके पास सम्पत्ति है, उनके त्याग करने की माँग करता है। भूदान के जन्मदाता आचार्य विनोबा भावे हैं। उनका कहना है, "प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आय का छठा भाग दान में देना चाहिये।" बुद्धिमान और श्रमदान भी इसका ही एक अंग है। भूदान य... में धनी और निर्धन सभी से मांगा जाता है।

२. भूदान आन्दोलन की प्रेरणा और उसका प्रारम्भ

भूदान आंदोलन के प्रणेता आचार्य विनोबा भावे हैं। इस आंदोलन का प्रारम्भ अप्रेल १९५१ में दक्षिण के तैलंगना प्रदेश में हुआ, जहाँ कृ... आंदोलनों ने उग्ररूप धारण कर लिया था। एक दिन प्रार्थना सभा की समाप्ति के पश्चात् एक निर्धन भूमिहीन कृषक ने उठकर यह कहा कि यदि हमें थोड़ी सी भूमि प्राप्त हो जावे, तो हम उस पर कृषि कर आर... निः... जीवन व्यतीत कर सकते हैं। इस पर विनोबा जी ने पूछा कि तुम भू...

हीन मजदूरों को कितनी भूमि की आवश्यकता है। उसने कहा कि हमें ८४ एकड़ भूमि चाहिए। अंत मे विनोबा जी सोच ही रहे थे कि क्या उत्तर दें कि इसी मध्य उस ग्राम के मज्जन श्री रामचन्द्र रेड्डी ने १०० एकड़ भूमि देने की घोषणा की। इस प्रकार भूदान आंदोलन का श्री गणेश हुआ।

३. भूदान आन्दोलन के उद्देश्य—भूदान आंदोलन के उद्देश्य की व्याख्या करते हुए संत विनोबा जी ने बताया कि समाज के न्यायोचित संगठन से भूमि पर सबका अधिकार होना चाहिए। इस कारण हम किसी से भिक्षा नहीं मांगते हैं, अपितु भूमि का वह भाग मांगते हैं जो न्याय की दृष्टि से निर्धन का भाग है। इस आंदोलन का प्रमुख लक्ष्य भूमि के न्यायपूर्ण वितरण को शांतिपूर्ण ढग से परिवर्तित करना है। उनका लक्ष्य ५ करोड़ भूमि एकत्रित करना था, जिसमें प्रत्येक भूमि-हीन कृषक को ५ एकड़ भूमि बांटी जा सके। इसका प्रमुख लक्ष्य समाज के नैतिक स्तर में परिवर्तन करना है जिससे प्रत्येक व्यक्ति अपनी सम्पत्ति को अपनी न समझकर समाज की समझे और स्वयं को उसका ट्रस्टी समझे।

४. भूदान आन्दोलन की सफलता—आचार्य विनोबा भावे देश के विभिन्न भागों में पैदल यात्रा कर रहे हैं। उन्हें प्रत्येक स्थान पर कुछ न कुछ भूमि अवश्य प्राप्त हुई है। उन्हें १९५९ तक ४४ लाख एकड़ भूमि प्राप्त हुई है, जिसमें से ४.८२ लाख एकड़ भूमि वितरित की जा चुकी है और सवा दो लाख परिवारों को इससे लाभ हो चुका है। विनोबा जी को ४५७२ ग्रामों से भूमि दान मे मिल चुकी है।

५. भूदान आन्दोलन का महत्व—स्वतन्त्र भारत में भूदान आन्दोलन का एक विशेष स्थान है। भारत एक कृषि प्रधान देश अवश्य है, परन्तु भूमि का विभाजन ठीक नहीं हैं। एक व्यक्ति के पास तो इतनी अधिक भूमि है कि वह उसकी ठोक ढंग से व्यवस्था न कर पाता है, तो दूसरी ओर ऐसे कृपक हैं जिनके पास अपने परिवार के भरणपोषण के लिए भूमि नहीं है। कुछ कृषक तो पूर्णरूप से भूमिहीन हैं। भूमि का असंगत और अन्यायपूर्ण वितरण ही आर्थिक विपमता का प्रमुख कारण है। भूदान यज्ञ के द्वारा ही शांतिपूर्ण ढंग से अधिक विपमता को समाप्त किया जा

सकता है। इसके द्वारा ही प्रेम और मैत्री का विस्तार किया जा सकता है। यदि यह आंदोलन पूर्णरूप से सफल हो गया, तो भारत की स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हो जायेंगे।

प्रश्न ४—भूदान आन्दोलन की तर्क सहित आलोचना कीजिए।

उत्तर—भूदान आंदोलन भी आज का एक विवादग्रस्त विषय बना हुआ है। कुछ व्यक्तियों की दृष्टि में तो यह सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में सहायक है, तो कुछ का कहना है कि यह कृषि के विकास में सबसे बड़ी बाधा है। ऐसी स्थिति में दोनों पक्षों का अध्ययन करना अनिवार्य हो जाता है। बहुत से व्यक्तियों ने इसकी कटु आलोचना की है। यह आलोचना निम्न प्रकार है:—

१. उपज कम हो जायेगी—इसके विरोधियों का कथन है कि भारतीय कृषक के पास छोटी जोत है। इस भूदान आंदोलन के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के पास पांच एकड़ भूमि होनी चाहिए। ऐसा करने से कृषि की जोत और भी कम हो जायगी, जिससे उपज पहले की अपेक्षा और भी कम हो जायेगी। इसके उत्तर में विनोबा जी का कथन है कि आज तो कृषक भूमि पर मजदूर के रूप में कार्य करता है इस कारण उसे कोई रुचि नहीं है। यदि उसे भूमि का स्वामी बना दिया जायेगा, तो वह जी तोड़कर परिश्रम करेगा, जिससे पैदावार पहले की अपेक्षा बढ़ जावेगी।

२. अच्छी भूमि-दान में प्राप्त नहीं होती है—इस भूदान आंदोलन के विरोधियों का कथन है कि कोई भी व्यक्ति दान में अच्छी भूमि नहीं देता है। वह बंजर भूमि देता है। यह मान लेना भी अनुचित और असम्भव है कि दान में सभी बेकार भूमि प्राप्त हुई। अधिकतर भूमि कृषि योग्य प्राप्त हुई है और कुछ भूमि ऐसी है जिस पर परिश्रम कर उसे कृषि के योग्य बनाया जा सकता है। अतः यह आलोचना भी तर्क रहित प्रतीत होती है।

३. कृषि के क्षेत्र में वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग असम्भव—प्रो० गाडगिल ने भारतीय कृषि अर्थशास्त्र समिति के अध्यक्षीय भाषण देते हुए कहा था कि कृषि के विकास के लिए नवीनतम और वैज्ञानिक

साधनों का प्रयोग करना चाहिए। यह बड़े फार्मों पर ही सम्भव हो सकता है। भूदान के समर्थकों के अनुसार जब प्रत्येक के पास केवल पाँच एकड़ भूमि होगी, तो वहां पर वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग असम्भव है। देश की उन्नति के लिए भूमि का अधिक से अधिक उपयोग किस प्रकार किया जायेगा। भूदान आंदोलन में इसकी अवहेलना की गई है। भूमिहीन कृषकों को थोड़ी-सी भूमि देकर भविष्य के लिए सुधार के मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न करना है।

४. **स्वामित्व की भावना का जन्म**—भूदान आंदोलन के अनुसार प्रत्येक कृषक भूमि का स्वामी बन जावेगा। यदि सरकार के द्वारा कृषि विकास के लिए कोई योजना बनाई गई तो स्वामित्व की यह भावना उन्नति के मार्ग में बाधक सिद्ध होगी। वह किसी भी मूल्य पर अपनी भूमि छोड़ने के लिए तैयार नहीं होगा।

५. **भूस्वामियों का कड़ा विरोध**—ऐसे भूस्वामी जिन्होंने भूमिदान के रूप में दी है, उनके हृदय में पुण्य के भाव जागृत होंगे और यदि भविष्य में भूमि सुधार सम्बन्धी कोई योजना बनाई गई जिसके अन्तर्गत यदि उनकी भूमि लेने की आवश्यकता पड़ी तो वे डटकर उसका विरोध करेंगे, क्योंकि उनमें यह भावना होगी कि हम तो स्वेच्छा से भूमि का त्याग कर चुके हैं।

६. **आलोचना का उत्तर**—आचार्य विनोबा भावे ने आलोचना का उत्तर देते हुए कहा कि छोटे खेतों से किसी प्रकार की हानि नहीं होगी और उसी ढंग से कार्य चलता रहेगा। उनका कहना है कि "मैं गाँव वालों के हृदय के बटवारे को भूमि के बटवारे से अधिक भयंकर मानता हूँ।" भूमि के सुधार और समाजवाद का विस्तार भी इसके द्वारा सम्भव हो सकेगा। भूदान आंदोलन का आधार स्पष्ट है कि भूमि पर किसी व्यक्ति का अधिकार नहीं है, अपितु यह तो एक सामाजिक सम्पत्ति है। भूमि का दान नहीं अपितु सम विभाजन है। आर्थिक दृष्टिकोण से जो आरोप भूदान पर लगाये गये हैं, उनका उत्तर विनोबा जी ने ग्रामदान चलाकर दिया है। इस योजना में गाँव की सारी भूमि गाँव की होती है। उसका उपयोग सहकारी कृषि के रूप में किया जा सकता

है। प्रो० गाडगिल ने स्वयं स्वीकार किया है कि "वर्तमान परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए भूदान आंदोलन में न कोई हानि है, न कोई लाभ है।"

इन सब तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए इसे मानने से इनकार नहीं किया जा सकता है कि भूदान एक नैतिक आंदोलन है। सम्पत्ति दान आंदोलन भी इसके अन्तर्गत ही चलाया गया है। इस प्रकार समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिये भूदान एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसे आचार्य विनोबा भावे ने दृढ़तापूर्वक उठाया है।

तीसरा भाग

आज का भारत

अध्याय १

भारत लोक कल्याणकारी राज्य के आदर्शों की ओर

प्रश्न १—भारत में लोक कल्याणकारी राज्य के आदर्शों को किस रूप में अपनाया गया है? ऐसे राज्य के क्या कार्य होते हैं?

उत्तर—स्वतन्त्रता के बाद भारत में ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित करने की कोशिश की गई जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से कार्य करता हुआ अपना पूर्ण विकास कर सके। राज्य अपना क्षेत्र सीमित न रखते हुये नागरिक जीवन को उन्नत करने के लिये सब तरह से तत्पर रहता है। नागरिक को सामाजिक समनता, आर्थिक उन्नति, मानसिक एवं शारीरिक उन्नति के लिये साधन प्रदान करना राज्य का कर्त्तव्य है। राज्य के प्रत्येक अंग को प्रत्येक प्रकार की सुविधायें हर समय देने को तत्पर राज्य ही वास्तव में लोक कल्याणकारी राज्य है।

१. लोक कल्याणकारी राज्य के कार्य—लोक कल्याणकारी राज्य के कार्य निम्नलिखित हैं:—

(क) देश की एकता को स्थापित रखते हुये राष्ट्रीयता की भावनाओं का विकास करना राज्य का प्रमुख कर्त्तव्य है। भारतीय संविधान द्वारा एक नागरिकता, राष्ट्रभाषा एवं संघात्मक संविधान होते हुये भी एकात्मक

शासन व्यवस्था को कायम रखना राष्ट्रीय एकता के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किया गया है।

(ख) भारतीय संविधान द्वारा सर्वप्रभुत्वसम्पन्न राज्य की स्थापना की गई है एवं भारत ने राष्ट्र मण्डल का सदस्य होते हुये भी अपनी राजनैतिक स्वतंत्रता को कायम रखा है।

(ग) स्वतंत्रता का बिना अधिकारों के कोई मूल्य नहीं। सामाजिक जीवन का पूर्ण विकास करने की दृष्टि से समानता के अधिकार द्वारा सामाजिक असमानताओं को दूर कर दिया गया है।

(घ) सभ्यता एवं संस्कृति की उन्नति के लिए भारतीय विधान निर्माताओं ने नागरिक को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की है।

(ङ) भारतीय नागरिक को अपनी इच्छानुसार अपना जीवन यापन करने, उद्योग धंधा करने एवं अपनी सम्पत्ति को अपने पास रखने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की है।

लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना एवं भावी भारत की उन्नति को ध्यान में रखते हुये भारत विधान निर्माताओं ने ऐसे सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है जिससे आर्थिक समृद्धि एवं समानता स्थापित हो सके। भारत में राज्य की तरफ से शिक्षा, चिकित्सा एवं समाज की सुरक्षा संबंधी अन्य प्रसाधनों द्वारा भारतीय नागरिक को पूर्ण सुख और समृद्धि देने का प्रयत्न किया है। प्रत्येक भारत का नागरिक स्वतंत्र भारत में सम्मान एवं स्वतन्त्रता के साथ अपना जीवन व्यतीत कर सकता है।

प्रश्न २—किन अर्थों में भारत का संविधान लोकतंत्रीय आदर्शों की पूर्ति करता है ?

उत्तर—प्रजातंत्र शासन प्रणाली में 'प्रजा का प्रजा के हित में' प्रजा द्वारा शासन होता है और किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रहता है। स्वयं प्रजा स्वयं के शासन के लिये तत्पर रहती है, इसलिये लोगों में हमेशा राजनैतिक चेतना मौजूद रहती है।

भारतीय संविधान द्वारा लोकतांत्रिक आदर्शों की पूर्ति करने के लिये निम्नलिखित व्यवस्था की गई:—

१. मौलिक अधिकार--भारतीय नागरिकों को समानता, स्वतंत्रता, सम्पत्ति, शिक्षा एवं सांस्कृतिक और शोषण के विरुद्ध अधिकार दिये गये। साथ ही यह भी व्यवस्था की गई कि अगर नागरिकों को मूल अधिकारों पर किसी प्रकार का हस्तक्षेप किया गया तो भारतीय नागरिक स्वतंत्र न्यायालय की शरण ले सकते हैं।

२. पृथक्करण के सिद्धांतों को अपनाना—भारतीय संविधान द्वारा कार्यपालिका, न्यायपालिका एवं विधान मण्डल को अलग २ रखा गया है जिससे नागरिक स्वतन्त्रता में बाधा उत्पन्न न हो।

३. वयस्क मताधिकार—भारतीय संविधान द्वारा बिना किसी भेद-भाव के प्रत्येक २१ वर्ष के नागरिक को मत देने का अधिकार दिया है एवं साथ ही प्रत्येक भारतीय नागरिक प्रत्येक पाँच वर्ष बाद अपने प्रतिनिधित्व के लिये चुनाव लड़ सकता है। इस प्रकार उसमें राजनैतिक चेतना सदैव विद्यमान रहती है।

प्रश्न ३—स्वतन्त्र भारत के संविधान की क्या विशेषताएँ हैं?

उत्तर—१५ अगस्त, सन् १९४७ को हमारा देश अंग्रेजी दासता से मुक्त हुआ और स्वतन्त्रता प्राप्त की। अन्तरिम सरकार के निर्माण के काल में ही संविधान निजी सभा का संगठन किया गया। इस सभा में कांग्रेस को २०५ और मुस्लिम लीग को ७३ स्थान प्राप्त हुये, परन्तु मुस्लिम लीग के सदस्यों ने इसमें भाग लेने से इन्कार कर दिया। ९ दिसम्बर, १९४६ को इसका प्रथम अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। संविधान सभा के अध्यक्ष हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद चुने गये थे। २६ नवम्बर, १९४९ को भारत का नवीन संविधान स्वीकार कर लिया गया। रावी नदी के तट पर कांग्रेस जन ने जो प्रतिज्ञा २६ जनवरी, १९३० को की थी, उसे साकार रूप देने के लिए २६ जनवरी १९५० को हमारा नवीन संविधान लागू किया गया।

संविधान की मुख्य विशेषताएँ—

१. लोकतन्त्रात्मक गणराज्य—संविधान की प्रस्तावना में उनके उद्देश्य को बताते हुए कहा है, "हम भारत के लोग, भारत को एक [illegible] सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए

तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज २६ नवम्बर, १९४९ ई० से एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत अधिनियामित तथा आत्मार्पित करते हैं।

उपर्युक्त पंक्तियों से यह प्रकट होता है कि राज्य की सर्वोच्च सत्ता प्रजा में निहित है। इसके गणात्मक रूप से प्रकट है कि राज्य का मुख्य अधिकारी वंश क्रमानुगत राजा न होकर प्रजा द्वारा चुना हुआ राष्ट्रपति होगा। ब्रिटिश कॉमनवेल्थ का सदस्य रहते हुये भी भारत एक गणराज्य है। उपर्युक्त भूमिका से इसका लोकतन्त्रात्मक रूप भी स्पष्ट रूप से झलकता है। इस प्रकार नये संविधान में लोकतन्त्रात्मक गणराज्य की स्थापना की गई है।

२. **संसार का सबसे वृहत् लिखित विधान**—भारत का संविधान एक बहुत ही वृहद् और लिखित संविधान है। इसके अन्दर ३९५ धारायें और ८ परिशिष्ट हैं। इसमें प्रत्येक उपबन्ध की व्याख्या की गई है तथा प्रत्येक आवश्यक बात को लिखित रूप में दे दिया गया है।

३. **न्यायालयों के संगठन में एकता (Unity in the Organization of Courts)**—इसी वाक्य को ध्यान में रखते हुये न्यायालयों में एकता को स्थान दिया गया है। भारत के सब न्यायालय सुप्रीम कोर्ट के आधीन होंगे तथा सम्पूर्ण देश के लिए दीवानी एवं फौजदारी कानून समान होंगे तथा भिन्न २ राज्यों में इस दिशा में किसी भी प्रकार का भेद-भाव व्यवहार में नहीं लाया जा सकेगा।

४. **वयस्क मताधिकार**—इस नवीन संविधान में वयस्कों के मताधिकार को भी महत्व दिया गया है। भारत का प्रत्येक वयस्क किसी को भी अपनी इच्छानुसार मत देने का अधिकार रखता है। किन्तु उसकी आयु २१ वर्ष से अधिक होनी चाहिये। जबकि अब तक व्यक्तियों को शिक्षा, आयकर भूमि ...द के आधार पर मत देने के अधिकार प्राप्त थे।

५. लौकिक राज्य—संविधान ने भारत को लौकिक राज्य बनाया है। इसका एकमात्र कारण यह है कि भारतीय राज्य धर्म के विषय में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगा। इसलिए सब धर्म समान होंगे तथा संविधान के द्वारा धर्म में स्वतन्त्रता प्रदान करदी गई है। भारत का निवासी किसी भी धर्म को मान सकता है। उसमें किसी भी प्रकार की रुकावट नहीं डाली जा सकती। इसके साथ ही प्रत्येक भारतीय को भारत की नागरिकता प्रदान की गई है। चाहे वह किसी भी धर्म का अनुयायी क्यों न हो।

६. इकहरी नागरिकता—अधिकतर संघीय शासन में दोहरी नागरिकता देखने को मिलती है, एक तो सम्पूर्ण संघ की नागरिकता एवं दूसरी राज्य विशेष की नागरिकता, जैसा कि संयुक्त राज्य अमेरिका में है। किन्तु समस्त भारतीय यूनियन के लिए केवल मात्र एक ही नागरिकता है अर्थात् यूनियन नागरिकता। राज्य की कोई नागरिकता नहीं है। प्रत्येक भारत निवासी चाहे वह किसी भी राज्य में रह रहा हो उसे नागरिकता के समान अधिकार प्राप्त हैं।

७. राज्यों को संघ से संबंध विच्छेद करने के अधिकार का अभाव—इस संविधान में संघ से सम्बन्ध तोड़ने का अधिकार नहीं है। कोई भी राज्य संघ से संबन्ध विच्छेद नहीं कर सकता। इस अधिकार के प्रदान न होने से केन्द्रीय शासन सुदृढ़ रह सकेगा अतः संविधान में इस बात की ओर ध्यान दिया गया है।

८. एकात्मक तथा संघात्मक—इस संविधान की ८ वीं विशेषता यह है कि भारतीय संविधान का रूप यद्यपि संघीय है परन्तु समय और परिस्थितियों के अनुसार यह एकात्मक भी किया जा सकता है। यह संविधान कुछ ऐसा भी बनाया गया है कि सामान्य अवस्था में तो केन्द्रीय सरकार इसके अनुसार संघात्मक रूप से काम करेगी किन्तु संकटकालीन अवस्था में अथवा अन्य परिस्थिति उत्पन्न होने पर केन्द्रीय सरकार एकात्मक सरकार हो जाती है तथा आपत्तिकाल की घोषणा करके शासन अपने हाथ में ले लेती है। संसार के अन्य किसी भी संविधान में इस प्रकार का परिवर्तन करने की शक्ति नहीं है। भारत वर्ष की विशेष आवश्यकताओं को

दृष्टिगत करके वैधानिक और कर सम्बन्धी शक्तियों के विभाजन में संघीय प्रणाली में भी कुछ संशोधन किया गया है।

९. **नागरिकों के मूल अधिकार**—हमारे संविधान की एक विशेषता यह भी है कि इसमें नागरिकों के मूल अधिकारों का वर्णन विस्तार में एक अलग अध्याय मे किया गया है। इन अधिकारों का संविधान में उल्लेख करने का केवल आशय यह था कि सरकार भविष्य में नागरिकों के इन अधिकारों के साथ खिलवाड़ न कर सके क्योंकि लिखित विधान में संशोधन करना अपेक्षाकृत कठिन होता है।

१०. **राज्य की नीति के निर्देशक तत्व**—नवीन संविधान में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों पर भी विचार किया गया है। इस प्रकार का प्रावधान (Provision) आयरलैंड के संविधान में भी देखने को मिलता है। वास्तव में स्वतन्त्र भारत का नवीन संविधान कल्याणकारी राज्य के सिद्धान्त को स्वीकार करता है। इसी दृष्टि से संविधान में कुछ ऐसे नीति निर्देशक तत्वों को स्थान दिया गया है जिनका देश के शासन में बहुत महत्व है। किन्तु इन तत्वों के पीछे कोई वैधानिक सत्ता नहीं है। किसी भी न्यायालय के द्वारा उन तत्वों का पालन नहीं कराया जा सकता। इन तत्वों को केवल मात्र राज्य के लिये नैतिक कर्त्तव्य ही कहा जा सकता है।

११. **अस्पृश्यता तथा उपाधियों का अन्त**—नवीन संविधान में उपाधियों का पूर्ण रूप से अन्त कर दिया गया है तथा इस संविधान के अनुसार छुआ-छूत का भी पूर्णरूपेण अन्त कर दिया है। इन दोनों देशों का अन्त कर भारतीय समाज को दोप से मुक्त कर दिया है, जिनके द्वारा हमारे समाज में जो ऊँच-नीच की भावना पैदा हो गई थी उसे समूल नष्ट करने का अभ्यास किया गया। अस्पृश्यता तथा उपाधियों का अन्त करने से समाज में समता की स्थापना हो सकेगी।

१२. **स्त्रियों को समानाधिकार**—नवीन संविधान ने स्त्रियों को भी समान अधिकार प्रदान कर दिये हैं। स्त्रियों को भी पुरुषों के समान ही समस्त सामाजिक तथा राजनैतिक अधिकार प्राप्त हो गये हैं। इस कार्य से भारतीय संविधान ने भारतीय समाज की बड़ी सेवा की है तथा स्त्रियों की दयनीय अवस्था को सुधारा है।

१३. एक राष्ट्र-भाषा की घोषणा—देश में एकता की भावना को सुदृढ़ रखने के लिये हमारे संविधान निर्माताओं ने हिन्दी को राष्ट्र भाषा घोषित किया है इसके साथ ही यह भी व्यवस्था की गई है कि देश में १५ वर्ष तक अंग्रेजी चलती रहेगी और धीरे-धीरे हिन्दी उसका स्थान ग्रहण कर लेगी।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संविधान निर्माताओं ने नवीन संविधान निर्माण करने से पूर्व विश्व के सभी संविधानों का अध्ययन किया और अच्छे २ तत्वों को चुनकर उन्हें देश की परिस्थितियों के अनुसार हमारे नवीन संविधान में सम्मिलित किया है। निस्संदेह भारत का संविधान विश्व का एक अनोखा संविधान है।

प्रश्न ४—भारतीय संविधान में नागरिकों के मूल अधिकार क्या हैं ?

उत्तर—प्रजातन्त्र शासन में राजसत्ता जनता के हाथ में रहती है। इस शासन की सफलता के लिये जनता का सहयोग आवश्यक हो जाता है। नागरिकों का सहयोग पाने के लिए उन्हें राज्य के द्वारा कुछ विशेष सुविधायें प्रदान की जाती हैं जिन्हें कानूनी संरक्षण प्राप्त होता है। ऐसी सुविधाओं को मौलिक अधिकार कहते हैं। हमारे संविधान में मौलिक अधिकारों का समावेश किया गया है। हमारे संविधान ने भारतीय नागरिकों को निम्नलिखित अधिकार दिये हैं:—

१. साधारण अधिकार—इन अधिकारों के अन्तर्गत नागरिकों को यह विश्वास दिलाया जाता है कि भारतीय राज्य क्षेत्र के अन्दर कोई भी राज्य सामाजिक कुरीतियों—बाल विवाह, जाति भेद व अस्पृश्यता आदि की रक्षा नहीं कर सकता। यदि किसी भी राज्य में इस प्रकार की कोई विधि है जो उपर्युक्त सामाजिक कुरीतियों की रक्षा करती है तो उस विधि का उतना भाग जितना मौलिक अधिकारों से सम्बन्ध रखता है शून्य अथवा अवैध समझा जायेगा। इसके साथ ही भविष्य में कोई विधान मंडल ऐसी विधि का निर्माण नहीं कर सकता, जो किसी भी रूप से अधिकारों की प्रधानता को कम करता हो। इस प्रकार भारत में एक नवीन

वातावरण का आरम्भ होगा और अनेक कुरीतियाँ स्वयं ही नष्ट हो जावेंगी तथा भविष्य में उनका कोई महत्व न रहेगा।

२. **समता का अधिकार**—प्रजातन्त्र राज्य में सबसे प्रमुख समता का अधिकार रखा गया है। जिस राज्य में समता का अधिकार नहीं वहाँ प्रजातंत्र शासन नहीं हो सकता। हमारे संविधान में सब नागरिकों को एक समान समझा जाता है। प्रत्येक नागरिक को कानून के सामने समता तथा कानून कि संरक्षण का समान अधिकार प्राप्त है। धर्म, रक्त एवं जाति के आधार को लेकर राज्य के द्वारा किसी भी नागरिक के साथ भेद-भाव नहीं किया जायेगा। सब ही अपनी योग्यता के अनुसार राज्यों के पदों को प्राप्त कर सकेंगे। प्रत्येक व्यक्ति सरकारी नौकरी प्राप्त कर सकेगा। किसी भी नागरिक को धर्म व जाति के कारण ऊँचे पद से नहीं हटाया जा सकेगा। संविधान ने दलित वर्ग के लिए भी कुछ ध्यान. १० वर्ष के लिये सुरक्षित कर दिये हैं। किन्तु इस अवधि के पश्चात् इसे भी समाप्त कर दिया जायेगा और फिर नागरिकों में भी पूर्ण रूप से समता भाव उत्पन्न हो जायेगा। समानता के अन्तर्गत यह अधिकार भी प्रदान किये जायेंगे। धर्म, मूल वंश, जाति व जन्म स्थान के आधार पर किसी प्रकार के भेद नहीं होंगे। अस्पृश्यता व उपाधियों का अन्त कर दिया जायेगा। उपर्युक्त बातों में यदि कोई बाधा उपस्थित करेगा तो उसे दण्ड दिया जावेगा। प्रत्येक नागरिक विना किसी रोकटोक के सार्वजनिक भोजनालय, दुकानों में तथा आमोद-प्रमोद के लिये जा सकेगा।

३. **सम्पति का अधिकार**—भारतीय संविधान ने व्यक्तिगत सम्पत्ति का अधिकार स्वीकार किया है। किसी भी मनुष्य की सम्पत्ति बिना कानूनी अधिकार से नहीं ली जा सकेगी। जनता की भलाई के कामों में लगाने के लिये राज्य किसी भी सम्पत्ति को ले सकता है किन्तु केवल उस समय ही जबकि उसकी क्षतिपूर्ति की व्यवस्था करदी गई हो। इसके अतिरिक्त यदि कोई राज्य अपने विधान मंडल की सहायता से इस प्रकार सम्पति प्राप्त करने के लिये कोई कानून बनायेगा तो उसे उस समय तक लागू नहीं किया जावेगा जब तक उस पर राष्ट्रपति की स्वीकृति न हो जाये।

४. धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार—इस अधिकार के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने विश्वास और इच्छानुसार किसी भी धर्म को मान सकता है। वह अपने धर्म को फैला सकता है किन्तु धर्म प्रचार से यदि जनता के हित में रुकावट आती है तो राज्य उसके विरुद्ध नियम बना सकता है।

५. संस्कृति और शिक्षा के अधिकार—इस अधिकार के द्वारा इस बात का प्रयत्न किया गया है कि अल्प संख्यक वर्ग की भाषा, संस्कृति लिपि आदि को किसी प्रकार की ठेस न पहुँचे। किसी भी धर्म को मानने वाला किसी भी शिक्षा केन्द्र में प्रवेश लेकर शिक्षा प्राप्त कर सकता है। अल्प संख्यक वर्ग वाले अपना विद्यालय भी स्थापित कर सकते हैं तथा अन्य शिक्षण संस्थाओं की भांति सहायता भी प्राप्त कर सकते हैं।

६ स्वतन्त्रता का अधिकार—यह अधिकार भी समानता के अधिकार के समान ही बहुत महत्वपूर्ण है। जिन राज्यों में नागरिकों की स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त नहीं होता वे अन्धविश्वासी होते हैं तथा वे किसी भी प्रकार की उन्नति करने में सफलता प्राप्त नहीं करते। संविधान ने स्वतन्त्रता के अधिकारों के अन्दर निम्नलिखित अधिकार जनता को प्रदान किये हैं—

(क) भाषण तथा अपने विचार प्रगट करने की स्वतन्त्रता।
(ख) शांतिपूर्ण ढंग से सभा करने की स्वतन्त्रता।
(ग) समुदाय अथवा संस्था बनाने की स्वतन्त्रता।
(घ) भारत राज्य क्षेत्र में किसी भी स्थान पर जाने की स्वतन्त्रता।
(ङ) भारत राज्य क्षेत्र में किसी भी स्थान पर रहने की स्वतंत्रता।
(च) कोई भी व्यापार करने की स्वतंत्रता।
(छ) अपराधों के लिये दोष सिद्धि के विषय में संरक्षक की स्वतंत्रता।
(ज) प्राण तथा शारीरिक स्वाधीनता के संरक्षण की स्वतंत्रता।
(झ) सम्पत्ति प्राप्त करने, रखने और खर्च करने की स्वतंत्रता।
(ञ) बंदीकरण और निरोध से संरक्षण की स्वतंत्रता।

राज्य जनहित की शांति के लिये इन अधिकारों पर उचित नियंत्रण भी लगा सकता है। सामाजिक स्वतंत्रता पर रोक इसलिये लगाई जाती है

ताकि सभी उचित रूप से इन अधिकारों का उपभोग कर सकें। कोई भी नागरिक बिना कारण बतलाये हुये कारावास में बन्द नहीं किया जा सकता। कोई भी व्यक्ति तीन महीने से अधिक नजरबन्द नहीं रखा जा सकता।

७. शोषण के अधिकार—कोई भी मनुष्य किसी भी रूप में मनुष्य का शोषण नहीं कर सकता। वह न किसी मनुष्य को खरीद सकता है और न बेच ही सकता है। कोई भी मनुष्य किसी से जबरदस्ती बेगार नहीं करवा सकता है। यदि कोई मनुष्य इन कामों को करने का प्रयास करेगा तो दण्ड का भागी होगा किन्तु इस सम्बन्ध में राज्य को यह अधिकार प्राप्त है कि सार्वजनिक कार्यों के लिये अनिवार्य सेवा का नियम बना सकता है अर्थात् राज्य सार्वजनिक कार्यों के लिये किसी की भी सेवायें ले सकता है। १४ वर्ष से कम आयु वाले बालक कारखाने में कार्य नहीं कर सकेंगे।

८. संवैधानिक उपचारों के अधिकार—इस अधिकारों पर किसी प्रकार का कुठाराघात किये जाने पर प्रत्येक नागरिक को अधिकार होगा कि वह अपने मूल अधिकारों की सुरक्षा की मांग समुचित कार्यवाही द्वारा सर्वोच्च न्यायालय से कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय इनमें से किसी भी अधिकार को लागू करने की आज्ञा दे सकता है। सार्वजनिक शांति की रक्षक सेनाओं में अनुशासन बनाये रखने के लिए संसद इन अधिकारों को कम या समाप्त कर सकती है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे संविधान के द्वारा नागरिकों को विस्तृत अधिकार दिये गये हैं। यद्यपि उनका उपयोग पूर्ण रूपेण नहीं कर पाये हैं परन्तु आशा की जाती है कि शिक्षा के प्रचार के साथ भारत की जनता मौलिक अधिकारों के महत्व को समझ सकेगी। और प्रजातंत्र शासन सफल हो सकेगा।

प्रश्न ५—नीति के निर्देशक तत्वों का उल्लेख कीजिये? इनमें व मूल अधिकारों में क्या अन्तर है?

उत्तर—भारत के नवीन संविधान में 'राज्य' के नीति निर्देशक सिद्धांतों का समावेश इस दृष्टिकोण से किया गया है कि भारत सदियों से राजनीति का अंधा भक्त रहा है और भविष्य में बनने वाली सरकारें जनता पर मनमाना अत्याचार न करें और उन्हें इस बात की प्रेरणा

मिलती रहे कि वर्तमान राज्य एक लोक कल्याणकारी राज्य है जिसका लक्ष्य अधिक से अधिक जनहित कार्य करना है। इस बात की प्रेरणा देने के लिए कुछ ऐसे लक्ष्य रखे गये हैं जिससे सरकार निरन्तर जनहित कार्यों में लगी रहे। इन सिद्धांतों का अभिप्राय उन आदेशों से है जो राज्य को अपनी नीति निर्धारित करने के लिए दिए जाते हैं। हमारे संविधान निर्माताओं को यह प्रेरणा आयरलैंड के संविधान से मिली है और इसे नवीन संविधान के चतुर्थ खण्ड में सम्मिलित किया गया है। राज्य के नीति निर्देशक तत्व निम्नलिखित हैं:—

१. आर्थिक सुरक्षा एवं समानता से सम्बंधित सिद्धांत—राज्य समाजवादी आर्थिक व्यवस्था को अपनाने के लिये निम्न व्यवस्था करेगा:—

(क) जीवन यापन के समुचित साधनों की व्यवस्था हो।

(ख) जनता के मौलिक साधनों के स्वामित्व का निष्पक्ष वितरण हो।

(ग) धन और उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण न हो। राष्ट्र में धन का वितरण सबके लिये समान हो।

(घ) स्त्री, पुरुषों और बालकों को उनकी आयु के अयोग्य कार्यों को करने से रोकने तथा उनके स्वास्थ्य और शक्ति की रक्षा करने की व्यवस्था हो।

(ङ) स्त्री और पुरुषों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले।

(च) बेकारी, वृद्धावस्था, बीमारी और अपाहिज आदि की व्यवस्था में सहायता प्रदान की जाने की व्यवस्था हो।

(छ) जीवन स्तर ऊँचा उठाने के लिये उचित वेतन प्रदान किया जावे।

(ज) कुटीर व्यवसाय की उन्नति की जावे।

(झ) पिछड़े हुये वर्गों के शैक्षणिक, सामाजिक और आर्थिक हित की उन्नति का ध्यान रखा जावे।

(ञ) गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाया जावे।

२. शिक्षा और न्याय से सम्बंधित निर्देशक तत्व—निष्पक्ष न्याय एवं शिक्षा प्रसार के लिये राज्य निम्न करेगा :—

(क) इस विधान के लागू होने से १० वर्ष के समय में राज्य १४ वर्ष के बालकों के लिए निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयत्न करेगा।

(ख) स्वतंत्र न्याय की व्यवस्था के लिये कार्यकारिणी और न्याय सम्बन्धी विभागों को अलग २ किया जावेगा।

(ग) ग्राम पंचायतों का संगठन हो तथा उन्हें वे सभी अधिकार प्रदान किये जावें जो पहले प्राप्त न थे।

(घ) राज्य समस्त भारतीय नागरिकों के लिए समान सिविल कोड बनाने का प्रयास करेगा।

३. सामाजिक उन्नति तथा विचार एवं ऐतिहासिक स्थानों से सम्बन्धित सिद्धांत—भारतीय नागरिकों में नैतिकता की उन्नति तथा सामाजिक विकास और प्राचीन स्मारकों की रक्षा के लिये निम्न सिद्धान्त रखे गये हैं :—

(क) जन स्वास्थ्य तथा कार्य कुशलता की उन्नति के लिये जीवन स्तर ऊँचा उठाने का प्रयास करना।

(ख) औषधि में प्रयोग किये जाने के अलावा मदिरा तथा अन्य मादक द्रव्यों के प्रयोग पर प्रतिबन्ध।

(ग) शिशु जन्म एवं शिशु पालन की सुविधायें प्रदान करना।

(घ) कलात्मक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रत्येक स्मारक तथा भवन और संसद द्वारा घोषित राष्ट्रीय महत्व के स्थानों को नष्ट होने, कुरूप होने, क्रय करने अथवा हटाये जाने से रक्षा करना।

४. अन्तर्राष्ट्रीयता संबंधित सिद्धान्त—विश्व शान्ति, सुरक्षा और सह-अस्तित्व की दृष्टि से भारत सरकार इस बात का प्रयत्न करेगी कि—

(क) अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा का विकास हो।

(ख) राष्ट्रों में न्यायपूर्ण तथा आदरणीय सम्बन्धों की स्थापना हो।

(ग) अन्तर्राष्ट्रीय कानून तथा संधियों आदि के प्रति आदर की भावना का विकास हो।

(घ) अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों के निर्णय के लिए समझौते की भावना का उदय हो।

५. **मौलिक अधिकारों तथा नीति निर्देशक तत्वों में अन्तर**—यद्यपि मौलिक अधिकारों तथा नीति निर्देशक तत्वों का अन्तिम लक्ष्य नागरिकों के जीवन को सुखी एवं सम्पन्न बनाना है, फिर भी इनमें निम्न अन्तर है :—

मौलिक अधिकार	नीति निर्देशक तत्व
१. मौलिक अधिकार को वैधानिक मान्यता प्राप्त है। ये न्यायालयों द्वारा लागू किये जा सकते हैं और इनके अनुसार राज्य कार्य करने को बाध्य है।	१. नीति निर्देशक तत्वों को वैधानिक मान्यता नहीं दी गई है। ये न्यायालयों द्वारा लागू नहीं किये जा सकते। इनके पीछे केवल लोकमत नैतिक शक्ति है तथा राज्य को कानून व इनके अनुसार कार्य करने को बाध्य नहीं किया जा सकता। किन्तु वास्तव में लोकमत की शक्ति वह है जिसके हाथ में सरकार का बनाना व बिगाड़ना रहता है, अतः इन तत्वों की उपेक्षा नहीं की जा सकती।
२. मौलिक अधिकारों द्वारा देश में राजनैतिक स्वतन्त्रता स्थापित करने का प्रयास किया है।	२. नीति निर्देशक सिद्धांतों द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक लोकतंत्र के आदर्श सामने रखे गये हैं।
३. नागरिक सुप्रीम कोर्ट द्वारा अपने मौलिक अधिकारों की रक्षा कर सकते हैं।	३. इन सिद्धांतों की अवहेलना करने पर किसी न्यायालय में मुकदमा नहीं चल सकता।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि राज्य के नीति निर्देशक तत्व हमारे संविधान में इसलिए शामिल किये गये हैं, जिससे भविष्य में बनने वाली सरकारों को निरन्तर जनहित कार्य करने की प्रेरणा

मिलती रहे। ये निर्देशक तत्व संविधान की प्रस्तावना का विस्तृत रूप हैं, जिनका उद्देश्य जनता को न्याय, समानता और बन्धुत्व देना है। एक लेखक के शब्दों में 'ये निर्देशक तत्व भारतीय सरकार रूपी नाविक के लिए ध्रुव तारे के समान हैं, जिनको देखकर नाविक यह जानकारी प्राप्त कर लेता है कि उसका जहाज किस ओर जा रहा है और उसे किस दिशा में जाना है।' लेखक का यह कथन सत्य प्रतीत होता है।

प्रश्न ६—रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—

उत्तर—रिक्त स्थानों की पूर्ति नीचे की जाती है—

(क) संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ० राजेन्द्रप्रसाद थे।

(ख) २६ जनवरी, १९५० से स्वतन्त्र भारत का संविधान लागू हुआ।

(ग भारतीय संविधान का ढांचा संघात्मक है।

(घ) सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा मूल अधिकारों की रक्षा की जा सकती है।

(ङ) भारतीय गणराज्य के प्रथम राष्ट्रपति स्व० डा० राजेन्द्र प्रसाद निर्वाचित थे।

प्रश्न ७—जनतन्त्र में नागरिक के क्या कर्त्तव्य होने चाहिएँ ?

उत्तर—प्रजातन्त्र शासन जिसे जनता का शासन कहा जाता है उसकी सफलता जनता के सहयोग पर आधारित होती है। राज्य के द्वारा प्रत्येक नागरिक को कुछ अधिकार दिये जाते हैं किन्तु उनका सही उपयोग करने के लिए कर्त्तव्यों का प्रतिबन्ध होता है। कर्त्तव्यों का समुचित रूप से पालन करना ही अधिकारों का सच्चा उपयोग है। कर्त्तव्य पालन हमारा सच्चा धर्म है जिसका पालन हमें प्रत्येक मूल्य पर करना चाहिये। जनतन्त्र शासन में नागरिकों के निम्नांकित कर्त्तव्य प्रमुख हैं—

१. मताधिकार का सदुपयोग—प्रजातन्त्र राज्य में नागरिकों को देश के शासन में भाग लेने के लिए मत देने का अधिकार प्राप्त होता है अत; उनको देश की समस्याओं पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये। अधिकतर बहुत से नागरिक देश के आम चुनावों में वास्तविक रुचि से भाग नहीं लेते। ऐसा होना देश के लिए अहितकर सिद्ध होता है। इसके विपरीत जो व्यक्ति इन चुनावों में रुचि लेते हैं वे अपने मतों का ठीक प्रकार से

उपयोग नहीं करते और होता यह है कि वे किसी भी दबाव में आकर अपना मत किसी गलत व्यक्ति को दे देते हैं। इन बातों को देखते हुए यह बात अत्यन्त आवश्यक हो जाती है कि प्रत्येक नागरिक अपने देश की समस्याओं को ठीक प्रकार समझे तथा चुनावों के प्रति भी उदासीनता प्रकट न करे। प्रत्येक व्यक्ति को अपना मत उसी व्यक्ति को देना चाहिये जिसकी नीति उसकी दृष्टि में देश की भलाई के पक्ष में हो, चाहे वह उम्मीदवार किसी भी दल का क्यों न हो।

२. देश-भक्ति—देश की पग-पग पर उन्नति हो, इसके लिए आवश्यक है कि उस देश के निवासी अपने देश के प्रति निष्ठा रखते हों। नागरिक का सर्वप्रथम कर्त्तव्य है कि वह देश भक्ति का महत्व समझे। प्रत्येक नागरिक को चाहिये कि वह हर समय देश की सेवा करने को तैयार रहे। समय पड़ने पर वह फौज में भरती होकर भी रक्षा करे और शान्ति के समय में देश निर्माण करने में सहयोग दे। उसे अपने कुटुम्ब, जाति एवं ग्राम के स्थान पर, देश के हित पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये। तथा समय-समय पर सरकारी कर्मचारियों को अपना सहयोग देना चाहिये।

३. उत्तरदायित्व की भावना—प्रजातन्त्र में प्रत्येक नागरिक के लिए यह अति आवश्यक हो जाता है कि वह अपने वास्तविक उत्तरदायित्व को समझे तथा लग्न और ईमानदारी के साथ अपने कार्य को करे। इन कर्त्तव्यों को भारतीय संस्कृति में धर्म के नाम से पुकारा गाया है। उनके कर्त्तव्य प्रायः निश्चित हैं। उदाहरण के लिए राजा का कर्त्तव्य राजधर्म तथा शिक्षक का कर्त्तव्य शिक्षकधर्म है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के कुछ निश्चित कर्त्तव्य होते हैं जिनका पालन उसे तन-मन से करना चाहिये।

४. कर चुकाना—प्रजातन्त्र राज्य में यह भी आवश्यक हो जाता है कि वह सरकार के द्वारा लगाये गये करों को ईमानदारी के साथ चुका दे। इस कर्त्तव्य को यदि नागरिक भूल जाये तो सरकार के कार्य में बाधा उत्पन्न होने की आशंका रहती है। अतः इस कर्त्तव्य का पालन प्रत्येक नागरिक को करना चाहिये।

५. सरकारी आज्ञाओं का पालन—प्रत्येक नागरिक को चाहिये कि वह राज्य की आज्ञाओं का पूर्ण रूप से पालन करके देश की शांति को सुदृढ़ बनाये। इसका अर्थ यह नहीं समझना चाहिये कि किसी भी आज्ञा का उल्लंघन नागरिक नहीं कर सकता। यदि उसको कोई बुरी बात लगे तो उसे चाहिये कि वह उस आदेश का वैधानिक रूप से विरोध करे। आलोचना करने का अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्राप्त है किन्तु इसके साथ नागरिक को चाहिये कि वह आलोचना वास्तविकता रखती हो। उसमें किसी प्रकार की द्वेष भावना न झलकती हो क्योंकि व्यर्थ की आलोचना देश के लिए अहितकर सिद्ध हो सकती है।

६. सहयोग—उपर्युक्त कर्त्तव्यों के साथ ही साथ सहयोग की भावना भी देश के नागरिक में होना अनिवार्य है। देश की भलाई के लिए कई कार्य ऐसे भी होते हैं जिनको व्यक्ति को बिना वेतन प्राप्त किए करने होते हैं, तो ऐसे पदों एवं कार्य के लिए सहयोग का बडा महत्व है। प्रत्येक व्यक्ति को अपना सहयोग देना चाहिये। इसके लिये नागरिकों में योग्यता, शिक्षा एवं समझदारी की आवश्यकता होती है। प्रत्येक मानव अपना सहयोग देकर ग्राम पंचायत व नगरपालिकाओं के कार्यों को सुचारू रूप से चलाकर देश की महान् सेवा कर सकता है।

उपर्युक्त बातों के जान लेने के बाद पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाता है कि जनतन्त्र राज्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रत्येक नागरिक को अपने अधिकारों के साथ कर्त्तव्यों का भी पालन ठीक प्रकार से करना चाहिये। कर्त्तव्यों के बिना अधिकार और अधिकार के बिना कर्त्तव्य का कोई मूल्य नहीं। वास्तव में कर्त्तव्यों के संसार में ही अधिकारों का महत्व है।

प्रश्न ८—नागरिक जीवन में अधिकार और कर्त्तव्य का क्या महत्व है?

उत्तर—नित्यप्रति हम अपने नागरिक जीवन में अधिकार और कर्त्तव्य शब्दों का प्रयोग करते हैं। अधिकार के विषय में यही कहा जा सकता है कि जो हमारा हक है वह हमें मिलना चाहिये। कर्त्तव्यों का अर्थ ऐसे कार्यों को करने की प्रेरणा है जो हमें अपने साथियों, समाज, देश व विश्व के प्रति करने चाहियें। कर्त्तव्यों और अधिकारों का सम्बन्ध कार्य

और कारण जैसा है। जो मनुष्य अपने अधिकारों के लिये लड़ नहीं सकता वह नागरिकता का अधिकारी नहीं। इसी प्रकार जो अपने कर्त्तव्यों का पालन नहीं करता वह भी नागरिकता का अधिकारी नहीं।

१५ अगस्त, १९४७ को भारत स्वतन्त्र हुआ। २६ जनवरी, १९५० को भारत ने गणतन्त्र का रूप लिया और भारतीयों को भी एक स्वतंत्र नागरिक जीवन व्यतीत करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

संविधान द्वारा प्राप्त अधिकार एवं कर्त्तव्य—हमारे संविधान में मौलिक अधिकार भारतीय नागरिकों को दिए गए हैं। समता का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार, सांस्कृतिक व शिक्षा का अधिकार, शोषण से रक्षा का अधिकार और संवैधानिक उपचारों का अधिकार भारतीयों को दिये गये हैं।

परन्तु अधिकार केवल कर्त्तव्यों के जगत में ही जीवित हैं। वास्तव में नागरिक अधिकारों की प्राप्ति करने के बदले प्रेरणावश जो भी करता है, कर्त्तव्य हैं। जनतन्त्र शासन प्रणाली में नागरिकों से मताधिकार का सदुपयोग, देश के प्रति निष्ठा, उत्तरदायित्व की भावना, कर चुकाना, सरकारी आज्ञाओं का स्वेच्छा से पालन करना, सहयोग प्रदान करने की भावना की अपेक्षा की जाती है।

नागरिक जीवन में अधिकार और कर्त्तव्यों का महत्व:—नागरिक जीवन में अधिकार और कर्त्तव्यों के द्वारा व्यक्तित्व का विकास पूर्णरूपेण होता है। इनका उचित पालन मानव के उत्थान की आधार शिला है। समाज और राष्ट्र की उन्नति के हेतु ही वह मनुष्य है जो अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों का पालन करता है। इनके पालन से व्यक्ति को तो लाभ होता ही है, साथ ही समाज और राष्ट्र की उन्नति होती है।

अतः अधिकार और कर्त्तव्यों का काफी महत्व है।

अध्याय ३

शासन की रूपरेखा

प्रश्न १—स्वतन्त्र भारत के संविधान में राष्ट्रपति का क्या

स्थान है ? राष्ट्रपति के अधिकारों का वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारतीय संघ में राष्ट्रपति का पद अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वह हमारे देश का नामधारी शासक है। देश का सम्पूर्ण शासन उसके नाम पर चलाया जाता है, यद्यपि उसे संविधान द्वारा विस्तृत अधिकार प्रदान किये गये हैं, परन्तु वह उनका प्रयोग करने के क्षेत्र में स्वतन्त्र नहीं है।

१. राष्ट्रपति पद के लिए योग्यताएँ—राष्ट्रपति पद के लिए लड़ने वाले व्यक्तियों में निम्न योग्यता का होना आवश्यक है:—

(क) वह भारत का नागरिक हो।

(ख) उसकी आयु ३५ वर्ष से कम न हो।

(ग) उसमें भारतीय संसद के प्रथम सदन के लिए निर्वाचित होने की योग्यता हो।

(घ) सरकार के किसी लाभकारी पद पर कार्य न करता हो।

(ङ) संसद अथवा राज्यों के विधान मण्डल का सदस्य न हो।

२. चुनाव कार्यकाल और वेतन—राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा निर्वाचक मण्डल जिसमें संसद व विधान सभा के सदस्य होते हैं, उनके द्वारा किया जाता है। उसका कार्यकाल ५ वर्ष निर्धारित किया गया है। वह जितनी बार चाहे चुनाव लड़ सकता है। उसका वेतन हमारे संविधान द्वारा १०,०००) रु० मासिक निर्धारित किया गया है, परन्तु हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वेच्छा से ६०००) रु० मासिक लेते थे। यह हमारे राष्ट्रपति के त्याग का अपूर्व परिचय है।

३. राष्ट्रपति के अधिकार—हमारे संविधान के द्वारा राष्ट्रपति को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं:—

(क) व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकार—राष्ट्रपति को संसद की कार्यवाही संबन्धी अधिकार प्राप्त है। उसे संसद के सत्र को बुलाने व विघटन करने का अधिकार है। संसद के दोनों सदनों में भाषण दे सकता है। जब संसद का अधिवेशन न हो रहा हो तब अध्यादेश जारी करने का अधिकार है। प्रत्येक अध्यादेश संसद के दोनों सदनों के सम्मुख रखा जाता है और संसद के प्रारम्भ होने के ६ सप्ताह बाद उसका प्रभाव

नहीं रहता। राष्ट्रपति को बिल संबन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं। संसद का पास किया कोई भी बिल बिना राष्ट्रपति की स्वीकृति के कानून नहीं बन सकता। धन संबन्धी बिल पर राष्ट्रपति को आवश्यक रूप से मंजूरी देनी होती है। उसे पुनर्विचार के लिए नहीं लौटाया जा सकता। राष्ट्रपति को राज्यों के क्षेत्रों में भी कुछ विधानीय शक्तियाँ प्राप्त हैं। राज्यों में कई विषयों पर बिल बिना राष्ट्रपति की स्वीकृति के पेश नहीं किये जा सकते हैं। राष्ट्रपति को अण्डमान तथा लक्ष दीप के लिए नियम बनाने का अधिकार है।

(ख) कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकार—संघ की समस्त कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति को प्राप्त है। वह विदेशों में राजदूतों तथा अन्य राज-प्रतिनिधियों की नियुक्ति करता है तथा अन्य देशों के राजदूत उसी को अपने प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करते हैं। संघ के सारे प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति भी राष्ट्रपति ही करता है। राज्य के राज्यपाल अथवा राजप्रमुख, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों, प्रधान अभिकर्ता, प्रधान संप्रेक्षक आदि अधिकारियों की भी नियुक्ति करता है। वह शासन को ठीक ढङ्ग से चलाने के लिए नियम बना सकता है।

(ग) न्याय संबन्धी अधिकार—राष्ट्रपति को किसी भी अभियुक्त को दंडित हो जाने पर उसके दंड को क्षमा करने अथवा कम करने का अधिकार है। अपने कार्य के हेतु वह किसी भी न्यायालय के सम्मुख उपस्थित नहीं किया जा सकता। उसको बन्दी करने के लिए कोई वारन्ट जारी नहीं किया जा सकता। उस पर दीवानी कार्यवाही करने के २ माह पूर्व लिखित सूचना देना आवश्यक है। उसको उच्चतम न्यायालय और राज्यों के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति करने का भी अधिकार है।

(घ) वित्त संबन्धी अधिकार—बिना राष्ट्रपति की स्वीकृति के एक धन विधेयक अथवा वित्त-विधेयक भारतीय संसद में पेश नहीं किया जा सकता। राष्ट्रपति को केन्द्र तथा राज्यों में आय के वितरण का महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त है। वह जूट के निर्यात कर से प्राप्त आय के भाग को आसाम, बिहार, उड़ीसा और पूर्वी बंगाल को सहायता के रूप में दे सकता है। भारत की आकस्मिकता निधि में से भी व्यय करना उसी के

इच्छा पर निर्भर है।

(ङ) संकटकालीन अधिकार—(क) युद्ध की संभावना, विदेशी आक्रमण या आन्तरिक अशान्ति के कारण भारत या भारत के किसी भी भाग की सुरक्षा संकट में हो तब संकटकालीन अधिकार की घोषणा कर सकता है। (ख) किसी राज्य में संवैधानिक तन्त्र विफल होने पर तथा वित्तीय स्थायित्व तथा साख के संकट में होने पर संकटकालीन अधिकार की घोषणा कर सकता है। प्रथम घोषणा के दौरान में संसद को सभी विषयों पर सारे भारत के लिए कानून बनाने का अधिकार होगा। राष्ट्रपति राज्य की कार्यपालिकाओं को आदेश दे सकेगा, नागरिकों के स्वतंत्रता संबन्धी मौलिक अधिकारों को विलम्बित कर सकेगा और केन्द्र तथा राज्यों के राजस्व वितरण में परिवर्तन कर सकेगा। दूसरे प्रकार की घोषणा द्वारा राष्ट्रपति राज्य सरकार के सभी कार्यों को अपने आधीन करेगा। राज्य विधान मंडल की शक्तियाँ संसद को सौंप सकेगा तथा संविधान के किसी भी भाग को राज्य पर लागू होने से थोड़े या पूरे अंश में रोक सकेगा। तीसरे प्रकार की घोषणा द्वारा राष्ट्रपति केन्द्र या राज्यों के समस्त अधिकारियों के वेतन और भत्तों को घटा सकेगा। संकटकालीन स्थिति में राज्यपालों को अधिकारों से वंचित कर स्वयं राष्ट्रपति उन अधिकारों का प्रयोग करता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हमारे संविधान के द्वारा राष्ट्रपति को विस्तृत अधिकार दिये गये हैं परन्तु वह उनका उपयोग स्वतन्त्र रूप से करके तानाशाह नहीं बन सकता है। उसे जितने अधिकार प्रदान किये गये हैं वे वैधानिक शासक के रूप में हैं। उसके विषय में कहा जाता है कि राष्ट्रपति शासन नहीं, राज्य का प्रतिनिधित्व करता है। उपर्युक्त कथन सत्य प्रतीत होता है।

प्रश्न २—केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् की रचना व उसके कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर—हमारे संविधान के द्वारा संघात्मक शासन व्यवस्था की गई है। इस शासन व्यवस्था में दो प्रकार के अध्यक्ष हैं। राष्ट्रपति हमारे देश का संवैधानिक शासक है जिसे संविधान के द्वारा विस्तृत अधिकार दिये गये हैं। इसके साथ ही उसे शासन कार्यों में सहायता प्रदान करने के लिये एक

है। शासन की वास्तविक सत्ता मंत्रिपरिषद् के हाथ में होती है। इसलिए मन्त्रिपरिषद् की व्यवस्था की गई है, जिसका मुखिया प्रधान मन्त्री होता है। उसकी विस्तृत व्याख्या करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

मंत्रि-परिषद् का संगठन—मंत्रि-परिषद् का प्रमुख व्यक्ति प्रधान मन्त्री होता है। राष्ट्रपति प्रधान मंत्री को चुनता है तथा प्रधान मंत्री अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है। मंत्री केवल उस समय तक अपने कार्य पर डटा रहता है जब तक कि उसे राष्ट्रपति का विश्वास प्राप्त हो। मंत्रियों के लिए संसद का सदस्य होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि कोई ऐसा व्यक्ति मंत्री नियुक्त कर दिया जाता है जो संसद का सदस्य नहीं है तो उसे ६ माह के भीतर चुनाव द्वारा संसद का सदस्य बन जाना चाहिए वरन् पद से हटा दिया जाता है। प्रत्येक मन्त्री अपने विभाग के कार्य के लिए स्वयं उत्तरदायी होता है। प्रधान मंत्री, मंत्रि-परिषद् की आधारशिला है। "मंत्रि-परिषद् एक ऐसी कड़ी है जो राष्ट्रपति व संसद के दोनों सदनों को जोड़ती है। वह शासन की नौका है और प्रधान मंत्री उसका संचालक है।" वह सबसे बड़े दल का नेता होता है। प्रधान मंत्री मंत्रियों के कार्य का विभाजन करता है। अपनी योग्यता व प्रतिभा के बल से अन्य मंत्रियों को सलाह देता है। सभी विभागों में एकता स्थापित करता है। प्रधान मंत्री देश की जनता का विश्वस्त व्यक्ति होता है। प्रत्येक मंत्री के कार्य के लिए मंत्री-परिषद् उत्तरदायी है अतः प्रत्येक मन्त्री यदि अपने विभाग की दैनिक और सामान्य नीति के अलावा नई नीति अपनाना चाहता है तो उस नीति को मंत्रि-परिषद् के आगे रखना पड़ता है। यदि कोई मंत्रि-परिषद् के निर्णय को स्वीकार नहीं करता तो उस मन्त्री को अपने पद से हटाना पड़ता है। मंत्रि-परिषद् को विस्तृत अधिकार प्राप्त हैं। मंत्रि-परिषद् इसके अतिरिक्त भी बहुत से कार्य करती है जो निम्नलिखित हैं—

मंत्रि-परिषद् के कार्य—शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिये मंत्रि-परिषद् के निम्न कार्य प्रमुख हैं—

(क) मंत्रि-परिषद् राष्ट्र की नीति का निर्धारण करती है।

(ख राज्य के शासन का सचालन भी मंत्रि-परिषद् द्वारा ही होता है। इसलिए शासन कार्य अनेक विभागों मे बाँट दिया जाता है। प्रत्येक

विभाग के कार्य के लिए अनेक उच्च पदाधिकारी होते हैं जो विभागीय मंत्री की सहायता करते हैं। मंत्री अपने विभाग के कार्यों पर निरीक्षण रखते हैं तथा ऐसी व्यवस्था करते हैं कि विभाग का कार्य सुचारू रूप से चलता रहे।

(घ) मंत्रिपरिषद् विधानीय कार्यों के लिये उत्तरदायी है। संसद में महत्वपूर्ण बिल मंत्रिपरिषद् की ओर से ही पेश होते हैं। चूंकि संसद में मंत्रि-परिषद् का ही बहुमत होता है। अतः ऐसी बहुत कम सम्भावना रहती है कि वहाँ ऐसा कोई गैर सरकारी बिल पास हो सके जो मंत्रि-परिषद् को स्वीकार न हो।

(घ) देश की आर्थिक तथा वित्त सम्बन्धी नीति का निर्धारण भी मंत्रिपरिषद् द्वारा ही किया जाता है। सभी वित्तीय तथा धन विधेयक राष्ट्रपति की सिफारिश पर वित्त मंत्री द्वारा पेश किए जाते हैं। मंत्रि-परिषद् ही यह निश्चित करती है कि कौन २ से कर लगाये जावेंगे व किन-किन विषयों पर खर्चा किया जावेगा।

(ङ) अन्य महत्वपूर्ण कार्य—मंत्रिपरिषद् की राय से अनेक महत्वपूर्ण पदों पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्ति की जाती है। युद्ध तथा शांति की घोषणा की जाती है। संकट काल में मंत्रिपरिषद् राज्यों के क्षेत्र में भी हस्तक्षेप कर सकती है। राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष प्रधान मंत्री द्वारा ही प्रश्नों को पूछता है तथा उत्तर भी प्राप्त करता है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् संघीय शासन व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। मंत्रिपरिषद् के द्वारा ही शासन की नीति निर्धारित की जाती है। देश में शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाना मंत्रिपरिषद् का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। यही कारण है कि नवीन संविधान के अन्तर्गत केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् को विस्तृत अधिकार दिये गये हैं।

प्रश्न ३—संसद के कार्यों व अधिकारों का उल्लेख कीजिये।

उत्तर—हमारे देश में संसद की प्रधानता है। संसद के द्वारा ही देश की शासन व्यवस्था के लिए कानूनों का निर्माण किया जाता है और मंत्रिपरिषद् का निर्माण भी संसद में से ही किया जाता है। कोई भी परिवर्तन संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना नहीं हो सकता है। संसद के तीन

मुख्य अङ्ग हैं—लोकसभा, राज्य परिषद् तथा राष्ट्रपति। हमारे संविधान के अन्तर्गत संसद को विस्तृत अधिकार प्रदान किये गये हैं। उसका कार्य क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। संसद के निम्नलिखित अधिकार हैं—

१. **विधान सम्बन्धी कार्य**—संसद को नये कानूनों को बनाने, पुराने कानूनों को बदलने व रद्द करने का अधिकार है। वह संघ तथा समवर्ती सूचियों के सभी विषयों पर कानून बना सकती है। संसद को अवशिष्ट विषयों पर भी कानून बनाने के अधिकार प्राप्त हैं। विशेष प्रक्रिया द्वारा संकटकालीन घोषण के दौरान में वह राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बना सकती है। विदेशी राज्य से की गई संधि अथवा अन्तर्राष्ट्रीय निश्चयों के पालनार्थ भारत के किसी भी क्षेत्र के लिए संसद विधि निर्माण कर सकती है।

२. **शासन संबंधी कार्य**—लोकसभा का बहुमत दल अपने नेता का चुनाव करता है तथा वही व्यक्ति प्रधान मंत्री बनता है, संसद सदस्य समय पर मंत्रिममंडल से प्रश्न पूछते हैं तथा आलोचना करते हैं। वह मंत्रिमंडल के उचित ढङ्ग से कार्य न करने पर उसके प्रति अविश्वास का प्रस्ताव पास करके उसे हटा सकती है। कभी-कभी संसद विभिन्न प्रकार के प्रस्ताव पास करके मन्त्रिमण्डल का ध्यान उस ओर आकर्षित करती है। इस प्रकार संसद सदस्य शासन पर पर्याप्त नियन्त्रण रखते हैं।

३. **आर्थिक कार्य**—संसद सरकार की थैली का नियंत्रण करती है। यह सालाना बजट पास करती है। पुराने करों को हटाना, बढ़ाना या कम करना तथा नये करों को लगाना संसद की स्वीकृति पर निर्भर है। सरकार संसद की स्वीकृति से ऋण लेती है।

४. **न्याय सम्बन्धी कार्य**—संसद ही राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग लगाकर उसे हटा सकती है। इसी प्रकार न्यायाधीशों, ऑडीटर जनरल, चीफ इलेक्शन कमीश्नर आदि के विरुद्ध न्यायिक जाँच कर आवश्यक कार्यवाही कर सकती है।

५. **अन्य कार्य**—इन सब कार्यों के अलावा संसद ही सरकार के समक्ष जनता की पुकार पहुँचाती है। सरकार को जनता की तकलीफें बताती है तथा तकलीफों को दूर करने का भी प्रयत्न करती है। संविधान में संशोधन सम्बन्धी अधिकार का प्रयोग भी नियमानुसार संसद

ही करती है।

संसद के कार्यों का अध्ययन करने के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे देश में संसद की प्रधानता है और शासन की सर्वोच्च सत्ता संसद में केन्द्रित है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समस्त शासन व्यवस्था संसद के द्वारा ही संचालित की जाती है। संसद जनता के प्रतिनिधियों का एक संगठन है।

प्रश्न ४–संविधान में न्याय विभाग को स्वतंत्र क्यों रखा गया है? उच्चतम न्यायालय के कार्यों व अधिकारों का वर्णन कीजिये।

उत्तर—संसार के उन सभी देशों में जहाँ प्रजातन्त्र शासन है वहाँ न्यायपालिका को व्यवस्थापिका व कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त रखा गया है। इसका एक मात्र कारण यह है कि निष्पक्ष व्यवस्था के लिये सर्वोच्च न्यायालय का स्वतन्त्र होना अत्यन्त आवश्यक है। स्वतन्त्र न्यायालय के द्वारा ही जनता के मौलिक अधिकारों की रक्षा की जाती है। इन सब बातों को दृष्टिगत रखते हुये हमारे संविधान के द्वारा न्यायपालिका को स्वतन्त्र रखा गया है।

सर्वोच्च न्यायालय का गठन, वेतन तथा भत्ते व योग्यताएँ—उच्चतम न्यायालय में एक भारत का मुख्य न्यायाधिपति तथा सात अन्य न्यायाधीश होते हैं। संसद को संविधान की ओर से यह अधिकार प्राप्त है कि वह कानून पास करके न्यायाधीशों की संख्या में घटती बढ़ती कर सकती है। न्यायाधिपति की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति मुख्य न्यायाधीश से पूछकर करता है। मुख्य न्यायाधिपति वेतन का ५,००० रु० मासिक होता है अन्य न्यायाधीशों का वेतन ४,००० रु० मासिक होता है। नियुक्ति के बाद इनके वेतन को घटाया नहीं जाता। वेतन के अलावा न्यायाधीश उन भत्तों के भी अधिकारी होते हैं जिनको संसद विधि द्वारा निश्चित कर देती है। न्यायाधीश के पद के लिये यह आवश्यक है कि वह भारत का नागरिक हो। उसकी आयु ३५ वर्ष से कम न हो। किसी एक या अनेक उच्च न्यायालयों से लगातार १० वर्ष अधिवक्ता रह चुका हो, तथा किसी उच्च न्यायालय का कम से कम ५ वर्ष न्यायाधीश रह चुका हो, तथा राष्ट्रपति की राय में पारंगत विधि का ज्ञाता हो। न्यायाधीश को

निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं;—

१. **प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार**—सर्वोच्च न्यायालय में निम्नलिखित प्रकार के विवाद प्रारम्भ होते हैं अर्थात् ऐसे मुकदमे में जिसको प्रथम बार सर्वोच्च न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है, ऐसे मुकदमों को प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार में माना जाता है।

(क) संघ सरकार तथा एक या एक से अधिक राज्यों के मध्य उठने वाले विवाद।

(ख) संघ सरकार और एक या एक से अधिक राज्य सरकारें एक ओर तथा कुछ राज्य सरकारें दूसरी ओर होने पर उनके बीच में होने वाले विवाद।

(ग) दो या दो से अधिक राज्यों के बीच उठने वाला ऐसा विवाद जिसमें कोई ऐसा प्रश्न आगया हो जिस पर किसी कानूनी अधिकार का अस्तित्व अथवा विस्तार निर्भर हो।

२. **अपीलीय अधिकार**—सर्वोच्च न्यायालय का अपीलीय अधिकार तीन प्रकार का है—

(क) संवैधानिक (ख) दीवानी (ग) फौजदारी।

(क) **संवैधानिक**—सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या करने का अधिकार है। संवैधानिक विषयों में उच्च न्यायालय यह प्रमाणित करदे कि किसी मामले में संविधान की व्याख्या के संबंध में कोई महत्वपूर्ण कानून अन्तर्गत है तो ऐसे मामले की अपील सर्वोच्च न्यायालय में होगी। यदि उच्च न्यायालय ऐसा प्रमाणित करने से इनकार कर दे तो सर्वोच्च न्यायालय अपील करने की विशेष अनुमति दे सकता है यदि उसको विश्वास हो जावे कि अमुक मामले में संविधान की व्याख्या संबंधी कोई महत्वपूर्ण कानून अन्तर्गत है।

(ख) **दीवानी**—किसी दीवानी मामले में उच्च न्यायालय की अपील उसी समय न्यायालय में सुनी जा सकती है जब उच्च न्यायालय यह प्रमाणित करदें कि इस मामले की धन राशि २०,००० रुपये से अधिक है।

(ग) **फौजदारी**—अपने आधीन न्यायालय की रिहाई के निर्णय को बदल कर अभियुक्त को मृत्यु का दंडादेश दे। प्रमाणित करदे कि मामला सर्वोच्च न्यायालय में अपील किये जाने योग्य है।

३. अन्य अधिकार—सभी न्यायालयों को सर्वोच्च न्यायालय का कहा मानना होगा। सर्वोच्च न्यायालय को अपने द्वारा दिये गये पूर्व निर्णय को भी पुनर्विलोकन करने का अधिकार है। सर्वोच्च न्यायालय को बन्दी, प्रत्यक्षीकरण तथा परमादेश आदि आदेश जारी करने का अधिकार भी दिया हुआ है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हमारे संविधान के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को विस्तृत अधिकार प्रदान किये गये हैं। वह अपने कार्य क्षेत्र में पूर्ण रूप से स्वतंत्र है और उसकी नीति में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

प्रश्न ५—राज्य के शासन में राज्यपाल की स्थिति और उसकी शक्तियों का वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारत संघात्मक राज्य है जिसमें दो प्रकार की सरकारें हैं और दो प्रकार के अध्यक्ष हैं। केन्द्रीय सरकार जिसका नामधारी अध्यक्ष राष्ट्रपति है और वास्तविक अध्यक्ष प्रधान मंत्री है। ठीक उसी प्रकार प्रांत का नामधारी अध्यक्ष राज्यपाल है और उसके अधिकारों का उपयोग मुख्य मंत्री के द्वारा दिया जाता है।

१. राज्यपाल की नियुक्ति व योग्यता—राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। इसका कार्यकाल ५ वर्ष है। उस समय तक अपने पद पर आसीन रहता है जब तक कि उस पर राष्ट्रपति का विश्वास है। यदि राज्यपाल का पद आकस्मिक रूप से रिक्त हो जावे तो राष्ट्रपति उस पद पर किसी अन्य की नियुक्ति भी कर सकता है। (क) राज्यपाल को भारत का नागरिक होना आवश्यक है। (ख) आयु ३५ वर्ष से कम न हो। (ग) देश का सम्मानित व्यक्ति हो। (घ) किसी सरकारी पद पर आसीन न हो। (ङ) दीवालिया, देशद्रोही अथवा पागल न हो।

२. वेतन एवं भत्ते—राज्यपाल को रहने के लिए भवन तथा ५५००) रु० मासिक वेतन मिलता है तथा कुछ भत्ते भी मिलते हैं। इसका वेतन व भत्ते अवधि से पूर्व नहीं घटाये जा सकते।

३. राज्यपाल को निम्न अधिकार भी प्राप्त हैं जिनका वह सदुपयोग कर सकता है:—

(क) व्यवस्थापिका संबंधी अधिकार—राज्यपाल विधान मण्डल का अंग है। विधान मण्डल का अधिवेशन राज्यपाल के निमंत्रण पर होता है। दोनों सदनों को सन्देश भेज सकता है। राज्यपाल विधान मण्डल के प्रत्येक अधिवेशन के प्रारम्भ में उद्घाटन पर भाषण देता है। वह राज्य विधान परिषद् के ६ सदस्यों को नामदज कर सकता है। बिना राज्यपाल की स्वीकृति के कोई बिल पास नहीं हो सकता। वह किसी विधेयक को राष्ट्रपति के परामर्श के लिये रोक सकता है। वह विधेयक को पुनः विचार के लिए विधान मंडल से भेज सकता है। यदि विधान मंडल की बैठक न होती तो राज्यपाल अध्यादेश जारी कर सकता है। राज्यपाल द्वारा जारी अध्यादेश उसी प्रकार मान्य होंगे जिस प्रकार कि विधान मंडल द्वारा बनाये अधिनियम होते हैं। राज्यपाल को इन राज्यों के द्वितीय सदन में कुछ सदस्यों को मनोनीत करने का अधिकार है जहाँ विधान मंडल के दो सदन हैं। राज्यपाल यदि समझे कि विधान सभा में एंग्लो इंडियनों को उचित प्रधिनिधित्व प्राप्त नहीं है तो वह उनके कुछ प्रतिनिधि विधान सभा में मनोनीत कर सकता है।

(ख) कार्यपालिका संबंधी अधिकार—राज्यपाल के नाम प्रांत की सम्पूर्ण शासन व्यवस्था चलाई जाती है। शासन को ठीक ढंग से चलाने के लिये नियम बना सकता है। वह प्रांत के मुख्य मन्त्री की नियुक्ति करता है। मन्त्रियों को पदच्युत करने का भी उसे अधिकार है। राज्य के बड़े २ पदों पर वह नियुक्तियाँ करता है। राज्यपाल का उन सब विषयों पर अधिकार होगा जो राज्य एवं समवर्ती सूची के अन्तर्गत आते हैं। समवर्ती सूची के विषय में वह संघ की सत्ता के आधीन होगा। केन्द्रीय सरकार की दो आज्ञाओं का पालन भी राज्यपाल को करना पड़ता है। राज्यपाल को आंग्ल भारतीय समुदाय के इतने प्रतिनिधि विधान सभा में नियुक्त करने का अधिकार है जितने वह उचित समझे। राज्यपाल को अपने मंत्रियों को चेतावनी, सलाह व उत्साह देने का अधिकार है। राष्ट्रपति द्वारा संकटकालीन घोषणा होने पर राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में कार्य संचालन करता है। वह अपने राज्य मे विधान असफल होने की सम्भावना में राष्ट्रपति को सूचित करता है। कोई भी नया कर लगाने के लिए उसकी स्वीकृति आव-

श्यक है। धन सम्बन्धी मांगें उसकी स्वीकृति बिना प्रस्तुत नहीं की जाती।

(ग) न्याय सम्बन्धी अधिकार—राज्यपाल को उन सभी विषयों, से सम्बन्धित अपराधों के लिए जो राज्य की कार्यपालिका शक्ति के अन्तर्गत आते हैं, अधिकार प्राप्त हैं। राज्यपाल के विरुद्ध उस समय तक कोई अभियोग नहीं चलाया जा सकता जब तक कि वह पद पर है। जिलाधीशों की नियुक्ति व उन्नति राज्यपाल के हाथ में होती है। मृत्यु दण्ड को माफ करने के लिए वह राष्ट्रपति से सिफारिश कर सकता है। किसी भी कानूनी विषय में उच्च न्यायालयों से सलाह ले सकता है।

(घ) धन संबन्धी अधिकार—प्रत्येक वित्तीय वर्ष के आरम्भ के पूर्व राज्यपाल को विधान-मण्डल के सम्मुख आय-व्यय का एक लेखा रखना होगा। वह विधान-मण्डल के सामने पूरक मांग बढ़े हुए खर्चे के लिए उपस्थित कर सकता है। कोई भी नया कर लगाने के लिए राज्यपाल की सिफारिश अत्यावश्यक है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि राज्यपाल को बहुत अधिकार प्राप्त हैं। प्रांत का सम्पूर्ण शासन उसके नाम पर चलाया जाता है। उसे जितने भी अधिकार प्रदान किए गये हैं वे सब वैधानिक हैं। राज्यपाल प्रांत का नामधारी शासक है।

प्रश्न ६—राज्य में मन्त्रिमन्डल किस प्रकार कार्य करता है?

उत्तर—हमारे संविधान के द्वारा राज्यों में भी व्यवस्थापिका की व्यवस्था की गई है जिससे मंत्रिमण्डल का निर्माण किया जाता है। प्रांत का शासन राज्यपाल के नाम पर चलता है, परन्तु उसके अधिकारों का वास्तविक उपयोग मंत्रिमंडल के द्वारा किया जाता है जिसका नेता मुख्य मंत्री होता है। मंत्रिमण्डल के द्वारा ही राज्य की शासन नीति निर्धारित की जाती है। मंत्रिमण्डल के संगठन और उसके कार्य क्षेत्र का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

१. मन्त्रिमण्डल का संगठन व मन्त्रिमण्डल की विशेषतायें—मंत्रिमण्डल की व्यवस्था संविधान के अनुसार राष्ट्रपति को सलाह देने के लिए की गई है इसका प्रधान व्यक्ति प्रधानमन्त्री होता है। प्रधान मंत्री राष्ट्रपति को नियुक्त करता है तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्तियाँ प्रधान

मंत्री करता है। मंत्री उसी समय तक अपने पद पर रहते हैं जब तक कि राष्ट्रपति के विश्वासपात्र हों। मत्रियों के लिए संसद का सदस्य होना आवश्यक है। ऐसा व्यक्ति मंत्री पद पर नियुक्त किया जा सकता है जो संसद का सदस्य न हो किन्तु उसको ६ महीने के अन्दर २ संसद का सदस्य होना आवश्यक है अन्यथा उसे पद से त्याग पत्र देना पड़ेगा। मंत्रिपरिषद् सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी है।

२. मन्त्रिपरिषद् के कार्य निम्नलिखित हैं—

(क) मत्रिपरिषद् का महत्वपूर्ण कार्य धन सम्बन्धी है। धन संबंधी विधेयक मंत्रिपरिषद् के सदस्यों द्वारा ही लोकसभा के सम्मुख भेजे जाते हैं।

(ख) मंत्रिपरिषद् संसद के वैधानिक कार्यक्रम को निश्चित करती है। सरकारी विधेयक मंत्रियों द्वारा ही पेश किये जाते हैं।

(ग) मंत्रिपरिषद् द्वारा संघीय शासन व्यवस्था का संचालन किया जाता है। शासन की समस्त शक्ति मंत्रिपरिषद् के हाथ में होती है।

(घ) मंत्रिपरिषद् सभी कार्यों में एक इकाई के रूप में काम करती है। समय २ पर इसकी बैठकों में प्रत्येक मंत्री अपने विभाग से सम्बन्धित मसले प्रस्तुत करता है। सभी विषयों पर निर्णय बहुमत से पास होता है। अन्तिम निर्णय मंत्रिपरिषद् का ही समझा जाता है।

(ङ) मंत्रिपरिषद् के प्रत्येक निर्णय गुप्त रखे जाते हैं। मन्त्रियों को राष्ट्रपति के सामने इस बात की शपथ लेनी पड़ती है कि प्रत्येक बात का भेद किसी को नहीं देंगे।

(च) मंत्रिपरिषद् की बैठक का सभापति प्रधान मन्त्री होता है।

(छ) विदेशों से राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित करना भी मंत्रिपरिषद् का ही काम है।

(ज) सरकार की गृह व विदेश सम्बन्धी नीति का निर्धारण मंत्रिपरिषद् करती है।

प्रश्न ७—राज्य के शासन में न्याय विभाग के संगठन व उसके अधिकारों का वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारत में संघात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण न्याय-

पालिका को पूर्ण रूप से स्वतन्त्र रखा गया है। सारे देश की न्याय-व्यवस्था के लिए सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई है। न्याय का कार्य इतना विस्तृत है कि प्रत्येक कार्य को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक राज्य में एक स्वतन्त्र न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है जिसे उच्च न्यायालय कहते हैं। राजस्थान में भी इसी प्रकार का एक उच्च न्यायालय है जिसके द्वारा राज्य की न्याय-व्यवस्था को संचालित किया जाता है।

१. **उच्च न्यायालय का संगठन**—प्रत्येक प्रांत के उच्च न्यायालयों में एक मुख्य न्यायाधीश व कुछ न्यायाधीश होते हैं जिनकी संख्या निश्चित नहीं होती है। इसका निर्णय राष्ट्रपति पर छोड़ गया है। वह आवश्यकतानुकूल संख्या घटा व बढ़ा सकता है। मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। वह नियुक्ति करते समय सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और प्रांत के राज्यपाल से सलाह लेता है। सहायक न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशों की सिफारिश पर की जाती है। न्यायाधीश के लिए यह आवश्यक है कि वह भारत का नागरिक हो। ६० वर्ष की आयु तक अपने पद पर कार्य कर सकता है। वह किसी न्यायालय में १० वर्ष तक कार्य कर चुका हो। आधीन न्यायालयों में १० वर्ष तक न्याय पद पर कार्य कर चुका हो। राष्ट्रपति की दृष्टि में विधि का कुशल ज्ञाता हो।

२. **उच्च न्यायालय का कार्य-क्षेत्र निम्नलिखित है।**

(क) मौलिक अधिकार सम्बन्धी कोई भी अभियोग चलाया जा सकता है।

(ख) उच्च न्यायालय की अपील सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं। आधीन न्यायालय में क्लर्क व चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी की नियुक्ति करने का अधिकार है।

(ग) उच्च न्यायालय न्याय प्राप्ति का अन्तिम न्यायालय होता है और समस्त न्यायालय उसके आधीन हैं।

(घ) राज्य के आधीन न्यायालयों के लिए नियम और उपनियम बनाना व निरीक्षण करने का अधिकार उच्च न्यायालय को प्राप्त है।

(ङ) आधीन न्यायालयों के अभिलेख आदि को मँगवाकर जाँच-पड़ताल करने का अधिकार उच्च न्यायालयों को प्राप्त है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त न्यायालयों को न्यायपालिका सम्बन्धी विस्तृत अधिकार दिए गये हैं। वास्तव में देखा जाये तो प्रजातन्त्र शासन की सफलता के लिए भी स्वतन्त्र न्यायपालिका की सबसे बड़ी आवश्यकता है। हमारे संविधान के द्वारा भी न्यायपालिका को व्यापक अधिकार दिए गये हैं।

प्रश्न ८—प्रजातन्त्र शासन व्यवस्था में राजनैतिक दलों का क्या महत्व होता है? भारत के प्रमुख राजनीतिक दलों का परिचय दीजिये।

उत्तर—प्रजातन्त्र शासन को जनता का शासन कहते हैं। प्रजातंत्र शासन जनमत पर आधारित होता है। जनमत का निर्माण विभिन्न राजनैतिक दलों के द्वारा किया जाता है और बहुमत राजनैतिक दल के द्वारा सरकार का निर्माण किया जाता है। प्रजातन्त्र में साधारणतः दो प्रकार के दल होते हैं—प्रथम शासक दल और दूसरा विरोधी दल। भारत में राजनैतिक दलों की भरमार है, परन्तु शक्तिशाली दल बहुत थोड़े हैं। भारत के प्रमुख राजनैतिक दलों का विवरण दिया जाता है।

१. इण्डियन नेशनल कांग्रेस—इसकी स्थापना १८८२ में ह्यूम द्वारा की गई थी। कांग्रेस ने १८८५ से १९४७ तक लगातार अंग्रेजी सरकार से संघर्ष किया व भारत आजाद कराया। इसके कार्य नीचे दिये जाते हैं:—

(क) सम्पूर्ण देश में राष्ट्रीय एकता की व्यवस्था करना, जातिवाद व साम्प्रदायिकता को समाप्त करना है।

(ख) मिली-जुली आर्थिक व्यवस्था स्थापित करने के पक्ष में है।

(ग) जमींदारी प्रथा को नष्ट कर ऐसी व्यवस्था को स्थापित करना है, जिससे देश के धन का समान वितरण हो सके व प्रत्येक व्यक्ति को समान रूप से उन्नति करने का अवसर प्राप्त हो।

(घ) विदेश नीति के दृष्टिकोण से अन्तर्राष्ट्रीयता का पक्षपाती है। शांति के साधनों में इनका विश्वास है।

(ङ) बड़े २ उद्योगों के राष्ट्रीकरण के पक्ष में है, मगर एक साथ नहीं। धीरे २ उद्योगों को अपने हाथ में लेने के पक्ष में है।

(च) शिक्षा में परिवर्तन करने के पक्ष में है।

२. भारतीय जनसङ्घ—इसके संस्थापक स्वर्गीय डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी थे। इसकी स्थापना १९५१ में की थी। इस दल के कार्य निम्न प्रकार हैं:—

(क) भारतीय संस्कृति और प्राचीन परम्परा के आधार पर देश का पुनः निर्माण करना।

(ख) अखण्ड भारत के पक्ष में है। एकता स्थापित करने के लिए शांतिपूर्ण उपायों के पक्ष में है।

(ग) पाकिस्तान के प्रति "जैसी की तैसी" नीति अपनाने के पक्ष में है।

(घ) अल्प संख्यकों और विस्थापितों की सम्पत्ति का तुरन्त निर्माण करने के पक्ष में है।

(ङ) राष्ट्रीकरण की नीति में विश्वास है।

३. साम्यवादी दल– इस दल का जन्म १९२४ में हुआ। शुरू में इस दल ने कांग्रेस के साथ काम किया, द्वितीय विश्व युद्ध के समय कांग्रेस से अलग हो गया। १९५१ में निर्वाचन के समय इस दल ने निम्न कार्य किये।

(क) समस्त उद्योगों के राष्ट्रीकरण के पक्ष में।

(ख) मजदूरों को ऊँचा उठाने के पक्ष में है।

(ग) अल्प संख्यक वर्ग के अधिकारों की रक्षा के पक्ष में है।

(घ) निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना चाहता है।

(ङ) आर्थिक विषमता को नष्ट कर धन का समान विवरण करने के पक्ष में है।

(च) विना मुआवजे के जमींदारी प्रथा को समाप्त करने, तथा किसानों के करों को समाप्त करने के पक्ष में है।

(छ) नागरिकों को पूर्ण रूप से स्वतन्त्रता दिलाने के पक्ष में है; तथा उसके साथ समानता का व्यवहार करने का पक्षपाती है।

४. प्रजा समाजवादी दल—समाजवादी दल और किसान दल ने मिलकर १९५३ में एक नये राजनैतिक दल का निर्माण किया है। इसके निम्नलिखित कार्य हैं—

(क) राज्यपालों के पद को समाप्त करने के पक्ष में है।

(ख) राज्यों के वर्गीकरण के पक्ष में नहीं है।

(ग) द्वितीय सदन को, जिन राज्यों में वे हैं खत्म करने के पक्ष में है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रजातन्त्र शासन की सफलता के लिए राजनैतिक दल की सबसे बड़ी आवश्यकता है राजनैतिक दलों का निर्माण रचनात्मक दृष्टिकोण से किया जाना चाहिये, अन्यथा इन दलों के द्वारा देश का विनाश भी हो सकता है।

प्रश्न ९—निम्नलिखित पर संक्षेप में लिखिये—

१. राष्ट्रपति का चुनाव २. मंत्रिपरिषद का सामूहिक उत्तरदायित्व ३. लोक सभा का सङ्गठन ४. राज्य की विधानसभा के कार्य व अधिकार ५. लोक-सेवा आयोग ६. चुनाव आयोग ७. संघ सरकार व राज्य सरकारों के बीच सम्बन्ध ८. वयस्क मताधिकार।

उत्तर—राष्ट्रपति का चुनाव—राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से एक निर्वाचन मण्डल द्वारा होता है, जिसमें संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य तथा राज्य की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य शामिल होते हैं। निर्वाचन मण्डल में मनोनीत सदस्यों को स्थान नहीं दिया जाता है। चुनाव अनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली के आधार पर एक परिवर्तनीय मत द्वारा गुप्त रीति से होता है अर्थात् प्रत्येक सदस्य निर्वाचक अपने सभी मत किसी एक ही विद्यार्थी को देगा। निर्वाचित होने के लिए ५१ प्रतिशत मतों का मिलना अनिवार्य है। राज्य की विधान सभा के निर्वाचित प्रत्येक सदस्य की मतसंख्या जानने के लिए प्रत्येक राज्य की जनसंख्या को विधान सभा के कुल निर्वाचित सदस्यों की संख्या से भाग दे दिया जाता है तथा भागफल को १००० से भाग दे दिया जाता है। इसी प्रकार संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों

की मतसंख्या का योग सब राज्यों की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्यों की मतसंख्या के योग के बराबर होगा।

२. मन्त्रिपरिषद् का सामूहिक उत्तरदायित्व—नवीन संविधान के अन्तर्गत मंत्रि-परिषद् में एकता व संगठन बनाये रखने के लिए मंत्रि-परिषद् का उत्तरदायित्व संयुक्त रखा गया है। जो निम्न प्रकार से है—

(क) यदि प्रधान मंत्री त्याग पत्र दे देता है तो अन्य सभी मंत्रियों को त्याग पत्र देना पड़ता है।

(ख) यदि लोक सभा प्रधान मंत्री या अन्य किसी भी मंत्री के प्रति अविश्वास पास कर देती है तो केवल उस मंत्री विशेष को ही नहीं अपितु समस्त मंत्रि-परिषद को अपदस्त होना पड़ता है।

इस प्रकार मंत्रि-मण्डल एक इकाई के रूप में डूबता उतरता है। संविधान में लिखा है कि "राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यन्त मंत्री अपने पद धारण करेंगे।"

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि मंत्रि-परिषद् में प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तिगत उत्तरदायित्व तो होता ही है, परन्तु उससे अधिक महत्वपूर्ण सामूहिक उत्तरदायित्व है जिसके आधार पर सरकार की शासन नीति निर्धारित की जाती है।

३. लोकसभा का संगठन—लोक सभा हमारी संसद का निम्न सदन है जिसके सदस्य जनता के द्वारा प्रत्यक्ष रूप में गुप्तदान प्रणाली के द्वारा वयस्क मताधिकार पर चुने जाते हैं। हमारे संविधान के द्वारा लोकसभा के सदस्यों की संख्या ५०० निर्धारित की गई है। लोकसभा का सदस्य चुने जाने वाले व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताओं का होना आवश्यक है।—

(क) भारत का नागरिक हो।

(ख) उसकी आयु २५ वर्ष से कम न हो।

(ग) वे सब योग्यतायें हों जो संसद समय समय पर निर्धारित करती है।

लोकसभा का कार्य संचालन करने के लिए दो अधिकारी होते हैं। एक अध्यक्ष और दूसरा उपाध्यक्ष। इनका निर्वाचन लोक सभा के सदस्यों में से ही किया जाता है। इस समय भारतीय लोकसभा के अध्यक्ष अनन्त

शयनम् आयंगर और उपाध्यक्ष श्री हुकमसिंह हैं। लोकसभा के द्वारा निम्न-लिखित कार्य किये जाते हैं।

(क) प्रस्ताव प्रस्तावित करना।

(ख) संविधान में संशोधन करना।

(ग) देश की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिनियम बनाना।

(घ) संघ सरकार से सम्बन्धित विषयों का प्रश्न पूछना।

४. राज्य की विधान सभा के कार्य व अधिकार—हमारे संविधान के द्वारा प्रत्येक राज्य में व्यवस्थापिका मंडल की व्यवस्था की गई है, जिसे प्रान्त में विधान सभा कहते हैं। विधान सभा के सदस्यों का निर्वाचन भी गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा वयस्क मताधिकार के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। राजस्थान में एक सदन वाली व्यवस्थापिका है। इसका कार्य काल ५ वर्ष तक होता है और विशेष परिस्थितियों में राज्यपाल द्वारा इसका कार्यकाल एक वर्ष के लिये बढ़ा दिया जाता है। विधान सभा के निम्नलिखित अधिकार हैं।

(ख) व्यवस्थापिका संबन्धी अधिकार—राज्य सूची तथा समवर्ती सूची के अन्तर्गत विषयों पर कानून बनाने का अधिकार है। संविधान सभा ही राज्य की वास्तविक व्यवस्थापिका होती है। वास्तविक सत्ता उसी के पास होती है। विधान परिषद् तो एक परिशिष्ट के समान होती है।

(ख) धन संबंधी अधिकार—जिस प्रकार केन्द्र में वित्त पर नियन्त्रण रखने का अधिकार निम्न सदन को प्राप्त है उसी प्रकार राज्य में भी वित्तीय नियन्त्रण का अधिकार निम्न सदन (विधान सभा) को ही प्रदान किया गया है। प्रत्येक वित्तीय वर्ष के आरम्भ में राज्य सरकार की अनुमानित प्राप्ति तथा व्यय का विवरण राज्यपाल द्वारा विधान सभा के सामने पेश कराया जाता है।

(ग) कार्यपालिका संबंधी अधिकार—विधान सभा राज्य की कार्यपालिका पर ही नियन्त्रण रखती है, संविधान के अनुसार मंत्रि-परिषद् सामूहिक रूप से विधान सभा के सामने उत्तरदायी होती है। मन्त्री तभी तक अपने पद पर रहते हैं जब तक उनको विधान सभा के बहुमत सदस्यों का विश्वास प्राप्त रहता है। जैसे ही बहुमत का विश्वास

उठ जाता है, उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास करके मन्त्रियों को उनके पद से हटाया जाता है।

वर्तमान युग में विधान सभा का कार्य-क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो गया है। राज्य की शासन सम्बन्धी नीति भी व्यवस्थापिका द्वारा ही स्वीकृत की जाती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि राज्य की शासन सत्ता विधान सभा के हाथ में है, जिसके प्रतिनिधि जनता द्वारा चुने जाते हैं।

५. लोक सेवा आयोग—कोई भी सरकार उस समय तक भली प्रकार कार्य नहीं कर सकती जब तक कि उसके पास योग्य कर्मचारी न हों। ऐसे योग्य कर्मचारी की नियुक्ति के लिये कुछ आवश्यक व्यवस्था करनी पड़ती है। लोक-सेवा-आयोग इसी प्रकार की व्यवस्था है। यह एक समिति है जिसके सदस्य अत्यन्त अनुभवी, योग्य एवं व्यक्ति पारखी होते हैं। भारत में योग्य एवं ईमानदार कर्मचारियों की नियुक्ति की दृष्टि से संघ सरकार के अन्तर्गत संघ, लोक सेवा आयोग तथा राज्यों में राज्य लोक सेवा आयोगों की स्थापना की गई है। प्रत्येक आयोग का एक अध्यक्ष तथा कुछ सदस्य होते हैं। केन्द्रीय लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा अन्य सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। लोक-सेवा-आयोग का प्रधान कार्य विभिन्न सरकारी विभागों के लिये योग्य कर्मचारियों का चुनाव करना तथा उनका वेतन निश्चित करना है। दलगत राजनीति से दूर रह कर परीक्षा तथा साक्षात्कार द्वारा ये अपना उद्देश्य पूर्ण करने का प्रयास करते हैं। ये कर्मचारियों के हितों में नियम बनाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रजातन्त्र राज्यों में लोक-सेवा-आयोगों का बड़ा महत्व है। यदि इसके सदस्य सिफारिशों को महत्व न दें तो निश्चय ही वे देश की महान् सेवा कर सकते हैं।

६. चुनाव आयोग—भारतीय संविधान के द्वारा चुनाव आयोग का निर्माण किया गया है। इसका प्रमुख अधिकारी चुनाव आयुक्त कहलाता है। इसमें अन्य सदस्य होते हैं जिनकी संख्या समय २ पर राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित की जाती है। राज्य में चुनाव व्यवस्था के लिए प्रादेशिक चुनाव आयुक्त की नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा की जाती है। इसकी अवधि राष्ट्रपति द्वारा निश्चित की जाती है। इनको संसद के बहुमत से हटाया

जा सकता है। यह आयोग निर्वाचनों का निरीक्षण, निर्देशन तथा नियन्त्रण करता है। यह संसद, राज्य विधान मण्डलों, राष्ट्रपति और गणराष्ट्रपति के चुनाव के लिए निर्वाचन सूची तैयार करता है। चुनाव सम्बन्धी झगड़ों का निर्णय करने के लिए न्यायाधिकरण की नियुक्ति करता है।

७. संघ सरकार और राज्य सरकारों के बीच संबंध—हमारे नवीन संविधान के अनुसार भारत में संघात्मक शासन व्यवस्था है। संघात्मक शासन व्यवस्था में दो प्रकार की सरकारें होती हैं। केन्द्रीय सरकार जिसके द्वारा सम्पूर्ण देश की शासन व्यवस्था संचालित की जाती है। राज्य सरकारों के द्वारा अपने-अपने राज्यों की व्यवस्था की जाती है। राज्य सरकारें केन्द्रीय सरकार की इकाई के रूप में कार्य करती हैं। ऐसी स्थिति में केन्द्र और राज्य सरकारों के मध्य घनिष्ट सम्बन्ध होता है। भारतीय संविधान के अनुसार सारे राजकीय विषयों की तो सूची है। प्रथम सूची ऐसी है जिसके अन्तर्गत ऐसे विषय हैं जो कि समस्त संघ के राज्यों में समान रूप से सम्बन्ध रखते हैं। जैसे रेल, पत्र, डाक, व्यापार आदि। ऐसे विषयों पर संघीय सरकार अपना प्रबन्ध रखती है। दूसरी सूची ऐसी है जिसमें राज्य सरकारों के ऐसे विषय हैं जिनको राज्य सरकार देखती है जैसे भूमि, सिंचाई, जेल आदि। ऐसे विषयों में भी जो विवादग्रस्त मामले होते हैं उन पर केन्द्रीय सरकार की राय मानने योग्य होती है। तीसरी सूची समवर्ती होती है जिसमें ऐसे विषय होते हैं जिनके ऊपर केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय सरकार भी अपना हाथ रख सकती है, परन्तु इन विषयों में भी केन्द्रीय या संघीय सरकार के आदेश राज्य सरकारों को माननीय होंगे। जब संघ देखता है कि राज्यों में कोई वैधानिक संकट आया हुआ है तो राज्य की आंतरिक शांति को बनाये रखने के लिये उस राज्य की सरकार को हटाकर उस राज्य का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लेता है। केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों के केन्द्रीय मत विषयों के भागस्वरूप आय के साधनों से प्राप्त आय का बंटवारा करती है तथा जरूरत के समय ऋण भी देती है। प्रत्येक दृष्टि से राज्य सरकारों पर केन्द्रीय सरकार का नियंत्रण रहता है और सरकारों का संगठन पूर्णतः केन्द्रीय सरकार की कृपा पर निर्भर है।

८. वयस्क मताधिकार—प्रजातन्त्र शासन में मताधिकार का विशेष महत्व है। मताधिकार कई प्रकार के होते हैं परन्तु उनमें वयस्क मताधिकार सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इस प्रकार की शासन व्यवस्था में प्रमुख समस्या यह होती है कि मत देने का अधिकार किन २ व्यक्तियों को दिया जावे। इस विषय में दो मत प्रचलित हैं। कुछ राजनीतिज्ञों का कहना है कि सर्वोच्च सत्ता जनता के हाथ में होती है इसलिए व्यक्ति को मत देने का अधिकार होना चाहिये। इसके विपरीत कुछ राजनीतिज्ञों का कहना है कि मत देने का अधिकार केवल उन्हीं व्यक्तियों को मिलना चाहिए जिनके पास योग्यता हो अथवा सम्पत्ति हो। वयस्क मताधिकार का अभिप्राय यह है कि देश के प्रत्येक नागरिक को जो कि बालिग हो बिना किसी भेद-भाव के मत देने का अधिकार होना चाहिए। हमारे देश में भी इसी मतदान प्रणाली को अपनाया गया।

प्रश्न १०—रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।

उत्तर—रिक्त स्थानों की पूर्ति नीचे की गई है।

१. प्रधानमन्त्री केन्द्रीय कार्यपालिका का अध्यक्ष है।

२. प्रधानमन्त्री लोक सभा के बहुमत दल का नेता होता है।

३. संसद राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाकर उसे पद से हटा सकता है।

४. राष्ट्रपति से प्रधानमन्त्री अधिक शक्तिशाली है।

५. राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

६. राज्य के मन्त्रिमंडल का प्रधान मुख्यमन्त्री कहलाता है।

७. विधान सभा के सदस्य ५ वर्ष के लिए चुने जाते हैं।

८. राष्ट्रीय ध्वजा में केसरिया, सफेद व हरा रंग है।

९. जन-गण-मन गीत की रचना रवीन्द्रनाथ टैगोर ने की।

१०. देश में दूसरे आम चुनाव सन् १९५७ में हुए।

अध्याय २

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण तथा समाजवादी ढंग का समाज

प्रश्न १—समाजवादी ढांचे से क्या तात्पर्य है ? संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—यद्यपि हमको राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त किये हुए काफी समय हो गया लेकिन हमें अभी सामाजिक, आर्थिक तथा नैतिक स्वतन्त्रतायें प्राप्त करने के लिये बहुत कुछ करना है। इनके प्राप्त किये बिना हमारी राजनैतिक स्वतंत्रता अपूर्ण है। प्रत्येक स्वतन्त्र देश की सरकार का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि देश के हर नागरिक की तीन प्राथमिक आवश्यकताओं अर्थात् भोजन, वस्त्र व मकान की पूर्ति करे। कृषकों को कृषि के लिए पर्याप्त भूमि दे, बेकारों को काम-धन्धा देने की व्यवस्था करे, औद्योगिक विकास किया जाय, आर्थिक व सामाजिक असमानताओं को दूर किया जाय शिक्षा का प्रचार हो जिससे अज्ञानता व अन्धविश्वास मिटे, हर नागरिक को समान अवसर प्राप्त हों जिससे वह अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके।

उपर्युक्त बातों को अगर हम अपने देश पर लागू करके देखें तो हमको मालूम होगा कि अभी तक नागरिकों को जो सुविधायें मिलनी चाहियें वे पर्याप्त मात्रा में नहीं मिली हैं। देश में अभी तक गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी आदि का अन्त नहीं हुआ है। अतः भारत को अपने आर्थिक ढांचे में परिवर्तन करना होगा। इसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सन् १९५५ में भारतीय कांग्रेस के आवड़ी कांग्रेस अधिवेशन में देश में समाजवादी ढांचे की समाज व्यवस्था को स्थापित करने का निश्चय किया गया। इस समाजवादी ढांचे का उद्देश्य ऐसे समाज की स्थापना करना है। जिससे—

(१) प्रत्येक मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास होगा। हर नागरिक को समान अवसर प्राप्त होगा जिससे वह अपने व्यक्तित्व का विकार कर

सके। (२) हर प्रकार के शोषण की समाप्ति होगी। (३) समतापूर्ण वितरण होगा। देश की वर्तमान आर्थिक असमानताओं को दूर किया जायेगा व धन का समान वितरण होगा। (४) सामाजिक निष्पक्षता और सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था होगी। (५) पूर्ण रोजगार की अवस्था को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जायेगा। (६) आधारभूत उद्योग धन्धों की स्थापना कर उत्पादन बढ़ाया जायेगा। (७) आर्थिक व सामाजिक परिवर्तन शान्तिपूर्ण तथा अहिंसात्मक तरीकों से लाया जायेगा।

अतः इस समाजवादी ढांचे को अपनाकर हम देश में वर्गहीन समाज की स्थापना कर सकेंगे। हर नागरिक की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी।

प्रश्न २—लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण से आप क्या समझते हैं ? राजस्थान में इसका क्या रूप है ?

उत्तर—केन्द्रीकरण में सत्ता एक स्थान पर केन्द्रित रहती है और शासन का संचालन कुछ प्रमुख व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जबकि विकेन्द्रीकरण में इस सत्ता को बाँट दिया जाता है। प्रत्येक नागरिक को प्रशासन में हिस्सा लेने का अवसर मिलता है।

देश की ८० प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। जब तक ग्रामीण निवासियों के जीवन स्तर व इनके दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन नहीं आयेगा तब तक हमारी विकास योजनायें अधूरी ही रहेंगी। इसी उद्देश्य को दृष्टि में रखकर ग्रामों के विकास के लिए सामुदायिक विकास योजनाओं का कार्य आरम्भ किया गया। इन योजनाओं द्वारा कई क्षेत्रों में हमको सफलता भी प्राप्त हुई। लेकिन इन विकास कार्य का सबसे बड़ा दोष यह रहा कि इनके बनाने में ग्रामवासियों का कोई हाथ नहीं रहा। केन्द्र व राज्य की राजधानियों में विकास योजनायें बनायी थीं। अतः यह स्वाभाविक है कि ग्रामीणों में इनके प्रति कोई उत्साह का संचार नहीं हुआ। सरकार को जितना सहयोग इन कार्यों के लिए मिलना चाहिए था उतना जनता द्वारा प्राप्त नहीं हुआ।

अतः सरकार ने श्री बलवन्तराय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का सन् १९५६ में गठन किया। समिति के विभिन्न पहलुओं पर छानबीन

करने के बाद अपनी रिपोर्ट पेश की और सुझाया कि योजनाओं के कार्य-क्रम को बनाते समय व लक्ष्य निर्धारित करते समय स्थानीय जनता की राय ली जाय। जनता में विकास कार्यों के लिए उत्साह पैदा करने के लिए देश में लोकतन्त्रीय विकेन्द्रीकरण की स्थापना की जाय। अतः सरकार ने मेहता समिति की सिफारिशों पर ध्यान देते हुए भारत के कई राज्यों में पंचायती राज्य की स्थापना की। इन पंचायती राज्यों की स्थापना हो जाने से गाँवों के विकास कार्यों के सारे अधिकार पंचायतों को मिल गये तथा इन कार्यों को क्रियान्वित करने के लिए ग्रामीणों की राय ली जाने लगी। इस प्रकार महात्मा गाँधी की ग्राम राज्य कल्पना भी सरकार रुप में परिवर्तित हो गई और यही कार्य विनोबा अपने सर्वोदय समाज द्वारा कर रहे हैं।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना से एक ऐसे समाज का निर्माण हुआ है जिससे प्रत्येक ग्रामीण अपने गांव की उन्नति का भार अपने कन्धों पर समझता है, क्योंकि प्रत्येक विकास कार्य के लिए उसकी राय ली जाती है। विकेन्द्रीकरण की योजना में यह भावना निहित है कि विकास योजना में स्थानीय व्यक्ति का बहुत महत्व रहता है। उनके द्वारा ही योजना सफलतापूर्वक क्रियान्वित की जा सकती है। अतः स्वाभाविक है कि प्रत्येक ग्रामवासी इन विकास कार्यों में बड़ी दिलचस्पी से भाग लेते हैं।

१. राजस्थान में विकेन्द्रीकरण—राजस्थान में सन् १९५९ में 'राजस्थान पंचायत समिति और जिला परिषद् अधिनियम' स्वीकार किया गया और इसी अधिनियम के अन्तर्गत पंचायत समिति और जिला परिषद् का निर्माण हुआ। कृषि, पशुपालन, स्वास्थ्य, शिक्षा, छोटे उद्योग आदि विकास कार्यों का भार इसी अधिनियम के अनुसार पंचायत समिति व जिला परिषदों को हस्तान्तरित कर दिया गया।

२. पंचायत समिति—राजस्थान के अन्य दूसरे राज्यों से पहिले २ अक्टूबर, १९५९ से सत्ता ने विकेन्द्रीकरण के लिए एक महान् कदम उठाया। सम्पूर्ण राजस्थान को २३२ खण्डों में विभाजित करके प्रत्येक खण्ड में पचायत समिति का गठन किया गया। समिति का अध्यक्ष

इस समिति में एक कृषि निपुण, दो महिलायें,

अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित आदिम जातियों के प्रतिनिधि खण्ड की सहकारी संस्था की प्रबन्ध समिति एक सदस्य व दो ऐसे सदस्य लिये जाते हैं जिन्हें जन जीवन या ग्राम विकास के कार्यों का अनुभव हो राज्य की विधान सभा का सदस्य सहयोगी सदस्य के रूप में होता है । समिति का कार्यकाल ३ वर्ष का होता है।

३. पंचायत समिति के कार्य—सामुदायिक विकास, कृषि सम्बन्धी कार्य, सिंचाई योजनाओं का निर्माण, पशुपालन, स्वास्थ्य व सफाई, प्राथमिक शिक्षा, समाज-सेवा एवं समाज-शिक्षा, सहकारी समिति, कुटीर व्यवसाय का विकास, मनोरंजन के कार्य, पिछड़े वर्ग की उन्नति के लिये कार्य आदि हैं ।

उपर्युक्त कार्यों को करने के प्रत्येक पंचायत समिति पर जिम्मेदारी होती है और इन कार्यों को सफलतापूर्वक करने का भरसक प्रयत्न करती है ।

४. जिला परिषद—प्रत्येक जिले मे एक जिला परिषद् के हिसाब से २६ जिला परिषदें स्थापित करने की व्यवस्था की गई । जिला परिषद् में जिले की समस्त पंचायत समितियों के प्रधान, उस जिले में रहने वाला संसद सदस्य, दो महिलायें, अनुसूचित तथा अनुसूचित जनजाति का एक एक प्रतिनिधि, ग्राम विकास सम्बन्धी अनुभवी, व्यक्ति सम्मिलित किये जाते हैं । जिला विकास अधिकारी इसका सम्मानित सदस्य होता है और वह पंचायत समिति के निर्णयों को तथा स्थायी समितियों के प्रस्तावों को कार्यान्वित करता है । जिला परिषद् का कार्यकाल भी तीन वर्ष का होता है व इसके अध्यक्ष को 'प्रमुख' कहा जाता है । जिला परिषद् पंचायत समितियों की देखभाल करती है व राज्य सरकार से विभिन्न कार्यों के लिये अनुदान प्राप्त कर उनको वितरण करती है। राज्य सरकार द्वारा कुछ कर लगाने के अधिकार भी पंचायत समितियों को सौंप दिये गये हैं। कर जांच आयोग का यह सुझाव था कि पंचायत समितियों को मालगुजारी उगाहने का भी अधिकार दिया जाय व मालगुजारी की पन्द्रह प्रतिशत आय पंचायत को मिले ।

विकेन्द्रीकरण की योजना में राजस्थान राज्य ने एक विशेष स्थान प्राप्त किया है । राजस्थान ने इस ओर सर्वप्रथम कदम उठाकर

राज्यों का पथ-प्रदर्शन किया है। पंचायत समितियों को इस योजना के क्रियान्वित होने से राज्य सरकारों द्वारा कुछ महत्वपूर्ण अधिकार व उत्तरदायित्व हस्तांतरित हुये हैं। ग्रामवासियों में एक नई चेतना का प्रादुर्भाव हुआ है। समिति के सदस्यों की निकट सम्पर्क से वे योजनाओं के बारे में समझने व उनमें दिलचस्पी लेने लगे हैं। वे अपनी कठिनाइयों को सदस्यों के सामने रखते हैं। ग्रामवासियों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन आया है। वे अब यह अनुभव करने लगे हैं कि आपस के सहयोग द्वारा कृषि, उद्योग, शिक्षा, यातायात, गृह निर्माण, चिकित्सा, स्वास्थ्य आदि में काफी उन्नति कर सकते हैं तथा अपने गांव को समृद्धिशाली बना सकते हैं।

राजस्थान के गांवों की ८० लाख जनसंख्या ने इस वर्ष ग्राम पंचायतों के चुनावों में भाग लिया है तथा परिणाम सन्तोषजनक है। अतः हमको गाँवों में अनुकूल वातावरण व परिस्थिति पैदा करते हुए विकेन्द्रीकरण की योजना को सफल बनाने के लिये भागीरथ प्रयत्न करना है।

प्रश्न ३—राजस्थान में पंचायत समितियों के कार्यों पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

उत्तर—राजस्थान में सन् १९५९ में 'राजस्थान पंचायत समिति और जिला परिषद् अधिनियम' स्वीकार किया गया और इसी नियम के अन्तर्गत पंचायत समिति और जिला परिषद् का निर्माण हुआ। इसी नियम के अनुसार कृषि, पशुपालन, स्वास्थ्य, शिक्षा, छोटे उद्योग आदि विकास कार्यों का भार इन पर छोड़ दिया गया।

पंचायत समितियों द्वारा कृषि की उन्नति के लिए ग्रामवासियों में अच्छे बीजों व खाद के वितरण के लिए व्यवस्था की गई। किसानों को सुधरे तरीकों से खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया गया जिससे प्रति एकड़ पैदावार बढ़ सके। इसी प्रकार सिंचाई के साधनों में उन्नति कर कृषि की पैदावार बढ़ाने का प्रयत्न किया गया। ग्रामीणों को अच्छी नस्ल के पशु दिये गये। हजारों की तादाद में प्राथमिक शिक्षालय खोले गये जिनमें ग्रामीण बच्चे शिक्षा प्राप्त करते हैं और इसी प्रकार प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र खोले गये जिनमें प्रौढ़ व्यक्ति शिक्षा ग्रहण करते हैं। शिक्षा का प्रसार होने से ग्रामीण के दृष्टिकोण में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया। वे

सामुदायिक विकास योजनाओं को समझने लगे और उनमें सक्रिय रूप में भाग लेने लगे। हजारों की संख्या मे स्वास्थ्य केन्द्र, मातृ कल्याण केन्द्र, व शिशु कल्याण केन्द्र खोले गये। लाखों ग्रामीणों ने इन केन्द्रों से स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया। गांवों में सहकारी समितियों की स्थापना की गई। इन समितियों द्वारा किसान मिलजुल कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इनसे पूंजीपतियों के आर्थिक शोषण से छुटकारा मिलता है। इनके द्वारा कृषि, उद्योग, व्यापार आदि में उन्नति होती है। पंचायत समितियों द्वारा गांवों में कुटीर व्यवसाय का भी विकास किया गया। इनके विकास से काफी ग्रामीणों को रोजगार मिला। इन उद्योगों के विकास के लिए सरकार की ओर से संरक्षण प्रदान किया जाता है। इन उद्योगों के द्वारा हाथ से बनी चीजों के प्रति रुचि पैदा होती है अर्थात् हस्त-कला के प्रति लोग आकर्षित होते है। इन समितियों द्वारा मनोरंजन व पिछड़े वर्ग की उन्नति के लिए भी कार्य किए गये हैं।

इनके अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा कुछ कर लगाने के अधिकार भी पंचायत समितियों को सौंप दिये गए हैं ताकि वे इस आय को विकास-कार्यों पर खर्च कर सकें। कर जाँच आयोग के सुझाव के अनुसार पंचायतों को मालगुजारी वसूल करने का अधिकार भी मिलना चाहिए तथा इस माल-गुजारी की १५ प्रतिशत आय पंचायत के पास रहनी चाहिए।

अत: पंचायत समितियों द्वारा हम देखते हैं कि गाँवों का काया पलट हो रहा है। सर्वांगीण उन्नति के लिए भरसक प्रयत्न किए जा रहे हैं। ग्रामीणों के अन्दर इन योजनाओं के प्रति उत्साह पैदा करने का वातावरण पैदा किया जा रहा है। जहाँ तक पंचायत समितियों का गठन कर गाँवों की उन्नति करने का प्रश्न है राजस्थान ने अन्य राज्यों से सर्वप्रथम महत्व-पूर्ण कदम उठाकर विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है।

प्रश्न ४—भारत में समाजवादी ढाँचे का क्या रूप है? उस पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सन् १९५५ आवड़ी अधिवेशन में देश में समाजवादी ढाँचे की/समाज व्यवस्था का निर्माण करने का निश्चय किया। इसी अवसर पर भारत के प्रधान मंत्री श्री नेहरू ने समाजवादी ढाँचे की व्याख्या की व्याख्या करते हुए कहा, "भारत को अपन

निज का समाजवादी ढांचा विकसित करना होगा। भारत जनतांत्रिक और शांतिमय तरीकों से समाजवादी व्यवस्था कायम करेगा। उसमें हिंसा और किसी एक वर्ग के अधिनायकवाद को कोई स्थान नहीं होगा। उस समाजवादी व्यवस्था में सभी को रोजगार मिलेगा, अधिकतम धनोत्पत्ति होगी और धन का समान बटवारा होगा।

अतः स्पष्ट है कि भारत की समाजवादी व्यवस्था अन्य देशों में प्रचलित समाजवादी व्यवस्था से भिन्न होगी जिसमें किसी प्रकार का शोषण नहीं होगा। प्रत्येक नागरिक को यह विकास करने की बराबर और पूरी सुविधा होगी, धन का सामान वितरण होगा तथा देश, जाति व वर्ग विहीन समाज का निर्माण होगा।

आवड़ी अधिवेशन से जिस प्रस्ताव के अनुसार कांग्रेस ने भारत में समाजवादी ढांचे की व्यवस्था को स्थापित करने की घोषणा की वह इस प्रकार है—

"कांग्रेस विधान में जो लक्ष्य निर्धारित किया गया है उसकी प्राप्ति के लिये तथा भारत के सविधान में जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है उनकी प्राप्ति के लिए भारत में समाजवादी व्यवस्था को स्थापित करने के लिए योजना को कार्यान्वित किया जाना चाहिए जिसमें उत्पादन के मुख्य साधनों पर राज्य अर्थात् समाज के प्रतिनिधियों का नियन्त्रण होगा। यह नियन्त्रण उत्पादन के विस्तार और समान धन वितरण के हित में है।"

प्रस्ताव के प्रमुख अंग—(१) लोक कल्याणकारी राज्य तथा समाजवादी अर्थ व्यवस्था की स्थापना, देश का आयोजित विकास और धन का समान वितरण होना चाहिए। (२) धन उत्पादन की तेजी में वृद्धि हो। (३) ऐसी आर्थिक व सामाजिक व्यवस्था की स्थापना होनी चाहिए जिसमें अवसरों की समानता हो। (४) बिना वर्ण, जाति व लिंग भेद के रोजगार की पूर्ण व्यवस्था हो। (५) आधारभूत उद्योग धन्धों की स्थापना में राज्य अधिकाधिक भाग ले। (६) देश के आर्थिक साधनों पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण स्थापित हो। (७) देश की अर्थ प्रणाली को इस प्रकार संगठित किया जाय कि किसी वर्ग-विशेष के पास उत्पत्ति के साधन तथा धन एकत्रित न हो। (८) समाजवादी ढांचे की समाज व्यवस्था

की स्थापना के लिए उपर्युक्त समस्त परिवर्तन शान्तिपूर्ण, अहिंसात्मक और जनतान्त्रिक तरीके से लगाया जायगा।

अतः हम देखते हैं कि भारत में आर्थिक असमानता को दूर करने के लिए सरकार के नियन्त्रण में बड़े २ उद्योग स्थापित हो रहे हैं। निजी उद्योगों पर भारी प्रत्यक्ष कर लगा दिये गए हैं। सहकारिता के आधार पर नये कारखाने स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है। खेती में अधिकतम जोत निर्धारित करदी गई है। निजी क्षेत्र के उद्योगों पर राज्य का पूर्ण नियन्त्रण स्थापित है।

इस प्रकार भारत में एक ऐसे समाज के विकास का प्रयत्न किया जा रहा है जिसमें सामाजिक और आर्थिक न्याय उपलब्ध होगा, किसी प्रकार का शोषण नहीं होगा। रोजगार की पूर्ण व्यवस्था होगी तथा बिना किसी भेद-भाव के प्रत्येक नागरिक को समान प्राप्त अवसर होंगे।

प्रश्न ५—सामुदायिक विकास कार्य-क्रम को किस प्रकार प्राणवान बनाया जा सकता है।

उत्तर—भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ की जनसंख्या का ८० प्रतिशत भाग गाँवों में रहता है जिनकी संख्या ५ लाख ७० हजार है। जब तक इन ग्रामों के उत्थान के लिये प्रयास नहीं किये जायेंगे तब तक भारत का उत्थान सम्भव नहीं चाहे कितनी भी योजनाएँ बन जायें और विकास के इस कार्य-क्रम में असंतुलन बना रहेगा।

इसी कारण ग्रामों के विकास के लिए सामुदायिक विकास योजना १९५२ में प्रारम्भ की गई। इन योजनाओं के अन्तर्गत ग्रामीण भारत २/३ भाग से भी ऊपर आ चुका है परन्तु इन योजनाओं के आयोजन कुछ ऐसे दोष हैं जिनके निवारण करने पर ही उनमें प्राण आ सकते हैं निम्न उपायों द्वारा उसे प्राणवान बनाया जा सकता है—

१. योजना-समिति में ग्राम-प्रतिनिधि—जो योजना अधिकारी वर्ग हैं वे उच्च स्तर पर तैयार की जाती हैं। अतः जब योजनाएँ तैयार की जाती हैं तब उनमें ग्राम-प्रतिनिधि की अनुपस्थिति के कारण केवल उच्च स्तर की बन जाती है और गाँवों की आवश्यकतानुसार योजनाएँ तैयार नहीं हो पातीं। योजना समिति में ग्राम प्रतिनिधि का होना आवश्यक है।

२. स्वावलम्बन की भावना का गाँवों में जगाना—जब योजना समिति में गाँवों का प्रतिनिधि नहीं रहा तो उन्होंने अपने ही कल्याण योजनाओं को तैयार करना छोड़ दिया और राज्य पर निर्भर रहने लगे। इससे उनमें स्वावलम्बन की कमी हो गई। अतः उनमें इस भावना की जागृति करने के लिए उन पर भी कुछ कार्य छोड़ने चाहिए।

३. ग्रामीण जनता में उत्साह को जगाना—१९५६ में नियुक्त एक समिति की रिपोर्ट द्वारा इन योजनाओं के प्रति ग्रामीण जनता में उत्साह नहीं था। उनमें विकास कार्यों के प्रति रुचि पैदा करने के लिये भारत के कई राज्यों में पंचायत राज्य स्थापित किये गये। ये पंचायतें स्वशासनिक इकाई के रूप में कार्य करने लगीं। इससे ग्रामीण जनता में जागरण व रुचि पैदा हुई।

उक्त उपायों के अतिरिक्त ग्रामीण जनता में कार्य की क्षमता व ईमानदारी के स्तर को बनाये रखना है। ग्रामीणों में शिक्षा के प्रति सजगता लाकर उन्हें इन योजनाओं से होने वाले लाभ से लाभान्वित करना चाहिए। राजस्थान में सर्वप्रथम सामुदायिक योजनाओं का प्रारम्भ हुआ और यहाँ सफलता भी मिल रही है। परन्तु फिर भी सफलता की लम्बी योजना शेष है। उक्त उपायों द्वारा सामुदायिक योजनाएँ सफल हो सकती हैं।

अध्याय ४

भारतीय कृषि

प्रश्न १—भारत में खेती के पिछड़े होने के क्या कारण हैं? उनका संक्षेप में उल्लेख कीजिए।

उत्तर—भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी ७० प्रतिशत जनता कृषि कार्य में लगी हुई है और अन्य धंधे कृषि पर निर्भर हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि भारतीयों के आर्थिक जीवन में कृषि का अत्यन्त महत्व है, परन्तु इतना होते हुए भी भारतीय कृषि की स्थिति अत्यन्त शोचनीय

है। भारत सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत कृषि के विकास पर विशेष रूप से ध्यान दिया है, परन्तु इतना होते हुये भी अन्य देशों के मुकाबले में पिछड़ा हुआ है।

भारतीय कृषि के पिछड़े रहने के कारण—भारतीय कृषि की शोचनीय स्थिति के निम्नलिखित कारण हैं—

(क) भूस्वामित्व की दोषपूर्ण प्रणाली—भूमि पर जमींदारों का अधिकार था, जिससे कृषकों को उनकी दया पर निर्भर रहना पड़ता था। वह उनके किसी भी समय भी उनसे भूमि वापिस ले सकता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारी सरकार ने जागीरदारी प्रथा का अंत करके कृषकों को भूमि का स्वामी बनाने का प्रयत्न किया गया है।

(ख) लाभरहित जोत और छोटे खेतों का बिखरा होना—भारतीय कृषकों के पास आर्थिक जोत का अभाव है। इसका स्पष्ट अभिप्राय यह है कि कृषक के पास इतनी भूमि का अभाव है कि श्रम का पूरा उपयोग हो सके। खेत भी छोटे-छोटे और बिखरे हुए हैं। सिचाई के लिए कुओं का बनाना भी अत्यन्त कठिन होता है। इस प्रकार कृषक पूर्ण रूप से परिश्रम करके पूर्ण रूप से लाभ नहीं उठा पाता है।

(ग) उत्तम खाद, बीज, हल व बैल का अभाव—भारत में कृषि के विकास के लिए उत्तम बीज और खाद का अभाव है। हमारे कृषकों को वैज्ञानिक और कृत्रिम खादों के विषय में कोई जानकारी प्राप्त नहीं है। गोबर की खाद ही एक मात्र साधन है, परन्तु ग्रामीण अधिकांश भाग जलाकर खाक कर देते हैं। इस प्रकार खेतों की उर्वरा शक्ति खाद के अभाव में क्षीण होगई है। कृषकों की अमूल्य पूंजी उसका पशु धन है। बैल कृषि का एक मात्र आधार है, परन्तु हमारे देश में अच्छे बैलों का अभाव है।

(घ) सिचाई की सुविधाओं का अभाव—भारत में मौसमी वर्षा होने के कारण सिंचाई का विशेष महत्व है। हमारे देश में सिंचाई के साधनों का अभाव है। देश का विभाजन होने के कारण नहरों वाला बहुत सा प्रदेश पाकिस्तान में चला गया है। देश के विभिन्न भागों में वर्षा की कमी के कारण कृषि नष्ट हो जाती है। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत

सिंचाई के साधनों के विकास पर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है।

(ङ) वैज्ञानिक यन्त्रों के प्रयोग का अभाव—भारतीय कृषक के खेत क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से बहुत छोटे और बिखरे हुये हैं और इसके साथ वह भाग्यवादी और अशिक्षित है। आर्थिक दृष्टिकोण से भी वह निर्धन है। इस कारण वह वैज्ञानिक यन्त्रों को खरीदने और उनको प्रयोग में लाने में असमर्थ रहता है।

(च) कृषि का दोषपूर्ण तरीका—कृषि के विकास के लिए नवीनतम साधनों का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय कृषक की खेती का ढंग वही पुराना है। वे अधिक पैदावार के लिए अधिक भूमि के सिद्धांत में विश्वास करते हैं जबकि होना यह चाहिए कि कम भूमि पर अधिक से अधिक उपज हो।

(छ) भारतीय कृषि प्राकृतिक साधनों पर निर्भर—भारतीय कृषि मानसून का खेल है। यदि वर्षा ठीक और उचित समय पर हो गई तो कृषि ठीक हो जाती है। इसके अतिरिक्त यदि अति वृष्टि हो गई तो कृषि नष्ट हो जाती है। इस प्रकार भारतीय कृषि का इतिहास विभिन्न घटनाओं से भरा हुआ है।

(ज) पैदावार की बिक्री की समस्या—अच्छी फसल के साथ सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि कृषक अपनी पैदावार को उचित मूल्य पर बेच सके। भारतीय कृषक इतना निर्धन है कि उसके तत्काल ही भाव के घटने और बढ़ने की प्रतीक्षा किये बिना किसी भी मूल्य पर बेचने के लिए विवश हो जाना पड़ता है। उसे ऋणी होने के कारण अपनी फसल भी साहूकार को ही बेचनी पड़ती है। इस प्रकार कृषि की व्यवस्था में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो सका है।

(झ) भूमि का कटाव और जंगलों का अभाव—भूमि के निरंतर कटाव के कारण भूमि की उर्वरता नष्ट होगई है। जंगलों की कमी के कारण नित्य प्रति वर्षा की कमी होती जा रही है। बढ़ता हुआ रेगिस्तान उपजाऊ भूमि को हड़पता जा रहा है।

(ञ) कृषकों का ऋण भार—भारत की अधिकांश ग्रामीण जनता ऋण के भार से दबी हुई है। उनके पास अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के कोई साधन नहीं रहे हैं। उसे कृषि कार्य के लिये भी साहूकार की

दया पर ही निर्भर रहना पड़ता है। वह मूल तो बहुत दूर की बात है जीवन भर सूद भी नहीं चुका पाता है। उद्योगों को बढ़ाने के लिए उधार लेना कोई पाप नहीं है परन्तु अभाग्यवश भारतीय कृषक आर्थिक दृष्टि-कोण से साहूकार का दास है। उसकी अपनी इच्छा का कोई मूल्य नहीं है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय कृषि की स्थिति निरन्तर किसी न किसी कारण बिगड़ती गई और उनकी स्थिति में कोई सुधार न हो सका, परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत सरकार ने इस क्षेत्र में विशेष रूप से ध्यान दिया है और आशा की जाती है कि कुछ समय में भारतीय कृषि की शोचनीय स्थिति में परिवर्तन हो सकेगा और भारत एक समृद्धिशाली राष्ट्र बन सकेगा।

प्रश्न २—बिखरे हुये छोटे-छोटे खेतों से क्या हानियां हैं? उनका वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारतीय कृषि की अवनति का मुख्य कारण खेतों का छिटका हुआ होना है। एक ही किसान के खेत इतनी दूर-दूर होते हैं जिनकी ठीक प्रकार से देख-भाल नहीं की जा सकती है और न एक ही औजार से काम हो पाता है। उसकी अवस्था इतनी अच्छी नहीं होती कि वह अलग-अलग खेतों के लिए अलग-अलग यंत्र खरीद सके। फलस्वरूप वह अपने घर के सदस्यों का पालन-पोषण भी ठीक प्रकार से नहीं कर सकता। भारतीय किसान के पास एक तो भूमि ही कम होती है दूसरे दूर-दूर होने के कारण परिश्रम करने पर भी पर्याप्त मात्रा में उपज प्राप्त नहीं होती। खेतों के बिखरे हुए होने से निम्नलिखित हानियाँ होती हैं।

१. खेतों के दूर होने कारण किसान का बहुत सा समय आने जाने में नष्ट हो जाता है।

२. किसान अपने सब खेतों को ठीक प्रकार से नहीं देख सकता।

३. किसान अपने परिश्रम व साधनों का पर्याप्त प्रयोग नहीं कर पाता जिससे उसे फल भी कम मात्रा में मिलता है।

४. भूमि के अपखंडन से प्रत्येक टुकड़े में बहुत सी भूमि मेड, कुआ आदि बनाने में चली जाती है जब कि एक ही जगह पूरी भूमि में इतनी भूमि बेकार नहीं जाती।

५. अलग-अलग खेतों में जाने के लिये दूसरे के खेत में से होकर किसान को जाना पड़ता है जिससे लड़ाई की सम्भावना बनी रहती है ।

६. गरीब होने के कारण किसान अपने खेत में सुधार नहीं कर पाता ।

७. किसान अपने खेतों में कुआ नहीं बना सकता तथा उसे पानी की कठिनाई का सामना करना पड़ता है ।

८. कृषक अपने खेतों में किसी भी प्रकार का सुधार करने में असमर्थ रहता है । छोटे-छोटे खेतों पर बाढ़ लगाने में बहुत धन राशि खर्च हो जाती है ।

९. कृषक के पास सम्पूर्ण भूमि एक ही स्थान पर नहीं होने के कारण वह खेत पर मकान बनाकर नहीं रह सकता है, अपितु गांव में रहना पड़ता है । कृषि की उन्नति के लिए कृषक का खेत पर ही रहना अत्यन्त आवश्यक है ।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि छोटे-छोटे और बिखरे हुए खेतों के कारण भारतीय कृषि में बहुत हानि पहुँचती है । कृषि के विकास के लिए इन सब दोषों को दूर करना अत्यन्त आवश्यक हैं ।

प्रश्न ३—सहकारी खेती से आप क्या समझते हैं ? उसके लाभ-हानि बताइए ।

उत्तर—भारत में बिखरे हुए और छोटे-छोटे खेतों से उत्पन्न समस्याओं को हल करने का एक मात्र उपाय सहकारी कृषि है । सहकारिता का अर्थ है कि छोटे-छोटे खेतों को मिलाकर फार्म के रूप में परिवर्तित करना और मिलकर कृषि करना तथा लाभ को समान रूप में बांट लेना । सहकारिता ही कृषि की उन्नति का एक मात्र उपाय है ।

१. सहकरी कृषि से लाभ—सहकारी कृषि से निम्नलिखित लाभ हैं ।

(क) सहकारी कृषि से सबसे बड़ा लाभ यह है कि कृषि से पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सकता है ।

(ख) कम परिश्रम में अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सकता है,

जिससे भारतीय कृषक की स्थिति को सुधार सकता है।

(ग) सहकारिता के द्वारा आत्म-सम्मान की भावना जाग्रत होती है और ग्रामीण की आर्थिक व्यवस्था को सुधारा जा सकता है।

(घ) सहकारी कृषि में वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग भी सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

२. सहकारी कृषि से हानि—सहकारी कृषि से निम्नलिखित हानियाँ हैं। इन हानियों को दूसरे शब्द में अभाव कहा जा सकता है।

(क) भारतीय कृषक की सहकारिता के प्रति कोई उत्साह नहीं है और वे स्वतन्त्र रूप से ही कार्य करना चाहते हैं।

(ख) वह भूमि को पवित्र धरोहर मानकर उसे किसी दूसरे के साथ मिलाना नहीं चाहता है।

(ग) सरकार को सरकारी फार्मों को अधिक से अधिक प्रोत्साहन देना चाहिए और अधिक सहायता भी देनी चाहिये।

(घ) भारतीय कृषक अशिक्षित होने के नाते से सहकारिता के महत्व को बिल्कुल नहीं समझते हैं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए और कृषि की शोचनीय स्थिति को सुधारने के लिए सहकारी कृषि ही एक मात्र उपाय है।

प्रश्न ४—भारत में खाद की समस्या पर एक छोटा लेख लिखिये और बताइये कि खाद की समस्या को हल करने के लिए क्या प्रयत्न हो रहे हैं ?

उत्तर—कृषि के विकास लिए उपजाऊ भूमि की सबसे बड़ी आवश्यकता है। भूमि की उर्वरता को बनाने रखने का एक मात्र उपाय खाद का अधिक से अधिक मात्रा में होना है। हमारे देश में खाद की विशेष रूप से कमी है। ग्रामीणों के पास गोबर की खाद ही एक मात्र साधन है, परन्तु यह दुर्भाग्य का विषय है कि अधिकांश गोबर के कण्डे बनाकर जला दिये जाते हैं। उत्तम खाद गड्ढों में ही तैयार की जा सकती है। गाँव का कूड़ा, गोबर, पेशाब, चारा या घास-फूस कुछ भी व्यर्थ नष्ट नहीं होगा। इस प्रकार गाँव गन्दगी से बचा रहेगा और खाद भी अच्छी तैयार होगी। गाँववासियों को यह समझा जाना चाहिये कि गोबर

अमूल्य खाद है, जिसे किसी भी रूप में जलाकर खाक न करें। गोबर को सुरक्षित रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में ईंधन का होना आवश्यक है। अभाव की पूर्ति के लिए जंगलों में वृक्ष लगाये जावें।

१. मल की खाद—ग्रामों में यदि शौच कूप बना दिये जायें तो गांव गन्दगी से बच सकता है और अच्छी प्रकार की खाद भी प्राप्त हो सकती है।

२. हरी खाद—जिस स्थान पर खूब वर्षा होती है अथवा पानी अधिक मात्रा में मिल जाता है, वहाँ हरी खाद का उपयोग सरलतापूर्वक किया जा सकता है। सन, मूंगफली और ग्वार आदि कुछ ऐसी फसलें हैं जिन्हें पैदा कर खेत की उर्वरता को बढ़ाया जा सकता है। कृषक हरी खाद का प्रयोग बहुत कम करता है।

३. पशुओं का मूत्र—पशुओं का मूल भी अमूल्य खाद है परन्तु भारतीय कृषक ने इस ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया है। उसे पशुओं को खेतों में ही बांधना चाहिए। पशु बांधने के स्थान पर पक्के गड्ढे बनाकर मूत्र को एकत्रित किया जा सकता है।

खेती की पैदावार को बढ़ाने के लिए भूमि की उर्वरता को बढ़ाना अत्यन्त आवश्यक है। कृत्रिम खाद के निर्माण के लिए सरकार ने बिहार में सिरही नामक स्थान पर कारखाना खोला है। द्वितीय पंच वर्षीय योजना में नांगल, रूपकेला तथा नवेली मे खाद उत्पन करने के कारखाने स्थापित करने का लक्ष्य था। हमारी तृतीय पंच वर्षीय योजना में अधिक कारखाने खोलने की योजना रखी गई है। एक ऐसा ही कारखाना राजस्थान में हनुमानगढ़ के पास स्थापित होगा।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान भारत सरकार कृषि के विकास के लिए अधिक से अधिक उपयोगी खाद बनाने के लिए प्रयत्नशील है। आशा की जाती है कि खाद की अधिकता से भूमि की उर्वरता को सुरक्षित रखा जा सकेगा।

प्रश्न ५—गौवंश की हीन दशा के कारणों पर विचार कीजिये और बतलाइये कि गाय बैल की नस्ल सुधारने के लिए क्या उपाय किये जा रहे हैं?

उत्तर—भारतवासियों का विशेषकर ग्रामीणों का एकमात्र धन पशुधन है। हमारे देश में गौ का विशेष महत्व है, परन्तु इतना होते हुए भी उनकी स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। हमारे देश की गाय बहुत कम दूध देती हैं, और बैल भी बहुत कमजोर होते हैं। यूरोपीय देशों की साधारण गाय कम से कम बीस सेर दूध देती है, जबकि भारत की गाय केवल सेर भर ही दूध देती है।

गौ वन्श की हीन दशा के कारण—हमारे देश में गौ वंश की हीन दशा के निम्नलिखित कारण हैं।

(क) अच्छे चरागाहों का अभाव—कृषकों का एकमात्र धन पशु है, परन्तु उन्हें भर पेट चारा नहीं मिल पाता है। इसका एकमात्र कारण यह है कि हमारे देश में अच्छे चरागाहों का अभाव है। इस कमी को पूरा करने के लिए चारे की फसल की जानी चाहिए। जंगलों में जो घास नष्ट होती है, उसे एकत्रित कर कमी के क्षेत्रों में भेजना चाहिए।

(ख) पशु रोग की प्रधानता—पशु रोग की प्रधानता हो जाने के कारण अधिकांश पशुओं की मृत्यु हो जाती है तथा निर्बल हो जाते हैं। इस कमी को दूर करने के लिए सरकार ने पशु चिकित्सालय खुलवाये हैं और पंचवर्षीय योजनाओं में भी इसी लक्ष्य को विशेषरूप से दृष्टिगत रखा गया है।

(ग) पशुओं की नस्ल सुधारने की व्यवस्था न होना—हमारे देश में गौ वंश की नस्ल बहुत गिरी हुई है, इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे देश में अच्छे सांडों का अभाव है। वैसे तो हमारे देश में साँडों की कोई कमी नहीं है, परन्तु अधिकतर वे खराब नस्ल के हैं। गाँवों की नस्ल को सुधारने के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि खराब साँडों को साधारण आपरेशन करके नपुंसक बना देना चाहिए। कोई भी कर्म पशु चिकित्सक की स्वीकृति के बिना नहीं छोड़ना चाहिये।

(घ) बुल फार्म स्थापित करना—अच्छे सांडों की व्यवस्था के लिए सरकार द्वारा बुल फार्म स्थापित किये गये हैं। हमारे देश के लिए दस लाख अच्छे साँडों की आवश्यकता है। इस कमी को पूरा करने के लिए प्रति वर्ष दो लाख उत्तम साँड तैयार किये जाने चाहिए।

(ङ) केन्द्र ग्राम योजना की व्यवस्था—पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत केन्द्र ग्राम योजना की भी व्यवस्था की गई है। इस योजना के अन्तर्गत कुछ ग्राम छांट लिए जाते हैं, जिनको सरकार के द्वारा उत्तम सांड दिये जाते हैं और उनसे पैदा होने वाले बछड़ों को बुल फार्मों में पाला जाता है। इस प्रकार उत्तम नस्ल के सांडों की संख्या नित्य प्रति बढ़ती रहती है।

(च) कृत्रिम गर्भ धारण—पशुओं की नस्ल को सुधारने का एक और उपाय इंजेक्शन द्वारा गायों के गर्भ स्थापित करने का है। साधारणतया ६० या ८० गायों के लिए एक सांड की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु कृत्रिम गर्भ धारण के द्वारा ५० गायों के लिये एक ही सांड की आवश्यकता रह जाती है। हमारे देश में भी कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र स्थापित किये जा रहे हैं।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत की कृषि व्यवस्था को सुधारने के लिए पशुओं की नस्ल को सुधारना अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान भारत सरकार इस दिशा में प्रगति के लिए विशेष रूप से प्रयत्नशील है।

प्रश्न ६—खेती की पैदावार की बिक्री की वर्तमान व्यवस्था के दोषों को बतलाइये और उनको दूर करने के लिए सुझाव दीजिये।

उत्तर—भारतीय कृषकों की शोचनीय स्थिति को सुधारने के लिए केवल उपज को बढ़ाना ही काफी नहीं है, जब तक कि उनको उचित मूल्य पर बेचने की व्यवस्था न हो। कृषकों की आर्थिक स्थिति को सुधारना और बिक्री सम्बन्धी दोषों को दूर करना अत्यन्त आवश्यक है। यह भी एक महत्वपूर्ण समस्या है, जिसे हल करना भी अत्यन्त आवश्यक है।

१. बिक्री की वर्तमान व्यवस्था के दोष—बिक्री की वर्तमान व्यवस्था में निम्नलिखित दोष हैं :—

भारतीय कृषक इतना निर्धन है कि फसल के तैयार होते ही उसे मूल्य बढ़ने की प्रतीक्षा किये बिना ही किसी भी मूल्य पर बेचने के लिए तैयार हो जाना पड़ता है। इसीलिए उसे अपने परिश्रम का उचित लाभ

नहीं मिल पाता है। लगान, आबपाशी और साहूकार का कर्ज चुकाने के लिए उसे यह काम शीघ्रता से करना पड़ता है।

(ख) कृषकों के पास भूमि इतनी कम है कि उसके पास अपने खाने के लिए रखने के पश्चात् बेचने के लिए बहुत थोड़ा बच पाता है। उसे मंडी ले जाने में कोई लाभ दिखाई नहीं पड़ता है। इस कारण उसे अपनी उपज गाँव के साहूकार को जिस भी मूल्य पर वह खरीदता है, बेच देनी पड़ती है।

(ग) भारतीय कृषक बहुधा ऋणी होता है, इस कारण वह अपनी पैदावार को भी बेच देने के लिए मजबूर हो जाता है। कभी-कभी तो साहूकार कृषक को ऋण ही केवल इस शर्त पर देता है कि उसे अपनी फसल उसको ही बेचनी पड़ेगी। ऋणी कृषक के पास इसके अतिरिक्त और कोई उपाय बाकी नहीं रह जाता है।

(घ) गाँवों में सड़कों का अभाव होने से ग्रामीणों के पास मंडियों तक पहुँचने का कोई रास्ता नहीं होता है। कच्ची सड़कें वर्षा में दलदली हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में उसे बाध्य होकर अपनी उपज गाँव के साहूकार को ही बेच देनी पड़ती है।

(ङ) भारतीय कृषक यदि साहूकार के पंजे से मुक्त भी हो तो मंडियों तक पहुँचने में भी उसे विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उसे वहाँ भी आँख मींचकर लूटा जाता है और उसकी अज्ञानता का पूरा-पूरा लाभ उठाया जाता है। मंडियों में दलाल भी व्यापारियों से मिले रहते हैं, और उन्हें लाभ पहुँचाने के लिए कृषकों को ही लूटते हैं। उसकी कुछ पैदावार नमूने के रूप में ली जाती है और बहुत सा भाग धर्मादा कार्य जैसे गऊशाला, पाठशाला और धर्मशाला आदि तथा मनमाने खर्च जैसे तोलवाला, व शागिर्दी, बोराबन्दी आदि में काट लिया जाता है। अनाज को तोलते समय भी धोखा दिया जाता है। कहने का अभिप्राय है कि मंडियों में भी कृषकों का शोषण पूर्ण से किया जाता है। इस प्रकार कृषकों को मंडियों में भी उचित लाभ नहीं मिल पाता।

२. बिक्री सम्बन्धी दोषों को दूर करने के उपाय—बिक्री संबंधी दोषों को दूर करने के लिए मंडियों का संगठन सुचारु रूप से किया जाता

चाहिये। शाही कृषि कमीशन ने सरकार को यह सुझाव दिया है कि मंडी नियम का निर्माण किया जाना चाहिये। प्रत्येक दलाल को लाइसेंस दिया जाना चाहिये और इसके साथ उसे स्पष्ट घोषणा करनी चाहिए कि वह किस पक्ष का दलाल है। मंडियों में कृषकों से कितना खर्च लिया जाये, इसका निर्णय मंडियों की कमेटी के द्वारा किया जाना चाहिए। अनाज तोलने के लिए तोलने के पुल (वेहिंग ब्रिज) खोलने चाहिएं। यदि पैदावार सम्बन्धी विवाद उत्पन्न हो जायें तो इसका निर्णय भी कमेटी के द्वारा ही किया जायेगा। बिक्री सम्बन्धी दोषों को दूर करने के लिए सर्वश्रेष्ठ उपाय यही है कि कृषक अपनी पैदावार सरकार बिक्री समिति के द्वारा बेचे। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इस प्रकार की समितियों के सगठन पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है।

उपर्युक्त विवरण से इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बिक्री सम्बन्धी दोषों को दूर करने के लिए उपर्युक्त साधनों को काम में लाना अत्यन्त आवश्यक है। इसके अभाव मे कृषकों की आर्थिक स्थिति में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हो सकता है। वर्तमान सरकार इस कार्य के लिए प्रयत्नशील है जिससे कृषकों को आर्थिक शोषण से बचाया जा सके।

प्रश्न ७—ग्रामीण ऋण के कारणों पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—महात्मा गांधी का कहना है कि भारत गाँवों में रहता है। इसका सीधा सा अभिप्राय है कि भारत की अधिकांश जनता गाँवों में रहती है और एक मात्र व्यवसाय कृषि करना है। इतना होते हुए भी भारतीय कृषक निर्धन है। वह कठोर परिश्रम करने के पश्चात् भी आधा भूखा और आधा नंगा रहता है। ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारे बिना किसी भी रूप में देश की उन्नति सम्भव नही हो सकती है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण ऋण के कारणों के विषय में जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

ग्रामीण-ऋण के निम्नलिखित कारण है।

१. **पैतृक-ऋण**—ग्रामीण-ऋण का प्रमुख कारण उसका पैतृक-
येक पुत्र अपने पिता को मृत्यु के पश्चात् उसके ऋण को

चुकाना अपना धर्म समझता है। इसी प्रकार उस पुत्र की मृत्यु के पश्चात उसका ऋण उसके पुत्र के सिर लाद दिया जाता है। पिता की मृत्यु होने पर महाजन पुत्र से पुराने ऋण को चुकाने के लिए एक नया कागज लिखवा लेता है। इस प्रकार ग्रामीण-ऋण कभी-कभी तो पीढ़ी पर पीढ़ी चलता रहता है।

२. **महाजन का चंगुल**—महाजन ग्रामीण को सदैव अपना दास बना कर रखते हैं। उनके व्याज की दर बहुत अधिक होती है। बेचारा ग्रामीण नित्य प्रति बढ़ते हुए महाजन के व्याज को पूरी तरह से चुका नहीं पाता। ग्रामीण के अशिक्षित होने का पूरा पूरा अनुचित लाभ उठाने में महाजन अपना कर्त्तव्य समझता है। कभी-कभी तो ग्रामीण के द्वारा ऋण की रकम चुका देने पर भी वह जमा नहीं की जाती है। और मूल रकम जितनी थी उतनी ही निकलती है। कभी-कभी तो ग्रामीण द्वारा लिए हुए ऋण को उससे अधिक लिखकर महाजन कागज पर अंगूठा निशानी उतरवा लेता है। इस प्रकार एक ग्रामीण महाजन का सदा के लिए दास बन जाता है। उसे महाजन की ही इच्छा के अनुसार उत्पत्ति करनी पड़ती है और अपनी फसल उसे महाजन को कम मूल्य पर देनी पड़ती है।

३. **अनिश्चित खेती**—ग्रामीण-ऋण का मूल कारण खेती का वर्षा तथा अन्य प्राकृतिक साधनों पर निर्भर होना है। अतिवृष्टि या अनावृष्टि से, पाला से, ओलों से, फसल में कीड़े लगने से या टिड्डी दल के आक्रमण आदि से प्रायः हर वर्ष ही फसल नष्ट होती रहती है। फसल के नष्ट होने पर किसान को महाजन से व्याज की ऊँची दर पर ऋण लेना पड़ता है।

४. **मुकदमेबाजी**—मुकदमेबाजी महामारी के रूप में फैली है और ग्रामीण इस रोग से पीड़ित हैं। ऋणी होकर भी मुकदमा लड़ना पसन्द करते हैं। उनके लिए आये दिन छोटी से छोटी बात को लेकर मारपीट और मुकदमेबाजी का शौक लग गया है। इसमें उनका ऋण भार बढ़ता ही जाता है।

५. **कृषि पर जनसंख्या का अधिक भार**—भारत की लगभग ७० प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। अतः औसत के रूप में प्रति

किसान के पास इतनी कम भूमि पड़ती है कि वह अपने छोटे से परिवार का पालन भी ठीक प्रकार से नहीं कर सकता है। गरीबी के कारण थोडी सी भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने के साधन नहीं जुटा पाया है।

६. **खेतों का बिखरा तथा विभाजित होना**—किसान के पास जितनी भी भूमि होती है वह छोटे-छोटे भागों में बँटी होती है। इस प्रकार बहुत देख-भाल करने पर भी व्यय अधिक हो जाता है और पैदावार भी कम होती है। छोटे-छोटे भूमि के भागों पर आधुनिक वैज्ञानिक यन्त्रों का पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा सकते हैं।

७. **कुटीर उद्योग का पतन**—मशीनों के कारण कुटीर उद्योगों की काफी कमी हो गई है। ग्रामीण उद्योगों की कमी के कारण किसान वर्ष के खाली दिनों में बहुत कम कमा सकता है। ग्रामीण कारीगरों की आर्थिक दशा भी उद्योगों के पतन के कारण बहुत ही बिगड़ गयी है।

८. **पशुओं की मृत्यु**—भारत में पशुधन बहुत ही कमजोर और व्याधिग्रस्त है। अत: बीमारी के कारण बहुत से पशु मर जाते हैं। किन्तु बैलों के मरने पर किसान को ऋण लेकर बैल मोल लेने पड़ते हैं।

९. **अपव्यय**—ग्रामीण रुपये के महत्वपूर्ण रूप को नहीं जानता है। अत: वह पुराने रीति-रिवाजों और बुरी आदतों में लगा हुआ है। वह जमीन गिरवी रखकर और ऋण लेकर भी विवाह, मृत्यु, जन्म आदि धार्मिक तथा सामाजिक रीति-रिवाजों पर भी बुरी तरह से खर्च करता है। ग्रामीण नशीली वस्तुओं पर भी बहुत व्यय करता है।

१०. **लगान देना**—किसानों की आर्थिक स्थिति क्षीण होने के कारण लगान तथा मालगुजारी देने के लिये प्राय: ऋण लेना पड़ता है।

११. **बुरा स्वास्थ्य**—ग्रामों में अभी भी चिकित्सा की सुविधा प्राप्त नहीं है। ग्रामीण अपनी छोटी-मोटी चिकित्सा के लिये शहर नहीं आ सकते हैं और ग्रामों में ही इधर-उधर के इलाजों में लगे रहने से कारण उनकी कार्यक्षमता कम हो जाती है।

उपर्युक्त वर्णन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। आर्थिक व्यवस्था में शामिल हुए दोषों को दूर किये बिना किसी भी रूप में ग्रामीणों की स्थिति को नहीं सुधारा जा सकता है। भारत के निवासी अधिकतर गाँवों में रहते हैं

अतः ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है ।

प्रश्न ८—भारत में खाद्य पदार्थों की कमी के कारणों पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर—भारत यद्यपि स्वतन्त्र अवश्य हो गया है, परन्तु खाद्य पदार्थों की दृष्टि से अभी तक आत्मनिर्भर नहीं हो सका है । हमें अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ३० लाख टन विदेशों से मंगवाना पड़ता है, जिसके लिए सौ करोड़ रुपया व्यय करना पड़ता है । विदेशी मुद्राएं प्राप्त करना भी भारत सरकार के लिए प्रमुख समस्या बनी हुई है । खाद्य पदार्थों के अतिरिक्त हमारे देश में जूट, कपास, गन्ना, तिलहन आदि का भी विशेष रूप से अभाव है, जिसने औद्योगिक विकास के मार्ग में भी अनेक बाधायें उत्पन्न कर दी हैं । हमारे देश में खाद्य पदार्थों की कमी के निम्नलिखित कारण हैं ।

१. बर्मा का भारत से अलग हो जाना—बर्मा सन् १९३७ तक भारत का ही एक अंग था, परन्तु अंग्रेजों की कूटनीतिज्ञता के कारण अलग कर दिया गया । इस प्रकार हमारे देश में चावल का अभाव हो गया । इस अभाव की पूर्ति के लिए हमें प्रतिवर्ष १५ लाख टन चावल बर्मा से मंगवाना पड़ता है ।

२. भारत का विभाजन—भारत का विभाजन हो जाने के कारण अनाज की विशेष रूप से कमी हो गयी । भारत का ३२ प्रतिशत चावल, ३६ प्रतिशत गेहूँ, ३५ प्रतिशत सिंचित भूमि पाकिस्तान में चली गई, परन्तु वहाँ की आबादी केवल १८ प्रतिशत रह गई । पश्चिमी पंजाब, सिन्ध और सिलहट जो अपनी आवश्यकता से अधिक १० लाख टन उत्पन्न करते थे, पाकिस्तान में चले गये । इसके अतिरिक्त हिन्दू शरणार्थी पाकिस्तान से भागकर भारतवर्ष में आ गये । इन कारणों से खाद्य का विशेष रूप से अभाव हो गया ।

३. जनसंख्या में वृद्धि—भारत में प्रतिवर्ष ४० लाख से ५० लाख तक जनसंख्या बढ़ रही है, परन्तु खाद्य पदार्थों का उत्पादन इस अनुपात में नहीं हो रहा ।

४. अनिश्चित कृषि—भारतीय कृषि अनिश्चित है, जिसे मानसून का खेल कहा जाता है। अनावृष्टि, बाढ़ और टिड्डी आदि के आक्रमण से अधिकांश फसलें नष्ट हो जाती हैं और अन्न की कमी हो जाती है।

५. कृषि की प्राचीन प्रणाली—भारतीय कृषक अशिक्षित है और आज भी उसी प्राचीन प्रणाली से कृषि का कार्य करता है। वह भरसक परिश्रम करता है, परन्तु फिर भी उत्पादन बहुत कम मात्रा में होता है।

६. भोज आदि की प्रधानता—भारत एक रूढ़िवादी देश है। जहाँ प्राचीन परम्पराओं की प्रधानता है। हमारे सामाजिक जीवन में सहभोज और मृत्यु भोज आदि कुप्रथाएँ हैं, जिनमें अधिकांश अन्न व्यर्थ नष्ट हो जाता है।

७. शाकाहारी भोजन की प्रधानता—भारतीयों के भोजन में अन्न की अधिकता होती है। वे धार्मिक प्रवृत्ति और अन्धविश्वास के कारण मांस, अण्डा, मछली आदि का प्रयोग नहीं करते हैं। फल, दूध, घी आदि पदार्थ इतने मँहगे हैं कि सर्वसाधारण उन्हें नहीं खा सकते हैं। उन्हें पूर्ण रूप से अन्न पर ही निर्भर रहना पड़ता है।

८. कृषकों की आर्थिक स्थिति—द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अन्न का अभाव तेज हो गया, जिससे उनकी आर्थिक अवस्था में काफी सुधार हुआ है। प्रारम्भ में कृषक आधा भूखा रहकर भी अन्न बेचता था, परन्तु अब वह कम अन्न बेचकर ही अपना काम चला लेता है और अधिकांश भाग अपने लिए बचाकर रखता है।

९. अनाज की सुरक्षा का अभाव—हमारे देश में पैदावार को सुरक्षित रखने के बहुत कम साधन हैं। इस कारण लगभग ६०० करोड़ रुपये का अन्न चूहों, घुन आदि के द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। उचित देख-रेख का बहुत बड़ा अभाव है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि उपर्युक्त अभावों के कारण हमारे देश में खाद्य पदार्थों का विशेष अभाव हो गया है, जिसे सुरक्षित रखने के लिए सुरक्षित साधनों की आवश्यकता है।

प्रश्न ९—भारत में खाद्य पदार्थों की कमी को पूरा करने के लिए क्या प्रयत्न [illegible] रहे हैं? उनका वर्णन कीजिये।

उत्तर—भारत में खाद्य पदार्थों की भारी कमी को पूरा करने के लिए वर्तमान सरकार पूर्ण रूप से प्रयत्नशील है । सरकार ने निम्नलिखित कार्य इस कमी को पूरा करने के लिए किये हैं और कर रही है । उन कार्यों का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है ।

(१) खाद्य पदार्थों की कमी को पूरा करने के लिये विदेशों से व्यापारिक समझौते किये गये, जिनके अन्तर्गत अन्य देशों से खाद्य सम्बंधी आवश्यकताओं को पूरा किया गया ।

(२) सिचाई के साधनों के विकास के लिए भाखरा, चम्बल गांधी-सागर, हीराकुंड आदि योजनाओं को कार्य रूप में परिणित किया गया है, जिनसे कृषि को यथासम्भव उन्नति हो सके ।

(३) प्रथम और द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत कृषि और सिचाई के विकास को विशेप रूप से दृष्टिगत रखा गया जिससे भारत खाद्य पदार्थों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो सके ।

(४) इन योजनाओं के द्वारा कृपि की प्रगति अवश्य हुई है, परन्तु हमारा देश पूर्ण रूप से स्वावलम्बी नहीं हो पाया है, परन्तु आशा की जाती है कि तृतीय पंचवर्षीय योजना में देश को खाद्य पदार्थों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर वनाने का भरसक-प्रयत्न किया जायेगा ।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, कि वर्तमान भारत सरकार ने विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत देश में खाद्य पदार्थों की कमी को पूरा करने के लिए भरसक प्रयत्न किये हैं, और आशा की जाती है कि भारत शीघ्र ही एक समृद्धिशाली राष्ट्र वन जावेगा ।

अध्याय ७

उद्योग-धन्धे

प्रश्न १—भारत में कुटीर उद्योगों की आवश्यकता और महत्व पर एक छोटा सा लेख लिखिये ।

उत्तर—भारत एक कृषि प्रधान देश है । कृषि के पश्चात् दूसरी श्रेणी का व्यवसाय कुटीर उद्योग है । कुटीर उद्यो[illegible] गृह-उद्योगों

की संज्ञा दी जाती है। भारत के अधिकतर व्यक्ति ग्रामों में रहते हैं, ऐसी स्थिति में ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था में कुटीर-उद्योगों का विशेष महत्व है। प्राचीन भारत में कुटीर व्यवसाय उन्नति की चरम सीमा पर था। मुगलकालीन शासन व्यवस्था में गृह-उद्योगों की वस्तुएं विदेशों में लोकप्रिय हुईं। अंग्रेजी शासन काल में कुटीर उद्योगों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इसका एक मात्र कारण यह था कि अंग्रेज भारतीयों को आर्थिक दृष्टिकोण से निर्बल रखना चाहते थे। स्वतन्त्रता के पश्चात् महात्मा गांधी ने कुटीर-व्यवसाय का पूर्ण रूप से समर्थन किया। वर्तमान भारत सरकार इसकी प्रगति के लिए विशेष रूप से प्रयत्नशील है। देश की पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत भी कुटीर व्यवसाय के विकास के लिए विस्तृत रूपरेखा तैयार की गई।

१. भारत में कुटीर-उद्योगों का महत्व—हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कुटीर-उद्योगों के महत्व को समझा और उनकी इस सूझ का वर्तमान भारत सरकार ने तथा योजना आयोग ने इसकी उपयोगिता को समझकर इसे विशेष रूप से संरक्षण दिया है। भारत के आर्थिक संगठन में कुटीर-उद्योगों का विशेष महत्व है। इसका महत्व निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है।

(क) कुटीर-उद्योगों में पूंजी के स्थान पर श्रम की प्रधानता होती है। भारत में बढ़ती हुई बेकारी की समस्याओं को हल करने का एक मात्र उपाय कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देना ही है। कारखानों के द्वारा आर्थिक संगठन में परिवर्तन सम्भव नहीं हो सकता है।

(ख) भारतीय कृषक को वर्ष के कई महीनों तक बेकार रहना पड़ता है। उसकी आर्थिक व्यवस्था को सुधारने के लिए कुटीर उद्योगों का संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है।

(ग) बड़े-बड़े उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए विस्तृत टैकनीकी ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। हमारे देश में अभी इसका अभाव है। ऐसी स्थिति में गृह-उद्योगों का विकास हितकर है।

(घ) कारखानों के द्वारा उत्पादन अधिक मात्रा में होता है। इस लिए विभिन्न आर्थिक समस्याएं जैसे मकानों की समस्या, पूंजीपति और मजदूरों के मध्य संघर्ष आदि की समस्यायें ... जाती हैं, जिन्हें हल

करना स्वयं एक समस्या बन जाती है। कुटीर उद्योगों में इस प्रकार की समस्याओं का कोई भय नहीं रहता है।

(ङ) आज के इस वैज्ञानिक युग में युद्ध का क्षेत्र पहले की अपेक्षा अधिक व्यापक हो गया है। ऐसी स्थिति में शत्रु किसी भी समय औद्योगिक केन्द्रों को नष्ट कर सकता है और सम्पूर्ण व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाती है। कुटीर उद्योग अधिकतर ग्रामों में होता है, इसलिए उनके नष्ट होने की कोई सम्भावना नहीं रहती है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत के आर्थिक संगठन को दृष्टिगत रखते हुए कुटीर उद्योगों का विशेष महत्व है। ऐसी स्थिति में सरकार के द्वारा इसे प्रोत्साहित किया जाना चाहिये, अन्यथा ग्रामीणों की स्थिति में किसी प्रकार का परिवर्तन सम्भव नहीं हो सकता है।

प्रश्न २—भारत में कुटीर उद्योगों के पतन के क्या कारण ? उन पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—मुगलकालीन भारत में कुटीर उद्योग उन्नति की चरम सीमा पर थे। भारत की बनी हुई वस्तुएँ विदेशों में लोकप्रिय थीं, परन्तु मुगलों के पतन के पश्चात् हमारे देश में अंग्रेजों का आगमन हुआ और उन्हें गृह उद्योगों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा। इसके परिणामस्वरूप कुटीर उद्योगों का निरन्तर पतन होता गया तथा भारतीय आर्थिक स्थिति भी इसके साथ साथ शोचनीय होती गई।

कुटीर उद्योगों के पतन के कारण—भारत में कुटीर उद्योगों के पतन के निम्नलिखित कारण थे:—

(क) मुगल शासकों और देशी राजाओं का पतन हो जाने के कारण कुटीर व्यवसाय का संरक्षण समाप्त होता गया। परिणाम यह हुआ कि बहुमूल्य वस्तुओं की माँग समाप्त हो गई। सूती और रेशमी कपड़ों के उद्योग को गहरी हानि पहुँची। अंग्रेजों के शासन काल में हथियारों के निर्माण पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इस प्रकार अस्त्र-शस्त्र का निर्माण भी प्रायः समाप्त हो गया।

(ख) अंग्रेजों ने कारखानें की [illegible] वस्तुओं को लोकप्रिय बनानें

के लिए कुटीर उद्योगों को नष्ट कर दिया। अंग्रेज सभ्यता के प्रसार के कारण भारतीयों ने भी कुटीर उद्योगों द्वारा बनाई हुई वस्तुओं का उपयोग करना बन्द कर दिया।

(ग) अंग्रेजी सरकार द्वारा कुटीर व्यवसाय पर घातक प्रहार किया गया। कुशल कारीगरों के हाथ कटवा दिये गये, जिससे वे कलात्मक वस्तुओं का निर्माण नहीं कर सके। इसके अतिरिक्त भारत की बनी हुई वस्तुओं पर कर बढ़ा दिया, जिससे के पहले की अपेक्षा मँहगी पड़ने लगीं।

(घ) कारखानों में माल यन्त्रों की सहायता से अधिक मात्रा में बनाया जाने लगा, इसके विपरीत हाथ से वस्तुएँ कम बनती थीं। ऐसी स्थिति में कुटीर उद्योग होड़ नहीं कर सके और परिणाम यह हुआ है कि कुटीर व्यवसाय का निरन्तर पतन होता गया।

(ङ) भारत की तत्कालीन सरकार ने कुटीर उद्योगों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा तथा उन्हें कोई संरक्षण अथवा प्रोत्साहन नहीं दिया।

(च) भारत में जब सूती और रेशमी कपड़े के उत्पादन के लिए कारखानें बीसवीं शताब्दी में खोल दिये गये, तो कुटीर उद्योगों की स्थिति शोचनीय हो गई और उसका महत्व घट गया।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि तत्कालीन भारत की राजनैतिक परिस्थितियों के कारण कुटीर व्यवसाय का विकास नहीं हो सका। सरकार और जनता दोनों को ही उपेक्षा की दृष्टि से देखा। परिणाम यह हुआ कि उन्नतपूर्ण कुटीर व्यवसाय पतन की ओर अग्रसर हो गया।

प्रश्न ३—कुटीर उद्योगों के सामने जो कठिनाइयाँ हैं उनका संक्षिप्त विवरण दीजिये और बताइये कि उनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?

उत्तर—हमारे कुटीर उद्योग की कुछ ऐसी कठिनाइयाँ हैं जिनके कारण कुटीर उद्योग उन्नति नहीं कर पा रहे हैं। अगर हम कुटीर उद्योग की उन्नति करना चाहते हैं तो हमें उससे सम्बन्धित परेशानियों को समझना चाहिये।

१. कुटीर उद्योग की कुछ कठिनाइयाँ—इसमें निम्नलिखित कठिनाइयाँ हैं—

A. पूँजी का अभाव—भारतीय कारीगर निर्धन हैं न इसके पास कच्चा माल खरीदने को पैसा है, न इतनी सामर्थ्य है कि माल बनाने के बाद अच्छे भावों का इन्तजार कर सकें। माल तैयार करते ही उन्हें बेचना पड़ता है चाहे भाव अनुकूल हों या प्रतिकूल। इन लोगों का अधिकांशतः महाजनों से ऊँचे ब्याज पर ऋण लेना पड़ता है जो इसका शोषण करते हैं।

B. अच्छे कच्चे माल की कमी—कारीगरों को उन्नत श्रेणी का पर्याप्त मात्रा में कच्चा माल नहीं मिलता है। ये अधिकतर स्थानीय व्यापारियों से कच्चा माल खरीदते हैं। उस माल का उन्हें अधिक मूल्य भी देना पड़ता है तथा वस्तु भी अच्छी नहीं मिलती। देश का अधिकांश कच्चा माल बड़े २ कारखानों में ही खप जाता है।

C. विक्रय की कठिनाइयाँ—कुटीर उद्योग द्वारा निर्मित माल की विक्रय प्रणाली भी दोषपूर्ण है। कारीगरों को कठिन प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है और न वे सही अनुमान लगा पाते हैं।

D. खरीददार की पसन्द में परिवर्तन—आज खरीददार की पसन्द बदल गई है। नई २ डिजाइनों व नमूनों की बाजार में माँग है। कुटीर कारीगर पुरानी डिजाइनें व नमूना बनाना जानते हैं अतः यन्त्र निर्मित पदार्थों की स्पर्धा में नहीं टिक पाते।

E. शिल्पियों की अशिक्षा तथा रूढ़िवादिता एवं प्रशिक्षण का अभाव—अधिकांश कुटीर कारीगर अशिक्षित हैं। वे नवीन औजारों व तरीकों को काम में नहीं लाते और न ऐसा प्रयत्न ही करते हैं कि उनके माल में नवीनता आवे। उनमें अनुसंधान तथा प्रशिक्षण का अभाव है।

F. वैज्ञानिक यन्त्रों का अभाव एवं दूषित निर्माण विधि—कुटीर कारीगरों के औजार घटिया और पुराने हैं जिससे उनकी उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। इसके अलावा कारीगर उत्पादन की पुरातन रीतियों का ही पालन करते हैं।

G. शक्ति के साधनों का अभाव—गाँवों में छोटी २ मशीनों के द्वारा जापान के समान कुटीर उद्योग इसलिये भी उन्नति नहीं कर पा रहे हैं, कारण गाँवों में अभी तक उपलब्ध नहीं हैं।

२. कठिनाइयों को दूर करने के उपाय—इन कठिनाइयों को निम्नलिखित उपायों से दूर किया जा सकता है:—

A. दस्तकारी वर्ग के लोगों को सहकारी समितियाँ बनानी चाहियें।

B. कुटीर उद्योगों को कच्चे माल की सुविधा होनी चाहिये :

C. विदेशी माल का आयात कम कर दिया जावे।

D. कारीगरों को उनके कार्य की उन्नति के लिये सुविधायें एवं प्रोत्साहन देना चाहिये।

E. कुटीर उद्योगों को प्रशिक्षण मिलना चाहिये।

F. दस्तकारों को कम ब्याज पर ऋण का प्रबन्ध होना चाहिये।

G. दस्तकारों द्वारा बना माल उचित कीमत पर बेचा जावे।

H. सरकार को चाहिये कि कुटीर उद्योगों को एक क्षेत्र में खोले जहाँ बड़े पैमाने के उद्योगों की कोई प्रतियोगिता न हो।

प्रश्न ४—कुटीर उद्योगों की उन्नति के लिए स्वतंत्रता के बाद जो प्रयत्न किये गये हैं, इनकी विवेचना कीजिए।

उत्तर—भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भारत के आर्थिक विकास के लिये कुटीर व्यवसाय को श्रेष्ठ समझा और उनकी इस सूझ की महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार और योजना आयोग ने कुटीर व्यवसाय के महत्व को समझकर पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इसके प्रोत्साहन पर विशेष रूप से ध्यान दिया।

भारत सरकार द्वारा किये गये कार्य—वर्तमान भारत सरकार ने कुटीर व्यवसाय की प्रगति के लिए निम्नलिखित कार्य किये—

(क) अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग कमीशन की स्थापना—गृह-उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए भारत सरकार ने विशेष रूप से ध्यान दिया। इस कमीशन ने खादी के अतिरिक्त अखाद्य तेलों से साबुन, चावल, ताड़, गुड़ उद्योग, गुड़ यथा खडसारी उद्योग, चमड़ा, कागज और मधुमक्खी पालने के विकास को भी विशेष रूप से दृष्टिगत रखा। कमीशन के द्वारा कच्चे माल की व्यवस्था की जाती है और उत्पादन सम्बन्धी प्रशिक्षण भी दिया जाता है। इस प्रकार कमीशन ने मृत प्रायः कुटीर उद्योगं

(ख) अन्य संस्थाओं की स्थापना—खादी ग्रामोद्योग कमीशन की स्थापना के अतिरिक्त निम्नलिखित अन्य संस्थाओं की भी स्थापना की गई है—(१) अखिल भारतीय हाथ कर्घा बोर्ड । (२) अखिल भारतीय हाथ कारीगरी बोर्ड । (३) अखिल भारतीय लघु उद्योग बोर्ड । (४) अखिल भारतीय नारियल जटा उद्योग बोर्ड । (५) रेशम उद्योग बोर्ड प्रमुख हैं । इन विभिन्न बोर्डों का एक मात्र लक्ष्य सम्बन्धित गृह उद्योगों को प्रोत्साहित करना तथा प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था करना है ।

उपर्युक्त विवरण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वर्तमान भारत सरकार ने कुटीर व्यवसाय के विकास लिए विशेष प्रयत्न किये हैं, जिससे गृह-उद्योगों का विकास सन्तोषजनक हुआ है । आशा की जाती है कि तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत कुटीर व्यवसाय उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच जायेंगे और ग्रामीण आर्थिक व्यवसाय में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो सकेंगे ।

प्रश्न ५—भारत में नीचे लिखे बड़े उद्योग पर टिप्पणी लिखिये—

लोहा और इस्पात, सूती वस्त्र, पटसन ।

उत्तर—१. लोहा और इस्पात—भारत में लोहे का प्रथम कारखाना झरिया में कोयले की खानों के पास सन् १८७३ में वारकार आयरन वर्क्स स्थापित किया गया, परन्तु वास्तव में लोहे और इस्पात के उद्योग का विकास साकची (जमशेदपुर) में टाटा आयरन कम्पनी की स्थापना से माना जाता है । इसकी स्थापना स्वर्गीय जमशेदजी टाटा ने की थी । इस कारखाने में सन् १९१३ में प्रथम बार इस्पात का निर्माण किया गया । प्रथम महायुद्ध के काल में इस्पात के उद्योगों का विकास तीव्र गति से हुआ । इसकी सफलता से प्रेरित होकर सन् १९१८ इण्डियन आयरन और स्टील कम्पनी की स्थापना हुई । इसमें दो कारखाने आसनसोल के निकट हीरापुर तथा कुल्टी में स्थापित किए । १९३६ में बंगाल में स्टील कॉरपोरेशन की स्थापना हुई । परन्तु सन् १९५२ में दोनों मिलकर इण्डियन आयरन और स्टील कम्पनी के नाम से एक हो गए । सन् १९२३ में मैसूर में भद्रावती में इस्पात का कारखाना खोला । सरकार के संरक्षण के कारण [illegible] इस्पात का उद्योग विकसित हो गया । स्वतन्त्रता के

पश्चात् प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत स्टील के उत्पादन को बढ़ाने के लिए विशेष रूप से प्रयत्न किये। सरकार ने स्वयं इन कारखानों को आर्थिक सहायता प्रदान की और टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी को अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से कर्ज दिलवाया। इस योजना के अन्तर्गत प्रथम इस्पात कारखाना उड़ीसा में राऊरकेला स्थान पर जर्मनी कम्पनी की सहायता से खोला गया। दूसरा कारखाना मध्यप्रदेश के दुर्ग जिले में भिलाई नामक स्थान पर रूसी विशेषज्ञों की सहायता से खड़ा किया गया। तीसरा इस्पात का कारखाना अंग्रेज विशेषज्ञों की सहायता से पश्चिमी बंगाल में दुर्गापुर नामक स्थान पर स्थापित किया गया। तीनों कारखाने लगभग बनकर तैयार हो गए हैं और प्रत्येक की उत्पादन क्षमता दस लाख टन है। प्रत्येक कारखाने को बनाने में लगभग डेढ़ सौ करोड़ रुपया लगा है। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बोकारों में दस लाख टन उत्पादन की क्षमता रखने वाला इस्पात का कारखाना स्थापित किया जायेगा। इस प्रकार हम यह आशा कर सकते हैं कि तृतीय योजना की समाप्ति पर भारत लोहे और इस्पात के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सकेगा।

२. **सूती वस्त्र**—प्राचीन काल में भारत में सूती वस्त्र उद्योग उन्नति की चरम सीमा पर थे। इस विषय में भी सूती वस्त्रों का व्यवसाय हमारे देश के आर्थिक संगठन में विशेष महत्वपूर्ण है। हमारे देश का सूती वस्त्र उद्योग अमेरिका के पश्चात् दूसरा स्थान रखता है। भारत में ४८० मीलें हैं और ९ लाख मजदूर कार्य करते हैं। सूती कपड़े की मिलों का निर्माण केन्द्र महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, मद्रास, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश है। इसके केन्द्र बम्बई और अहमदाबाद, शोलापुर, मद्रास, कानपुर, कलकत्ता और नागपुर हैं। भारत में सर्वप्रथम सूती कपड़े की मिल की स्थापना सन् १८५४ में श्री सी० एन० डावर के द्वारा की गई थी। अमेरिका के गृह युद्ध, स्वेज नहर के खुलने और चीन को सूत का निर्यात होने से इस व्यवसाय की बड़ी उन्नति हुई। सन् १८७७ के पश्चात् अहमदाबाद, नागपुर और मद्रास में मिलें स्थापित की गईं। मद्रास में जल-विद्युत् के विकास के साथ मद्रास और कोयम्बटूर में भी सूती कपड़े की मिलें खोली गईं। भारत में सन् १९२३ के पश्चात् सूती उद्योग की स्थिति सोचनीय होगई परन्तु भा[illegible] के संरक्षण के द्वारा इसका

विकास पुनः हो सका । द्वितीय महायुद्ध के समय भारत के सूती उद्योग का पूर्ण रूप से विकास हुआ क्योंकि ब्रिटेन, फ्रांस, अमेरिका, जापान आदि देश युद्ध में फँसे हुए थे। ऐसी स्थिति में भारतीय कपड़े का निर्यात होने लगा।

सूती वस्त्र उद्योग की उन्नति के मार्ग में बाधाएँ—भारत के सूती वस्त्र उद्योग के मार्ग में निम्नलिखित बाधाएँ हैं—

(क) कच्चे माल का अभाव—देश का विभाजन हो जाने के कारण अच्छी कपास पैदा करने वाले क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये, जिससे वस्त्र उद्योग को महान् हानि पहुँची।

(ख) अधिकांश सूती मिलों को कम लाभ—भारत की सूती मिलों में लगभग १५० मिलें ऐसी हैं जिनमें केवल पूँजी फँसी हुई है और उनसे कोई विशेष लाभ नहीं हो रहा है।

(ग) अन्य देशों से मुकाबला—भारत के वस्त्र उद्योग के विकास के मार्ग में प्रमुख बाधा यह है कि उसे जापान, ब्रिटेन, अमेरिका आदि देशों से मुकाबला करना पड़ता है।

(घ) हाथ करघा उद्योग को प्रोत्साहन—वर्तमान भारत सरकार ने गृह-उद्योगों को विकास के अन्तर्गत हाथकर्घा उद्योग को विशेष रूप से प्रोत्साहन दिया है। इस कारण मिलों का उत्पादन सीमित हो गया है।

(ङ) अभिनवीनीकरण की कमी—भारतीय मिलों की मशीनें अधिक पुरानी हो जाने के कारण घिस गई हैं। वे आधुनिक ढङ्ग के स्व-चालित कर्घे लगाना चाहती हैं, परन्तु मज़दूर संगठन के विरोध के कारण मशीनों का अभिनवीनीकरण नहीं हो सका है।

(च) मजदूरी का बढ़ जाना—वर्तमान युग में मजदूरी का खर्च बहुत अधिक बढ़ गया है, इस कारण सूती वस्त्र उद्योग के मार्ग में विभिन्न प्रकार की बाधाएँ होगई हैं।

उपर्युक्त कठिनाइयों को दृष्टिगत रखते हुए यह कहा जा सकता है कि भारतीय मिलों का कपड़ा अधिक मँहगा पड़ने लगा है और उसकी विदेशों में कोई खपत नहीं रही है।

३. जूट (   ) उद्योग—जूट का उद्योग भारत में अत्यन्त

महत्वपूर्ण माना जाता है। हमारे देश में पहली जूट मिल १८८५ में श्रीरामपुर के निकट रिसारा में स्थापित की गई। बंगाल की अनुकूल जलवायु के कारण जूट उद्योग का विकास शीघ्रता से हुआ और हुगली नदी के दोनों ओर कारखानें स्थापित हो गये। प्रथम महायुद्ध के काल में जूट उद्योग की विशेष प्रगति हुई। सन् १६२६ से १६३६ तक जूट के भावों में मंदी आ जाने के कारण इस उद्योग को विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उस समय जूट का उत्पादन कम हो गया। द्वितीय महायुद्ध के काल में जूट का भाव पुनः तेज हुआ और इस उद्योग का पुनः विकास हुआ। जूट-उद्योग को समय समय पर विभिन्न उतार-चढ़ाव के मध्य गुजरना पड़ा है। सन् १६४७ में भारत का विभाजन हो गया और इस विभाजन के परिणामस्वरूप जूट व्यवसाय को अचानक गहरा धक्का पहुँचा। जूट उत्पादन करने वाली ७३ प्रतिशत भूमि पाकिस्तान में चली गई और सम्पूर्ण मिलें भारत के पास रह गईं। भारत जूट के लिए पाकिस्तान पर आधारित हो गया। पाकिस्तान के भारत से मित्रतापूर्ण सम्बन्ध नहीं होने के कारण और रुपये का उन्मूलन कर देने के कारण जूट मिलना एक कठिन समस्या बन गई। विभिन्न देशों से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर इस समस्या को हल किया गया।

जूट उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर रहने के लिए भारत सरकार पूर्ण रूप से प्रयत्नशील है। इतना होते हुए भी हमें पाकिस्तान से जूट मँगवानी पड़ती है। जूट के उत्पादन के मार्ग निम्नलिखित बाधायें हैं।

(क) हमारे देश में अन्न की बहुत कमी है, इस कारण जूट के उत्पादन के लिए अधिक भूमि नहीं दी जा सकती है।

(ख) भारतीय जूट पश्चिमी बंगाल के जूट की अपेक्षा घटिया है।

(ग) पाकिस्तान भी जूट उद्योग के विकास के लिए जूट मिलें स्थापित कर रहा है।

जूट उद्योग के विकास के लिए सर्वप्रथम आवश्यकता यह है कि आधुनिक यन्त्रों का प्रयोग किया जाये और उत्पादन व्यय को कम किया जाये। भारत के लिए जूट उद्योग अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके विदेशी मुद्राएँ सरलतापूर्वक प्राप्त हो सकती हैं। हमारे देश के द्वारा

सभी देशों को विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका को जूट का सामान भेजा जाता है।

प्रश्न ६—भारत में समुद्री जहाज निर्माण, रेल के इंजिन तथा मोटर उद्योग के सम्बन्ध में टिप्पणियाँ लिखिये।

उत्तर—१. भारत में समुद्री जहाज का निर्माण—भारत सदैव से समुद्री जहाज के निर्माण में अग्रसर रहा है। प्राचीन काल में भारत के बने हुए जहाजों के द्वारा दूर-दूर देशों तक भारतीय माल ले जाते थे। नार्वे, स्वीडन, मेक्सिको, जावा, सुमात्रा आदि तक भारतीय जहाज यात्रा करते थे। अंग्रेजों के शासन काल में इसका पतन हो गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार ने इस ओर विशेष रूप से ध्यान दिया। भारत में सर्वप्रथम समुद्री जहाज बनाने का कारखाना सिंधिया स्टीम नैवीगेशन कंम्पनी ने विशाखापट्टनम् में स्थापित किया। इस कम्पनी ने सन् १६४८ में जल ऊषा नामक जलयान बनाया। इसके पश्चात् सन् १६५२ में हिन्दुस्तान शिपयार्ड लि० नामक कम्पनी की स्थापना की गई। इस कम्पनी में दो तिहाई पूंजी भारत सरकार की और एक तिहाई पूंजी सिंधिया ने लगा रखी है। विशाखापट्टनम् में आधुनिक ढङ्ग के सामुद्रिक जहाज बनाये जाते हैं।

२. रेल के एंजिन—भारत में इंजिनों का आयात इङ्गलैण्ड से होता था, परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत सरकार ने कलकत्ता के पास चित्तरंजन में रेल के एंजिन बनाने का कारखाना स्थापित किया है। इसमें बड़ी लाइन के एंजिन बनते हैं। इसके अलावा जमशेदपुर में लोकोमोटिव कम्पनी है जहाँ छोटी लाइन पर चलने वाले एंजिन बनाये जाते हैं। वर्तमान भारत सरकार इस बात के लिए विशेष रूप से प्रयत्नशील है कि अधिक से अधिक एंजिनों का निर्माण किया जाय।

३. मोटर उद्योग—भारत जिस समय तक परतन्त्र था, उस समय तक मोटरों का आयात इंगलैण्ड से होता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात वर्तमान भारत सरकार ने मोटर उद्योग विकास पर पूर्ण रूप से ध्यान दिया है। भारत में कई प्रमुख मोटर निर्माण के कारखाने हैं, जिनमें हिन्दुस्तान मोटर्स, प्रीमियर आटोमोबाइल्स, महेन्द्र, अशोक, लेलैण्ड तथ स्टेण्डर्ड मोटर्स प्रसिद्ध है। महेन्द्र के द्वारा जीप का और लेलैण्ड के द्वार

ट्रकों का निर्माण किया जाता है। शेष कारखानों में मोटरों का निर्माण किया जाता है। भारत सरकार ने सस्ती मोटर बनाने के लिए एक कारखाना खोलने का निर्णय किया है। आशा की जाती है कि भारत मोटर उद्योग के क्षेत्र में भी आत्मनिर्भर हो सकेगा।

अध्याय ६

यातायात

प्रश्न १—यातायात का महत्व किस देश के लिए क्या हो सकता है इस पर अपने विचार प्रकट कीजिए ?

उत्तर—यातायात के साधनों का होना किसी भी देश की उन्नति और सभ्यता के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। आज मनुष्य की स्थिति में जितने भी परिवर्तन हो सके हैं, उनमें यातायात के साधनों का विशेष महत्व है। इसका प्रभाव निम्न रूप से स्पष्ट किया जा सकता है :—

१. राजनीतिक दृष्टिकोण से—राजनीतिक दृष्टिकोण से यातायात के साधनों का विशेष महत्व है। प्रशासनिक सुविधाओं के लिए भी यातायात के शीघ्रगामी साधनों का होना अनिवार्य है। देशवासियों को एकता के सूत्र में बांधे रखने के लिए और सामाजिक तथा सांस्कृतिक एकता को बनाये रखने के लिए यातायात के साधनों का विकास अत्यन्त आवश्यक है। युद्ध के समय में शत्रुओं को पराजित करने के लिए नवीनतम साधनों का होना एक आवश्यक शर्त है।

२. व्यापारिक दृष्टिकोण से—किसी भी देश का आर्थिक विकास यातायात के शीघ्रगामी साधनों पर आधारित होता है। कृषि, कुटीर उद्योग और औद्योगिक विकास के लिए यातायात की समुचित व्यवस्था का होना अनिवार्य है। व्यापार के विकास के लिये भी शीघ्रगामी सुविधाओं का होना आवश्यक है।

३. राष्ट्रीयता के दृष्टिकोण से—राष्ट्रीय भावना का विकास भी यातायात के साधनों पर निर्भर रहता है। अंग्रेजों के शासन से पूर्व हमारा देश संकुचित भावनाओं का शिकार था, परन्तु जैसे-जैसे यातायात

। भार   क्षण भी दिया जाता है ।

को पुन: जीवन प्रदान किया है।

सम्बन्धी सुविधाओं का विकास होता गया, वैसे-वैसे राष्ट्रीयता का विकास होता गया।

४. सामाजिक दृष्टिकोण से—यातायात के साधनों से पूर्व एक ही देश के विभिन्न भागों में रहने वाले व्यक्तियों में किसी प्रकार कोई आपसी सम्पर्क नहीं था और कोई भी किसी की सामाजिक गति विधियों से परिचित नहीं था, परन्तु सामाजिक सम्पर्क को बढ़ाने के लिये यातायात के साधन लाभप्रद सिद्ध हुये हैं।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यातायात के साधनों का विशेष महत्व है। किसी भी देश की सभ्यता के विकास के लिए यातायात के साधनों की प्रगति अत्यन्त आवश्यक है। यही कारण है कि प्रत्येक सरकार यातायात के साधनों के विकास के लिए प्रयत्नशील रहती है।

प्रश्न २—भारत में रेलवे यातायात के विकास पर छोटा लेख लिखिये।

उत्तर—अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारतवासियों को रेल के विषय में कोई जानकारी प्राप्त नहीं थी। उन्होंने प्रशासनिक सुविधा के लिये सेनाओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजने के लिए, बन्दरगाहों तक माल लाने और ले जाने के लिए और पैदावार की व्यवस्था के लिए रेल की आवश्यकता महसूस की और उन्होंने इसके विकास पर पूर्ण रूप से ध्यान दिया।

१. गारण्टी पद्धति पर रेलों का विकास—भारत में सन् १८४४ में सर्वप्रथम रेलों का निर्माण आरम्भ हुआ। सरकार ने रेलों का उत्तरदायित्व ब्रिटेन की कम्पनी को सौंपा और इसके साथ ही उनको एकाधिकार मुफ्त भूमि और क्षतिपूर्ति तथा निश्चित काम देने की भी गारण्टी दी। इस प्रकार कम्पनी ने पैसा मनमाने रूप से व्यय किया। रेलों के द्वारा सन् १६०० तक कोई लाभ नहीं हो सका।

२. रेलों पर सरकार का अधिकार—सरकार ने भी सन् १८७० के पश्चात् रेल निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया। प्रथम महायुद्ध के काल में रेलों की स्थिति शोचनीय हो गई थी। सन् १६२० में आकवर्थ कमेटी की सिफारिश के आधार पर कम्पनी के द्वारा संचालित रेलों पर सरकार

का अधिकार हो गया। द्वितीय महायुद्ध के काल में एक बार पुनः सेना, यातायात, रेल के एंजिन आदि के कारण अनेक बाधाएँ उत्पन्न हो गईं।

३. एंजिन निर्माण के लिए कारखानों की स्थापना—स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् एंजिन निर्माण के लक्ष्य को विशेष रूप में दृष्टिगत से रखा गया। चित्तरंजन लोकोमोटिव तथा टाटा लोकोमोटिव क्रमशः कलकत्ता और जमशेदपुर में स्थापित किये गये। इसके द्वारा रेल की कार्य क्षमता का विकास हुआ है। इसके अतिरिक्त पैरम्बूर में रेल के डिब्बे बनाने का कारखाना स्थापित किया गया है। इस प्रकार आजकल रेलवे से संबंधित वस्तुओं का निर्माण भारत में ही किया जाता है।

४. पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत रेलों का विस्तार—युद्ध काल में ४३० मील लम्बी रेल की पटरियाँ उखाड़ दी गई थीं। भारत सरकार के द्वारा प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उन्हें फिर से बिछाया गया और ३८० मील लम्बी नई रेल की लाइनें बिछाई गई हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ४८२ मील लम्बी नई रेल की लाइनें भी बिछाई गई। इस प्रकार रेलवे लाइन का निरन्तर विस्तार हो रहा है। बिजली और डीजल एंजिन की सहायता से भी कुछ रेलें चलाने की व्यवस्था की गई। कहीं-कहीं दोहरी लाइनें भी बिछाई गई हैं। तृतीय पंचवर्षीय योजना में इसके विस्तार पर पूर्ण रूप से ध्यान दिया गया है। १२७० मील लम्बी लाइनें बिछाने का लक्ष्य रखा गया है। कोयले के उत्पादन की वृद्धि के लिए २०० मील लम्बी रेल की लाइनें डाली जायेंगी। औद्योगिक विकास के लिये भी रेलवे लाइन का विस्तार अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वर्तमान भारत सरकार रेलवे यातायात के विकास के लिए विशेष रूप से प्रयत्नशील है। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इनका विस्तार दूसरे देश में पूर्णतः हो जायेगा—ऐसी हम आशा कर सकते हैं।

प्रश्न ३—भारत में सड़क यातायात के विकास का वर्णन कीजिए।

उत्तर—प्राचीन भारत में भी सड़कों के विकास को विशेष रूप से दृष्टिगत रखा गया है। हमारे देश में अनेक शासकों ने जिनमें अशोक आदि

प्रसिद्ध हैं उन्होंने सड़कों का निर्माण करवाया। वर्तमान काल की ग्रांड ट्रंक रोड़ जो कलकत्ता से पेशावर तक जाती है, उसका निर्माण अशोक के शासन काल में किया गया था। फिरोज तुगलक और शेरशाह सूरी ने भी सड़कों के निर्माण को विशेष रूप से दृष्टिगत रखा।

१. **पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत सड़कों का विस्तार**—भारत में सन् १९५१ में अर्थात् प्रथम पंचवर्षीय योजना से पूर्व ९७,००० मील लम्बी पक्की सड़क और १४,७००० मील लम्बी कच्ची सड़कें थीं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १०,००० मील लम्बी नई सड़कें बनाई गईं। इसके अतिरिक्त २०,००० मील लम्बी कच्ची सड़कों का निर्माण किया गया और १०,००० मील लम्बी सड़कों का सुधार किया गया। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सड़कों का निर्माण तीव्र गति से किया गया। भारत में १९६१ तक १४,४,००० मील डामर की सड़कें और २,५०,००० मील लम्बी बिना डामर की सड़कें थीं। परन्तु भविष्य के लिए बीस वर्षीय योजना का निर्माण किया गया, जिसके अन्तर्गत व्यवस्था की गई है कि १९८१ तक प्रत्येक गांव पक्की सड़क से चार मील से अधिक दूर नहीं रहे और किसी भी प्रकार की सड़क से १॥ मील से अधिक दूर नहीं रहना चाहिए। पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सड़कों का तेजी से परिवर्तन किया जा रहा है। नदियों पर पुलों का निर्माण किया जा रहा है और महत्वपूर्ण भागों को विस्तृत किया जा रहा है। काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, आसाम तथा उत्तरी सीमाक्षेत्र में तेजी से सड़कें बनाई जा रही हैं।

२. **सड़कों का वर्गीकरण**—सड़कों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—(i) राष्ट्रीय और (ii) प्रादेशिक। राष्ट्रीय सड़कों मे चार प्रमुख हैं—

ग्रांड ट्रंक रोड़—(क) यह सड़क पेशावर से कलकत्ता तक जाती है। (ख) कलकत्ता से मद्रास तक जाती है। (ग) मद्रास से बम्बई तक जाती है। (घ) बम्बई से दिल्ली तक जाती है। इन सड़कों के द्वारा प्रमुख नगरों और उनकी राजधानियों तथा बन्दरगाहों को मिलाया गया है। प्रादेशिक सड़कें राज्यों की मुख्य सड़कें हैं, जिनके द्वारा राज्य के प्रमुख नगरों को जोड़ा जाता है। राज्य सरकारों के द्वारा सड़क यातायात का राष्ट्रीय

करण कर लिया गया है। मुख्य मार्गों पर राज्य की बसें चलती हैं। यात्री को भी सुख सुविधाएं प्राप्त हो गई हैं। मोटर और ट्रकों के द्वारा माल भेजने की भी सुविधा होगई है?

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्राम और नगरवासियों के मध्य सम्पर्क स्थापित करने के लिये सड़क यातायात का विकास अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। यही कारण है कि वर्तमान भारत सरकार के पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इसके विकास को पूर्णरूप से दृष्टिगत रखा है।

अध्याय ७

पंचवर्षीय योजनाएँ

प्रश्न १—भारत की निर्धनता का संक्षेप में वर्णन कीजिए और बतलाइए कि पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा किसप्रकार भारतीयों के रहन-सहन का दर्जा ऊँचा उठाया जा सकता है?

उत्तर—आज हमारा देश भारत अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा बहुत ही गरीब देश है। आज प्रत्येक भारतीय के सामने भोजन, वस्त्र व मकान की समस्या है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी भारतवर्ष बहुत पिछड़ा हुआ है। अतः जब तक देश की गरीबी दूर नहीं की जावेगी तब तक देश की उपर्युक्त समस्यायें नहीं सुलझ सकतीं।

भारतवर्ष की निर्धनता के कुछ मुख्य-मुख्य कारण निम्नलिखित हैं:—

१. कृषि की शोचनीय दशा—भारत की ७०% जनसंख्या खेती पर निर्भर है। भारत में खेती की शोचनीय दशा के कारण आज भी हमें लाखों टन अनाज अपने देश की आवश्यकता को पूरा करने के लिये विदेशों से मांगना पड़ता है। हमारे देश के किसानों के पास विस्तृत खेतों के न होने के कारण उनके पास पैदावार बहुत कम होती है।

२. कुटीर उद्योगों की अवनत दशा—भारत के अन्दर आज कुटीर उद्योगों की दशा भी बड़ी खराब है। देश के कारीगरों में से अधिकांश का जीवन कुटीर उद्योगों पर निर्भर है। अतः निर्धनता को मिटाने के लिये

इसकी तरफ भी पर्याप्त ध्यान देना पड़ेगा।

३. **बड़े-बड़े उद्योगों की कमी**—हमारे देश में अभी इतने बड़े-बड़े उद्योग नहीं हैं कि जिससे भारत की गरीबी व बेरोजगारी की समस्या हल हो सके। अत: बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना व उनका विकास भी जरूरी है।

४. **अविकसित खनिज उद्योग**—खनिज उद्योगों का पर्याप्त विकास न होना भी गरीबी का एक कारण है। अत: इनका विकास भी बहुत जरूरी है।

५. **राष्ट्रीय सम्पत्ति का उचित व न्यायपूर्ण बँटवारा न होना**—राष्ट्रीय सम्पति का उचित व न्यायपूर्ण बँटवारा न होना भी गरीबी का प्रमुख कारण है। एक ओर तो पूँजीपति ऐश और आराम की जिन्दगी बिताते हैं, तो दूसरी ओर लाखों और करोड़ों व्यक्तियों को खाने को अन्न और पहनने को कपड़ा भी नहीं मिलता है। मजदूरों के श्रम का पूँजीपति व जमींदार वर्ग अनुचित लाभ उठाते हैं। अत: गरीबी को मिटाने के लिए देश की राष्ट्रीय सम्पत्ति का उचित बटवारा होना चाहिये।

६. **सामाजिक कुरीतियां**—हमारे समाज में बहुत सी ऐसी सामाजिक कुरीतियां हैं जिससे देश में गरीबी का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अधिकांश भारतीय शादी-विवाह व मोसर के अवसर पर अपनी सामर्थ्य के बाहर दूसरों से कर्ज लेकर गरीबी को बुलाते हैं। इसी तरह अधिकांश भारतीय अपना गाँव व शहर छोड़कर कमाने के लिए बाहर जाना पसन्द नहीं करते। अत: उनके पास पर्याप्त मात्रा में काम न होने से उनकी आर्थिक उन्नति नहीं हो सकती है। इसलिये देश की गरीबी को मिटाने के लिए इन कुरीतियों को भी हटाना पड़ेगा।

७. **अंग्रेजों द्वारा शोषण**—भारत पर अंग्रेजों का शासन भी हमारे देश में गरीबी का मुख्य कारण है। उनकी आर्थिक नीति के कारण हमारे उद्योग धन्धे पनप नहीं सके। अत: देश में गरीबी व बेकारी बढ़ी।

८. **आबादी का बढ़ना**—आज हमारे देश की आबादी अन्य देशों की अपेक्षा बड़ी तेजी से बढ़ रही है अत: इस जनसंख्या की वृद्धि के

कारण भोजन, मकान व रोजगार की समस्यायें भी हमारे सामने बनी रहती हैं। इस तरह की गरीबी दिन प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। अतः गरीबी को मिटाने के लिए बढ़ती हुई जन-संख्या को रोकना भी जरूरी है।

भारत के स्वतन्त्र होने पर देश के नेताओं ने भारत की निर्धनता पर ध्यान दिया। भारत को सुखी एवं समृद्ध बनाने के लिए आवश्यक था कि देश से निर्धनता का उन्मूलन किया जावे। अतः हमारी राष्ट्रीय सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण किया।

९. कृषि की उन्नति के लिए प्रयत्न—कृषि की उन्नति के लिए सरकार भरसक प्रयत्न कर रही है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास को प्राथमिकता दी गई थी।

दूसरी पंचवर्षीय योजना नें भी कृषि विकास पर ३५० करोड़ रुपयों की व्यवस्था की गई। तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी कृषि पर अत्यधिक ध्यान दिया गया है। कृषि पर लगभग १३ अरब रुपये व्यय किये जायेंगे।

१०. कुटीर उद्योग व बड़े उद्योगों का विकास—हमारी राष्ट्रीय सरकार ने उद्योगों को विकसित करने के लिए प्रथम तथा द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं में भी अरबों रुपये की रकम खर्च की है तथा तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी अरबों रुपया खर्च करने की योजना है।

११. सम्पत्ति का न्यायपूर्ण व उचित बटवारा—भारत सरकार नें देश से जागीरदारी प्रथा समाप्त करदी है। कई फैक्ट्री कानून पास कर दिये हैं जिससे मजदूरों की आर्थिक हालत में सुधार हुए हैं। अब किसानों को कोई बेदखल नहीं कर सकता। कई बड़े-बड़े उद्योगों का पूरा या आधा राष्ट्रीकरण कर दिया गया है। सरकार देश में 'समाजवादी समाज' की स्थापना के लिए प्रयत्नशील है अतः सरकार ऐसे अनेक कार्य कर रही है, जिससे राष्ट्रीय सम्पत्ति का उचित व न्यायपूर्ण बटवारा हो।

१२. आबादी की वृद्धि को रोकने व सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के प्रयत्न—हमारी राष्ट्रीय सरकार को कानून बनाकर जनसंख्या की इस बढ़ती हुई वृद्धि को रोकना चाहिए। इसी हेतु सरकार परिवार नियोजन का प्रचार कर रही है। सामाजिक कुरीतियों को हटाने के लिए

सरकार को शिक्षा की तरफ ज्यादा ध्यान देना चाहिये, जिससे ग्रामीण लोग बेकार रीति-रिवाज करना छोड़ दें।

इसी प्रकार हमारी सरकार पंचवर्षीय योजनाओं के जरिये अन्य क्षेत्रों में भी काफी उन्नति कर रही है। तीसरी पंचवर्षीय योजना समाप्त होने पर हमारी राष्ट्रीय आय में काफी वृद्धि होगी, कृषि में आत्मनिर्भर हो जायेंगे, रोजगार में वृद्धि होगी, आर्थिक एवं सामाजिक असमानता दूर हो जायेगी। अतः भारतवर्ष की गरीबी भी नष्ट हो जायगी और उसका रहन-सहन का दर्जा भी ऊँचा उठाया जा सकेगा।

प्रश्न २—पंचवर्षीय योजनाओं की आवश्यकता क्यों थी? इस पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—आज भारत के अन्दर गरीबी इस सीमा तक पहुँच गई है कि साधारण भारतीय अपनी प्राथमिक तीन आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं कर पाता है। हर समय उसके सामने भोजन, वस्त्र और मकान की समस्या मुँह बाये खड़ी रहती है। भारत की अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा प्रति एकड़ उपज बहुत कम है। अतः उसको विदेशों से प्रतिवर्ष लाखों मन अनाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आयात करना पड़ता है। अनाज के अलावा हमारे देश में सब्जी, फल, दूध, घी, मक्खन, मांस, अण्डा, मछली इत्यादि की भी भारी मात्रा में कमी है। दूध का उत्पादन भारत में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन केवल सात औंस है जबकि अन्य देशों में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ३० से ६० औंस तक दूध का उत्पादन होता है। यहाँ पर इतनी भूमि भी पर्याप्त मात्रा में नहीं है कि उस पर पशुओं का पालन करके मांस की पूर्ति कर सकें। अतः भारत को अनाज के साथ-साथ इन पौष्टिक पदार्थों का भी उचित मात्रा में उत्पादन करना पड़ेगा।

दूसरी समस्या जो भारत के सामने है वह है कपड़े की। जहाँ तक सूती कपड़े का प्रश्न है भारत प्रतिवर्ष ८० करोड़ गज से एक अरब गज तक विदेशों को निर्यात करता है। लेकिन भारतीय की औसत आमदनी इतनी कम है कि वह शरीर ढकने के लिये पर्याप्त मात्रा में वस्त्र नहीं खरीद सकता। अतः भारतीय की औसत आमदनी को ऊँचा उठाना पड़ेगा। तब ही वह पर्याप्त मात्रा में वस्त्र खरीद सकता है। सूती वस्त्र उद्योग का विकास होने पर ही वस्त्र सस्ते दामों में उत्पन्न किया जा सकता है।

भारतीय के सामने रहने के लिये मकानों की समस्या भी है। आज भारत के शहरों व गाँवों में पर्याप्त मात्रा में अच्छे व हवादार मकान नहीं मिलते। कम आय वालों के लिये तो अच्छे मकान मिलना बहुत ही कठिन है। अतः हमको सीमेंट, लोहा और लकड़ी का भी काफी मात्रा में उत्पादन करना पड़ेगा।

हमारे देश में रोगों का बाहुल्य है। यहां अन्य देशों की अपेक्षा मृत्यु संख्या बहुत है। इसका प्रमुख कारण भारतीयों की गरीबी है। गरीबी के कारण वह उचित रूप से चिकित्सा नहीं करा सकता। अतः उसकी कार्यक्षमता पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। वह अन्य देशों की अपेक्षा कम उत्पादन करता है। अतः भारतीयों का स्वास्थ्य सुधारने के लिये हमको चिकित्सा की तरफ भी यथेष्ट ध्यान देना होगा।

भारत के अन्दर अशिक्षितों की भी कमी नहीं है। भारत की अधिकांश जनता गाँवों में रहती है और बिल्कुल निरक्षर है। अतः रहन-सहन का दर्जा उठाने के लिये भारतीयों को शिक्षित बनाना होगा। देश में काफी मात्रा में स्कूल व कॉलेजों की स्थापना करनी होगी।

देश की निर्धनता को मिटाने में उद्योग धन्धों का भी बहुत हाथ रहता है। बड़े-बड़े उद्योगों, कुटीर उद्योगों व कल कारखानों का तेजी से विकास करना पड़ेगा। देश में औद्योगीकरण के बिना सुख-समृद्धि प्राप्त नहीं हो सकती।

अतः उपर्युक्त समस्याओं को हल करने के लिये ही हमारी राष्ट्रीय सरकार को पंचवर्षीय योजनाओं का सहारा लेना पड़ा। इन योजनाओं के पूरा होने पर देश में रहन-सहन का स्तर ऊँचा होगा। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी और हम हर क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो जायेंगे।

प्रश्न ३—प्रथम पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों का विस्तार-पूर्वक वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारत के स्वतन्त्र होने पर अनेक समस्याओं के साथ निर्धनता की समस्या भी बड़े उग्र रूप में देश के सामने थी। इस समस्या के समाधान का एक मात्र हल यही था कि योजनाबद्ध रूप में आर्थिक विकास किया जाये। अस्तु — आयोग की स्थापना की गई। इसने प्रथम पंचवर्षीय योजना

प्रस्तुत की जो १९५१ में लागू की गई और १९५६ में समाप्त हुई।

योजना का उद्देश्य

१. उत्पादन में वृद्धि--देश में अधिकाधिक धन की वृद्धि की जाये अस्तु, इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु कृषि एवं उद्योग धन्धों के विकास का प्रबन्ध किया जाये और उत्पादन में वृद्धि कर प्रत्येक मनुष्य की आय में वृद्धि की जाये।

२. आर्थिक समानता—देश में आर्थिक समानता लाने के लिये आय का न्यायपूर्ण वितरण हो। इस कार्य को धीरे-धीरे अहिंसात्मक तरीकों द्वारा पूर्ण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

३. सामाजिक न्याय की स्थापना—प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक न्याय प्राप्त हो सके, योजना का यह प्रमुख लक्ष्य था अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता के अनुसार विकास की पूर्णरूपेण सुविधा प्राप्त हो।

४. बेरोजगारी का निवारण—बढ़ती हुई बेरोजगारी को समाप्त करने हेतु अधिक से अधिक लोगों को उनकी योग्यतानुसार कार्य दिया जाये।

५. शिक्षा का प्रसार—देश में व्याप्त अशिक्षा और निरक्षरता की समाप्ति हेतु प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा का प्रचार व प्रसार किया जाये।

६ स्वास्थ्य रक्षा—रोगों से मुक्ति दिलाने हेतु चिकित्सा की समुचित व्यवस्था हो सके एवं संतुलित भोजन प्राप्त हो सके, अतः उत्तम साधन उपलब्ध किये जायें।

७. शक्ति उत्पादन में वृद्धि—विद्युत् शक्ति उत्पादन में वृद्धि की जाये ताकि कल कारखानों का समुचित विकास हो सके।

८. यातायात साधन में वृद्धि—आर्थिक विकास होने का कारण वाणिज्य विकास संभाव्य है और इसके लिये यातायात के साधन पर्याप्त मात्रा में हों। अतः यातायात में वृद्धि की जाये।

प्रश्न ४—प्रथम पंचवर्षीय योजना अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में कहाँ तक सफल हुई ? विस्तारपूर्वक लिखिये।

उत्तर—प्रथम पंचवर्षीय योजना की सफलताएँ निम्न हैं

१. कृषि में उत्पादन वृद्धि—कृषि में आशातीत सफलता प्राप्त हुई। अनाज का उत्पादन ६ करोड़ १६ लाख टन से बढ़कर ६ करोड़ ५८ लाख टन हो गया। कपास का उत्पादन भी निर्धारित लक्ष्य के बराबर ही अर्थात् ४२ लाख गाँठ हुआ। जूट उत्पादन लक्ष्य पूर्ण न हो सका।

२. औद्योगिक उत्पादन एवं औद्योगीकरण में वृद्धि—देश के औद्योगिक उत्पादन में लगभग ६० प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस योजना में औद्योगीकरण के अतिरिक्त प्रमुख कारखाने भी खुले जैसे चितरंजन में इंजन का, सिन्द्री में खाद का, विजगापट्टम में जहाज का, बंगलोर में टेलीफोन का मैसूर में औजार का।

३. राष्ट्रीय आय में वृद्धि—१९५६ में राष्ट्रीय आय ९,००० करोड़ से बढ़कर १०,८०० करोड़ हो गई, अर्थात् १८% की वृद्धि हुई।

४. सिंचाई के साधनों में वृद्धि-सिंचाई का लक्ष्य भी लगभग पूर्ण हुआ। ७० लाख एकड़ नई भूमि बड़ी सिंचाई योजना से तथा १ करोड़ एकड़ नई भूमि छोटी सिंचाई योजना से सींची जाने लगी।

५. शक्ति के साधनों में वृद्धि-शक्ति उत्पादन का लक्ष्य भी लगभग प्राप्त कर लिया गया। विद्युत् उत्पादन क्षमता २३ लाख किलोवाट की अपेक्षा ३५ लाख किलोवाट हो गई। १९५०-५१ में ६५७.५ करोड़ यूनिट विद्युत् उत्पन्न हुई थी। १९५५-५६ में ११०० करोड़ यूनिट विद्युत् उत्पन्न की गई।

६. सामुदायिक विकास—योजना के आरम्भ में लक्ष्य केवल ७ करोड़ ४० लाख जनसंख्या को लाने का था किन्तु योजना के अन्त में १२००. विकास खण्डों में लगभग १,२२, ९५७ गांवों की ७ करोड़ ९० लाख जनसंख्या सामुदायिक विकास के अन्तर्गत आई।

७. कुटीर उद्योग का विकास—कुटीर उद्योग भी विकसित हुआ और इसके लिये अनेक बोर्डों की स्थापना की गई।

८. यातायात के साधनों में विकास—आवागमन की सुविधा के लिये कई [illegible] का निर्माण हुआ। रेल के डिब्बों के निर्माण का

लक्ष्य पूर्ण हुआ और इंजन, जहाज आदि के कारखानों की स्थापना हुई।

९. अन्य सफलताएँ—इस योजना काल में अन्य क्षेत्रों में सफलता प्राप्त की गई—जैसे ग्रामों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु सहकारी समिति की स्थापना, डाक-तार का विकास, आकाशवाणी केन्द्रों की स्थापना, शिक्षा के प्रचार व प्रसार का कार्य, चिकित्सा की सुविधा प्रदान करना आदि।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इस योजना काल में जो लक्ष्य निर्धारित किये गये थे लगभग सभी पूर्ण हुए और आशातीत सफलता प्राप्त हुई।

प्रश्न ५—प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए क्या प्रयत्न किये गये? उनमें कहाँ तक सफलता मिली?

उत्तर—जब अंग्रेजों ने हमारे देश को आजाद किया उस समय तक उनके द्वारा देश का काफी शोषण किया जा चुका था। देश की खेती व उद्योग-धन्धों की हालत काफी बिगड़ी हुई थी। उस समय हमारे सामने सबसे बड़ी विकट समस्या गरीबी की थी। अतः इस गरीबी को एक योजनाबद्ध कार्य-क्रम के द्वारा ही मिटाया जा सकता था। इसलिए हमारी राष्ट्रीय सरकार ने एक योजना आयोग की स्थापना की। इस आयोग ने प्रथम पंचवर्षीय योजना तैयार की जो देश में १९५१ में लागू की गई।

भारतीयों का मुख्य व्यवसाय खेती करना है। देश के ७० प्रतिशत निवासी खेती ही करते हैं किन्तु फिर भी जिस समय प्रथम पंचवर्षीय योजना बनाई गई थी उस समय देश की खाद्य समस्या बड़ी विकट थी। हमको काफी मात्रा में अन्न विदेशों से मँगाना पड़ता था। अतः हमको पंचवर्षीय योजना द्वारा बढ़ती हुई जनसंख्या की अन्न समस्या को हल करना था।

हमारे देश में कपास की भी काफी मात्रा में कमी थी। कपास का काफी मात्रा में उत्पादन न होने के कारण, कुछ मिलें तो कपास न मिलने के कारण बन्द हो गई थीं। अतः योजना में कपास का उत्पादन ४२ प्रतिशत बढ़ाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। फिर भी हमारी आवश्यकताओं

को देखते हुए हमको विदेशों से कपास मँगानी पड़ेगी।

देश का बँटवारा हो जाने के कारण जूट (पटसन) की समस्या भी हमारे सामने आई। बँटवारे के परिणामस्वरूप जूट की सारी मिलें (पश्चिमी बंगाल) भारत में रह गई और जूट उत्पन्न करने वाली भूमि का ७३ प्रतिशत भाग पूर्वी पाकिस्तानी में चला गया। अतः योजना में जूट के उत्पादन में ६३ प्रतिशत की वृद्धि का लक्ष्य रखा गया। तिलहन में ८ प्रतिशत वृद्धि का व शक्कर में प्रति व्यक्ति के पीछे प्रतिदिन दो औंस शक्कर मिलने का लक्ष निर्धारित किया गया।

खेती के उत्पादन में उन्नति करने के लिए निम्नलिखित साधन उपलब्ध करने का निश्चय किया गया :—

१. सिंचाई साधनों में वृद्धि—भारत में पर्याप्त मात्रा में वर्षा नहीं होती और जो कुछ होती है वह अनियमित होती है। इसलिए सिंचाई की यहाँ बड़ी आवश्यकता है। अतः पंचवर्षीय योजना में पांच वर्षों के अन्दर एक करोड़ ९७ लाख एकड़ नई भूमि की सिंचाई की सुविधा प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया। इसी उद्देश्य से योजना में बड़ी नदी घाटी योजनाओं को क्रियान्वित किया गया। इनमें से प्रमुख भांकरा नागल, हीराकुन्ड, कोसी, रिहन्द, चम्बल, दामोदर, मयुराक्षी व तुंग-भद्र योजना आदि हैं। सिंचाई के लिए कुए और ट्यूबवेल्स भी खुदवाये गये। बड़ी सिंचाई योजनाओं में ८५ लाख एकड़ तथा छोटी सिंचाई योजनाओं द्वारा १ करोड़ १२ लाख एकड़ नई भूमि सींची जाने का लक्ष्य था।

२. खाद के अभाव को दूर करना—गोबर एक बहुमूल्य खाद है। इससे भूमि की उर्वरता को बढ़ाने में मदद मिलती है। कृषि की पैदावार में वृद्धि के लिये अधिक खाद प्राप्त करने की व्यवस्था की गई। बिहार में सिंदरी में एक खाद का कारखाना स्थापित किया गया। उसमें वैज्ञानिक खाद का उत्पादन बढ़ाने का प्रयास किया गया।

३. अच्छे बीजों का प्रबन्ध—कृषि की अच्छी फसल बहुत कुछ बीजों की कोटि पर भी निर्भर करती है। अतः गाँवों में सरकार द्वारा बीज गोदाम स्थापित किये गये हैं जिससे किसानों को अच्छे बीज बांटने का प्रबन्ध किया जा सके।

४. खेतों के सुधरे तरीकों का प्रचार—सरकार द्वारा किसानों को सुधरे तरीके से खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया गया जिससे कि प्रति एकड़ भूमि की उपज वढ़ सके। भारत में अन्य देशों की अपेक्षा प्रति एकड़ पैदावार कम होती है। अतः हम सुधरे तरीकों को अपनाकर प्रति एकड़ पैदावार वढ़ा सकते हैं।

५. वंजर भूमि को उपजाऊ बनाना—देश में काफी एकड़ खेती योग्य भूमि वेकार पड़ी हुई है। योजना में प्रति वर्ष ४० लाख एकड़ वंजर भूमि को उपजाऊ वनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया जो पूरा नहीं हुआ।

प्रथम पंचवर्षीय योजना द्वारा खेती में सन्तोषजनक सफलता प्राप्त हुई। अनाज का उत्पादन ६ करोड़ १६ लाख टन से वढ़कर ६ करोड़ ५८ लाख टन हो गया। कपास की पैदावार भी ४२ लाख गाँठ निर्धारित लक्ष्य के वरावर हो गई। जूट की पैदावार में लक्ष्य की पूर्ति न हो सकी। तिलहन में १०० प्रतिशत के लगभग वृद्धि हुई

सिंचाई के क्षेत्र में भी हमको आशातीत उन्नति प्राप्त हुई वड़ी सिंचाई योजनाओं से लगभग ७० लाख एकड़ नई भूमि तथा छोटी सिंचाई योजनाओं में एक करोड़ नई भूमि सींची जाने लगी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने में काफी सफलता मिली है। हम अन्न के उत्पादन में वहुत कुछ आत्म-निर्भर हो गये हैं।

प्रश्न ६—दूसरी पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हुई। योजना में निर्धारित लक्ष्यों को हमने प्राप्त किया। जनता में आशा व उत्साह का संचार हुआ क्योंकि यह हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना थी। यह हमारा प्रथम प्रयास था। अतः उसमें कुछ कमियाँ रहना स्वाभाविक था। इन कमियों को मद्दे नजर रखते हुए व खुद सोच-विचार के वाद हमारी राष्ट्रीय सरकार ने प्रथम पंचवर्षीय योजना के वाद देश में दूसरी पंचवर्षीय योजना लागू की। इस योजना में देश की प्रगति के लिये एक ठोस कार्य-क्रम रखा गया।

इस योजना के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं :—

१. राष्ट्रीय आय की वृद्धि करना (Increment of National Income)—इस योजना का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय आय में वृद्धि करना था। प्रथम योजना काल में राष्ट्रीय आय में १८ प्रतिशत वृद्धि हुई है जबकि दूसरी योजना के पाँच वर्ष के कार्यकाल में राष्ट्रीय आय को २५ प्रतिशत बढ़ा देना था। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने पर भारतीयों का जीवन स्तर ऊँचा उठाया जा सकेगा।

२. औद्योगीकरण (Industrialisation)—प्रथम योजना में कृषि के विकास पर अधिक बल दिया गया था जबकि द्वितीय काल में औद्योगीकरण पर विशेष जोर दिया गया है। बड़े २ फौलाद के कारखाने तथा मशीन बनाने के कारखानों को स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है ताकि देश में विदेशों से प्रति वर्ष लाखों रुपये की लागत से आने वाली मशीनों का आयात रोका जा सके।

३. रोजगार का विस्तार—जिस गति से हमारे देश की जनसंख्या बढ़ रही है उसको देखते हुए देश में कृषि योग्य भूमि का बड़ा अभाव है। अतः यह स्पष्ट है कि कृषि प्रधान देश होते हुए भी सारी जनसंख्या इस उद्योग में नहीं खप सकती। इसलिये यह आवश्यक है कि बड़े २ उद्योग धन्धे खोलकर इस बढ़ती हुई जनसंख्या को उसमें लगाया जावे और इस बढ़ती हुई बेकारी को रोका जा सके। अतः यह जरूरी है कि एक करोड़ से अधिक जनसंख्या को काम देने की व्यवस्था की जावे।

४. आर्थिक असमानता को दूर करना—(Removal of Economical Indifference)—हमारी राष्ट्रीय सरकार का लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना कर देश में आमदनी व सम्पत्ति की असमानताओं को दूर करना है। जिसके पास काफी मात्रा में धन है या जिनकी आय बहुत अधिक है उन पर भारी कर लगाये जायें और इस प्रकार जो सरकार को आय प्राप्त हो उसका इस प्रकार व्यय किया जाय कि कम आय वालों की आमदनी बढ़े। देश में बड़े २ उद्योगों पर कुछ थोड़े से पूँजीपतियों का ही आधिपत्य नहीं हो अतः देश में इस असमानता को दूर करने के लिये कारखानों का राष्ट्रीकरण करना परम आवश्यक

है। देश में किसी प्रकार का अमीर गरीब जैसा भेद न हो।

उपर्युक्त लक्ष्य एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। हम देश में समाजवादी समाज की स्थापना करके ही उपर्युक्त लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं।

प्रश्न ७—सामुदायिक विकास योजनाओं के सम्बन्ध में एक छोटा सा लेख लिखिये।

उत्तर—सामुदायिक विकास योजनाओं का अर्थ है प्रजा संगठित होकर ग्राम विकास के लिए योजना बनाये। भारत में पाँच लाख पैंसठ हजार गांव हैं। इन गांवों की स्थिति बड़ी शोचनीय है। इन योजनाओं के द्वारा समस्त ग्राम सुधार के लिए देशव्यापी प्रयत्न किये जा रहे हैं। इस योजना का श्रीगणेश सन् १९५२ में किया गया।

प्रत्येक सामुदायिक विकास योजना क्षेत्र में लगभग ३०० गांव होते हैं। सौ-सौ गांवों को तीन विकास खण्डों में बांट दिया जाता है। प्रत्येक विकास खण्ड को पाँच-पांच गांवों के समूह में बांट दिया जाता है। प्रत्येक सामुदायिक विकास खंड को Community Development Block कहते हैं। योजना संचालन के लिए विशेष दक्ष तथा उत्साही अधिकारी को चुना जाता है। उसकी सहायता के लिए कृषि विकास अधिकारी, डॉक्टर, पशु चिकित्सक, इंजीनियर, समाज शिक्षा संगठन आदि रखे जाते हैं, जिनसे हर क्षेत्र में तेजी से सुधार किये जा सकें।

योजनाओं के उद्देश्य—सामुदायिक विकास योजनाओं के मुख्य निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

(१) सम्पूर्ण देश में हर सम्भव उपाय से कृषि का विकास करना।

(२) देश में बढ़ती हुई बेरोजगारी की समस्या को नष्ट करना।

(३) यातायात के साधनों का विकास करना।

(४) शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान तथा मनोरंजन के साधनों में विकास करना।

सामुदायिक विकास योजनाओं में कृषि के सम्बन्ध में यह उद्देश्य रखा गया था कि बंजर भूमि को खेती योग्य बनाया जावे। किसानों को अच्छी किस्म के बीज दिये जायें व उनको सुधरे हुए तरीकों के लिए प्रोत्साहित किया जावे। जहाँ पहली योजना के अन्त में ८ करोड़ ग्रामवासी सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत आ पाये वहाँ दूसरी योजना

में देश के करीब २ सारे गाँव सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत आने का लक्ष्य रखा गया। द्वितीय योजना के अन्त तक ३१००विकास खण्डों में सामुदायिक विकास का कार्य फैल गया है जिसमें ४ लाख गाँव शामिल हैं। २० करोड़ जनसंख्या ने इससे लाभ उठाया है। पंचायतों की संख्या ८३ हजार से बढ़कर १,७८,००० हो जावेगी ऐसा अनुमान है।

सामुदायिक योजनाओं में यातायात की तरफ भी काफी ध्यान दिया गया। योजना में यह लक्ष्य रखा गया था कि कोई गाँव आधे मील की दूरी से अधिक दूरी पर न हो।

कृषि व यातायात के अतिरिक्त गाँवों की वेरोजगारी, शिक्षा के विस्तार, स्वास्थ्य के लिये प्रारम्भिक हैल्थ यूनिट की स्थापना व अच्छे मकानों की व्यवस्था की ओर भी ध्यान दिया गया।

योजनाओं के लिए वित्त—अतः इन योजनाओं के अन्तर्गत जो धन व्यय होता है उसका ७५ प्रतिशत केन्द्रीय सरकार तथा २५ प्रतिशत राज्य सरकार देती है। जनता इन योजनाओं में काफी मात्रा में श्रम के रूप में अपना भाग अदा करती है।

इन उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सरकार द्वारा किसानों में अच्छे बीजों का वितरण किया गया, कुए खुदवाये गये, लाखों एकड़ भूमि पर सिचाई की गई। प्राथमिक पाठशालायें खोली गईं। काफी मीलों लम्बी सड़कें बनाई गई। गाँवों को सड़कों से जोड़ा गया जिससे किसानों को शहरों में अनाज ले जाने में राहत मिली। कई मातृ-कल्याण केन्द्र तथा शिशु-कल्याण केन्द्र खोले गये। किसानों को अच्छी नस्ल के पशु दिये गए।

अतः जन-सहयोग द्वारा हमने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त किया। इन योजनाओं द्वारा जनता की कठिनाइयों को सुलझाने में सहायता मिलती है। जनता का जीवन-स्तर ऊँचा उठता है और गांवों में खुशहाली नजर आती है। अगर इसी तरह हमको सफलता मिलती गई तो भारत के गाँवों की काफी उन्नति हो सकेगी।

प्रश्न ८—सामुदायिक विकास योजनाओं का मूल्यांकन कीजिये और बतलाइये कि वे अपने उद्देश्य में कहाँ तक सफल हुई हैं ?

उत्तर—योजनाओं का मूल्यांकन—

१. महत्व—सामुदायिक विकास योजनाओं का महत्व इसी से मालूम हो सकता है कि हमारे देश की काफी जनसंख्या गांवों में निवास करती है। भारत में करीब पांच लाख पैंसठ हजार गांव हैं। इन गांवों की दशा अत्यन्त ही असन्तोषजनक है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में ये पिछड़े हुए हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान आदि की सुविधा नहीं के बराबर है। अतः राष्ट्रीय सरकार ने गांवों की स्थिति सुधारने के लिये पंचवर्षीय योजनाओं में सामुदायिक विकास योजना पर बहुत अधिक ध्यान दिया है। योजना आयोग के शब्दों में "सामुदायिक विकास वह प्रणाली है और ग्रामीण विस्तार का वह माध्यम है जिसके द्वारा पंचवर्षीय योजना गांवों के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में आमूल परिवर्तन का समारम्भ करना चाहती है।"

अतः स्पष्ट है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम एकांकी कार्यक्रम नहीं है बल्कि एक विस्तृत कार्यक्रम है जिसके द्वारा गांवों में प्रत्येक क्षेत्र अर्थात् कृषि, सिचाई, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, रोजगार में महत्वपूर्ण उन्नति होगी। सामुदायिक विकास योजनाओं को कार्यरूप में परिणित करने में ग्रामीण जनता का विशेष हाथ रहता है। अतः इस योजना में ग्रामीण जनता को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

इन योजनाओं द्वारा गांवों में जन जागृति होती है। जनता को स्वावलम्बी बनने की प्रेरणा मिलती है। शिक्षा का प्रसार होने से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सोचने विचारने की क्षमता बढ़ती है, जीवन-यापन के नये-नये तरीकों के प्रति आकर्षण बढ़ता है। खेती करने के नये-नये औजारों व अच्छे बीजों का उन्हें ज्ञान प्राप्त होता है और वे इन्हें प्रयुक्त कर खेती की पैदावार बढ़ाते हैं। स्वास्थ्य व हवादार मकानों में रहने व सफाई का पालन करने से उनकी तन्दुरुस्ती बढ़ती है। साथ-साथ काम करने से एक दूसरे को समझने का मौका मिलता है व आपस में प्रेम-भाव बढ़ता है। इन योजनाओं से उनके जीवन स्तर में वृद्धि होती है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि इन सामुदायिक योजनाओं का ग्रामीण जीवन में काफी महत्व है। इन योजनाओं द्वारा ग्रामीणों में गांव की सर्वांगीण उन्नति

योजनाओं की सफलता—प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त में ८ करोड़ ग्रामवासी सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत आ पाये और इनसे लाभान्वित हुये। द्वितीय योजना के अन्त तक ३१०० विकास खण्डों में सामुदायिक विकास कार्य फैला व करीब २० करोड़ जनसंख्या ने उनसे लाभ उठाया, ऐसा अनुमान है। किसानों में अच्छे बीजों का प्रचार व वितरण किया गया। उनको कृषि के नये-नये औजारों के बारे में समझाया व प्रोत्साहित किया गया। कुएँ खुदवाये और मरम्मत करवाई गई। पाठशालायें खोली गईं और प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र खोले गये जिनमें प्रौढ़ व्यक्तियों ने शिक्षा ग्रहण की। काफी सड़कों का निर्माण किया गया व सिंचाई साधनों में वृद्धि की गई। मातृ-कल्याण व शिशु-कल्याण केन्द्र खोले गये। बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए प्रयत्न किये गये।

नोट—(विस्तृत जानकारी के लिये कृपया प्रश्न ७ का उत्तर देखिये।)

प्रश्न ९—देश में आर्थिक असमानता को कम करने के लिए राज्य ने कौनसे उपाय किये हैं उनकी विवेचना कीजिए?

उत्तर—हमारी सरकार का उद्देश्य देश में समाजवादी कल्याणकारी समाज की स्थापना कर इस बढ़ती हुई आर्थिक विषमता को दूर करना है। आज हम देखते हैं कि एक तरफ देश के लाखों करोड़ों व्यक्ति नंगे, भूखे रहते हैं तो दूसरी ओर कुछ धनी व्यक्ति मजदूरों के कठिन परिश्रम से पैदा की हुई पूँजी से ऐश-आराम का जीवन व्यतीत करते हैं। अतः देश की आर्थिक स्थिति को ठीक करने तथा गरीबी को मिटाने के लिये देश की पूँजी का उचित अनुपात में वितरण होना चाहिए। हमारी राष्ट्रीय सरकार द्वारा इसी असमानता को दूर करने के लिये निम्न उपाय अपनाये गये हैं—

१. **जागीरदारी प्रथा का अन्त**—सरकार ने जागीरदारी प्रथा को समाप्त कर दिया है। पहले भूमि पर स्थायित्व जागीरदार का होता था व किसानों से बेगार ली जाती थी। सरकार द्वारा कानून से यह व्यवस्था की गई कि किसान ही भूमि का स्वामी हो।

२. **भूमि की अधिकतम जोत निर्धारित**—सरकार द्वारा भूमि की अधिकतम जोत निर्धारित की गई जिससे कि एक मनुष्य काफी एकड़

भूमि खरीदकर और उस पर बड़ी मात्रा में कृषि की पैदावार कर बहुत अधिक धन इकट्ठा न कर सके। विभिन्न राज्यों में ३० से ५० एकड़ तक अधिकतम जोत निर्धारित की गई। इसके अतिरिक्त कृषि आयकर की भी व्यवस्था की गई।

३. सरकार द्वारा उद्योग-धन्धों को अपने हाथ में लेना—आजकल सरकार स्वयं उद्योग व व्यापार में हिस्सा लेने लगी है जिससे कि इस काम में लगे हुए लोग अनुचित फायदा उठाकर ज्यादा धन एकत्रित न कर सकें। नये बड़े-बड़े उद्योग धधे सरकार द्वारा संचालित होते हैं व इसकी देख-रेख में काम होता है। देश के कई बड़े उद्योगों का पूरा या आधा राष्ट्रीकरण कर दिया है। बड़े-बड़े कारखानों पर उत्पादन कर लगाया जाता है लेकिन छोटे उद्योग-धन्धों पर' जिनसे कि छोटे उत्पादकों को प्रोत्साहन मिलता है, कर नहीं लगाया जाता जैसे हाथ करघे, खादी, रबड़, खंडसारी, शक्कर पर कोई उत्पादन कर नहीं है।

४. फैक्ट्री कानून—सरकार की ओर से कई फैक्ट्री कानून भी पास किये गये हैं। इससे मजदूरों की आर्थिक दशा सुधारने में काफी सहायता मिली है। कानून से काम के घण्टे नियत कर दिये गये हैं। अगर नियत काम के घण्टों के अलावा मजदूरों से काम लिया जाता है तो उनको ओवर टाइम (over time) काम करने के पैसे देने की भी व्यवस्था है।

५. अन्य कर—जिन लोगों की आमदनी बहुत अधिक है उन लोगों पर सरकार ने आय कर लगाया है। इसके अतिरिक्त सम्पत्ति कर, व्यय कर, मृत्यु कर, अतिरिक्त लाभ कर इत्यादि अन्य प्रकार के कर लगाये गये हैं।

अतः इस तरह से जो आमदनी होती है उसको आम जनता की भलाई के लिये खर्च किया जाता है तथा देश में विषम आर्थिक समानता की समस्या को दूर किया जा रहा है। लेकिन देश से आर्थिक असमानता सम्पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हुई है। इसका कारण यह है कि सदियों से चली आ रही इस आर्थिक असमानता को हम कुछ वर्षों में खत्म नहीं कर सकते। इसके लिये काफी समय की जरूरत है। जैसे २ हमारी योजनायें सफल होती जायेंगी यह असमानता भी अपने आप समाप्त होती जायेगी और फिर देश में अमीर और गरीब का कोई भेद न रहेगा।

प्रश्न १०—दूसरी पंचवर्षीय योजना कहाँ तक सफल हुई ? उस पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—दूसरी पंचवर्षीय योजना से हमको निम्न सफलतायें प्राप्त हुईं—

१. राष्ट्रीय आय में वृद्धि—राष्ट्रीय आय में योजना काल में करीब २० प्रतिशत वृद्धि होने की संभावना है जब कि योजना में २५ प्रतिशत आय में वृद्धि का लक्ष्य रखा गया।

२. रोजगार में वृद्धि—योजना काल में केवल ५५ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला है। योजना में ८० लाख व्यक्तियों को रोजगार देने का लक्ष्य था।

३. कृषि उत्पादन में वृद्धि—अनाज का लक्ष्य, जो दूसरी पंचवर्षीय योजना तैयार करते समय रखा गया था, प्राप्त हो गया लेकिन बाद में यह लक्ष्य ड्योढ़ा कर दिया था, वह प्राप्त न हो सका। तिलहन, गन्ना, गुड़, कपास व जूट के निर्धारित लक्ष्य प्राप्त हो गये।

४. सामुदायिक विकास—सामुदायिक विकास का कार्य ३१०० विकास खण्डों में फैल गया। २० करोड़ जनसंख्या ने उससे लाभ उठाया व ग्राम पंचायतों की संख्या ८३ हजार से बढ़कर १,७८,००० हो गई ऐसा अनुमान है।

५. सिंचाई—योजना के अन्त में (१९६०-६१) करीब ७ करोड़ एकड़ भूमि पर सिंचाई होने लगी।

६. बंजर भूमि—योजना के अन्त तक कुल ३९ लाख एकड़ नई भूमि को खेती योग्य बनाया जा सका है। बंजर भूमि को खेती योग्य बनाने का निर्धारित लक्ष्य पूरा नहीं हुआ।

७. औद्योगिक उत्पादन—शक्कर, कच्चा लोहा, सूती कपड़ा आदि उद्योगों का लक्ष्य करीब-करीब प्राप्त हो गया लेकिन इस्पात, एल्यूमिनियम, सीमेन्ट, कोयला एवं कागज के लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो सकी। फिर भी जो भी हमको आंशिक उपलब्धि हुई, वह कम सफलता न थी।

८. कुटीर उद्योग—कुटीर उद्योगों का भी तेजी से विस्तार हुआ। १९६०-६१ में २ अरब १२ करोड़ ५० लाख गज कपड़ा बनने का अनुमान व कि प्रथम योजना के आरम्भ में हाथ कर्घे ७४ करोड़ २० लाख गज

कपड़ा बनाते थे। इसी तरह १९५०-५१ में ७० लाख गज खादी बनती थी। वहां दूसरी योजना के अन्त तक ८ करोड़ गज बनने लगी है। कच्चे रेशम का उत्पादन भी २० लाख पौंड से बढ़कर ३७ लाख पौंड हो गया।

६. छोटे कारखाने—योजना में छोटे कारखानों का भी द्रुत गति से विकास हुआ। देश में ६० औद्योगिक बस्तियों का निर्माण हो चुका है। जिनमें ७०० के करीब छोटे कारखाने हैं। साइकिलों, मशीनों व औजारों का भी उत्पादन बढ़ा।

१०. बिजली—योजना के अन्त में १६,००० शहर, कस्बों व गाँवों में बिजली पहुँच जाने का अनुमान है जब कि १९५०-५१ में देश में केवल ३,६८७ शहर व गाँवों में बिजली थी। योजना के अन्त में ५८ लाख किलोवाट बिजली पैदा होने का अनुमान है।

दूसरी योजना में डाक, तार, टेलीफोन, शिक्षा व चिकित्सा के क्षेत्र में भी आशातीत उन्नति हुई। यातायात के साधनों का विस्तार हुआ।

उपर्युक्त सफलताओं को देखते हुये हम कह सकते हैं कि देश तेजी से आगे बढ़ा है। कुछ निर्धारित लक्ष्य हमको प्राप्त नहीं हुये हैं लेकिन फिर भी जो कुछ हमने उन्नति की वह इस निर्धन देश को देखते हुये कम नहीं है।

प्रश्न ११—तीसरी पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों की विवेचना कीजिये।

उत्तर—तीसरी पंचवर्षीय योजना देश में एक अप्रेल, १९६१ से क्रियान्वित की गई है। इस योजना में पिछली दो पंचवर्षीय योजनाओं की सम्मिलित धन राशि से भी अधिक धन राशि निर्धारित की गई। इस योजना पर करीब ११,८०० करोड़ रुपये खर्चा होना आँका गया है।

इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

१. राष्ट्रीय आय में वृद्धि-इस योजना की समाप्ति पर भारत की राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत वृद्धि तथा प्रति व्यक्ति की आमदनी में १७ प्रतिशत वृद्धि होनी चाहिये।

२. कृषि में आत्म-निर्भरता—योजना में कृषि के उत्पादन पर काफी बल दिया गया है ताकि हम अन्न के मामले में आत्म-निर्भर हो सकें तथा विदेशों से अन्न के आयात की स्थिति को खत्म किया जा सके। कच्चे

माल का इतना उत्पादन हो कि देश के उद्योगों को कच्चा माल मिल सके।

३. आधारभूत उद्योगों का विकास—आधारभूत उद्योगों का इस तरह से विकास हो कि काफी मात्रा में, भावी औद्योगीकरण के लिये साधन देश में ही प्राप्त हो सकें अर्थात् हमको विदेशों से आयात न करना पड़े।

४. रोजगार में वृद्धि—योजना में ज्यादा से ज्यादा लोगों को काम दिलाकर बेकारी को खत्म किया जायेगा। योजना काल से लगभग एक करोड़ ४० लाख व्यक्तियों को काम मिलेगा।

५. आर्थिक असमानता दूर हो—देश की आर्थिक स्थिति को ठीक करने तथा गरीबी को हटाने के लिये देश में पूंजी का उचित अनुपात में वितरण किया जाय अर्थात् धन और आमदनी की विषम असमानता को दूर किया जाय। देश में समाजवादी समाज की स्थापना कर गरीबी और अमीरी के भेद-भाव को दूर किया जाय। स्वास्थ्य, शिक्षा, चिकित्सा आदि का भी उचित मात्रा में विकास किया जाय ताकि आम जनता इनको प्राप्त कर सके।

प्रश्न १२—तीसरी पंचवर्षीय योजना में खेती के उत्पादन के लक्ष्यों के सम्बन्ध में लिखिये।

उत्तर—योजना की समाप्ति तक निर्धारित लक्ष्य पूरे हो जाने पर देश अनाज के सम्बन्व में आत्मनिर्भर हो जायगा। इसी तरह अगर कपास के उत्पादन का लक्ष्य पूरा हो गया तो देश के उद्योगों को कच्चा माल प्राप्त हो सकेगा तथा कुछ कपड़ा विदेशों को निर्यात के लिये भी बच जायगा। खाद्य पदार्थों के अलावा फल, सब्जी, दूध, मछली, मांस, अण्डे आदि के उत्पादन बढ़ाने की भी व्यवस्था की गई है।

खेती के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए निम्न उपाय किये जायेंगे—

सिंचाई—योजना में दो करोड़ एकड़ नई भूमि पर सिंचाई होने का अनुमान है। इसके अन्तर्गत बड़ी व मध्यम श्रेणी की सिंचाई-योजनायें तथा कुंए और छोटे तालाबों की सिंचाई के साधन आ जाते हैं। योजना काल में लगभग १ करोड़ ३० लाख एकड़ भूमि पर मेढ़बन्दी की जायगी। मिट्टी के कटाव को रोकने की भी व्यवस्था की गई है।

खाद—योजना में भूमि को अधिक खाद देने की व्यवस्था भी की गई है। योजना की समाप्ति पर गोबर, कूड़े इत्यादि की खाद के अतिरिक्त करीब १५ लाख टन रासायनिक खाद उत्पादित होने का अनुमान है इसके लिए नये कारखाने खोले जावेंगे।

फसलों की रक्षा—भारत में कीड़ों व फसलों के रोगों से काफी खेती नष्ट हो जाती है, अतः योजना में लगभग साढ़े सात करोड़ एकड़ भूमि पर फसलों की रक्षा की व्यवस्था की गई है।

अतः उपर्युक्त तरीकों से कृषि की उपज को बढ़ाने का प्रयत्न किया गया है।

प्रश्न १३—तीसरी पंचवर्षीय योजना में उद्योग-धंधों के विस्तार के लिए जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं उनका संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर—तीसरी पंचवर्षीय योजना में इस्पात, मशीन, बिजली व रासायनिक उद्योगों जैसे आधारभूत उद्योगों के विकास पर, जिन पर अन्य उद्योग-धन्धे भी निर्भर रहते हैं, बहुत अधिक ध्यान दिया गया है। इससे देश में इस क्षेत्र में आत्म-निर्भर बन सकेगा।

१. लोहे व इस्पात का उद्योग—तीसरी योजना के अन्त तक कच्चे लोहे का उत्पादन १०७ लाख टन से बढ़ाकर ३०० लाख टन करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इस्पात के पिण्डों का उत्पादन ३५ लाख टन से बढ़ाकर ९२ लाख टन निर्धारित किया गया है। राऊरकेला, भिलाई और दुर्गापुर में इस्पात के कारखानों का विस्तार किया जावेगा। 'बेकारो' में एक और इस्पात के कारखाने का निर्माण किया जायेगा। योजना में बड़े उद्योगों पर २५ अरब ७० करोड़ रुपये खर्च किये जायेंगे, जो कुल योजना व्यय का २५ प्रतिशत होगा।

२. मशीन तथा इन्जीनियरिंग उद्योग—औद्योगिक उन्नति में इस उद्योग का भी बहुत महत्व है अतः सरकार ने मशीन तथा इंजीनियरिंग उद्योग के विकास पर भी पर्याप्त मात्रा में बल दिया है। इस योजना में जो नये उद्योग स्थापित किये जायेंगे, उनमें से मुख्य निम्न प्रकार के हैं।

(१) भारी मशीन निर्माण करने का प्लान्ट।

(२) फाउण्ड्री बनाने का कारखाना।

(३) कोयले की खानें खोदने की मशीनों को बनाने का प्लाण्ट।

(४) भारी स्ट्रकचरल प्लाण्ट।

(५) हैवी प्लेट बनाने का कारखाना।

(६) भारी टूल बनाने का कारखाना।

(७) बङ्गलोर के हिन्दुस्तान टूल कारखाने की उत्पादन क्षमता को दुगुना करना।

(८) भारी बिजली का सामान बनाने के भूपाल के लिये कारखाने का विस्तार।

(९) दो नई भारी बिजली के समान बनाने के कारखाने जिनमें ऊँचे प्रेशर के बॉयलर और वैज्ञानिक यन्त्र बनेंगे।

मशीन उद्योगों का विकास होने से हमारा विदेशों से मशीन का आयात बहुत कम हो जायगा। इसके अलावा सीमेन्ट, कागज, शक्कर, जूट तथा सूती वस्त्र इत्यादि उद्योग-धन्धों में काम आने वाली मशीनों का निर्माण और विस्तार किया जायगा।

३. ग्रामीण तथा कुटीर उद्योग-धंधे—गाँवों की जनता को रोजगारी देने में ग्रामीण तथा कुटीर उद्योग धन्धों का प्रमुख स्थान रहा है अतः योजना में इन धंधों की तरफ भी समुचित ध्यान दिया गया है। इन उद्योगों द्वारा उत्पादन शक्ति का विकेन्द्रीकरण भी होता है, अर्थात् छोटे-छोटे उत्पादकों द्वारा माल का उत्पादन किया जाता है। अतः इन उद्योगों का विकास व निर्धारित लक्ष्य प्राप्त होने पर बढ़ती हुई बेरोजगारी को रोका जा सकेगा। प्रतिदिन काम में आने वाली चीजों की बढ़ती हुई माँग को पूरा किया जा सकेगा। सरल तथा सस्ते औजारों व यन्त्रों का निर्माण किया जायेगा।

इन उपर्युक्त लक्ष्यों के प्राप्त करने के लिए ग्रामीण तथा कुटीर उद्योगों की उत्पादन प्रणाली में समुचित सुधार किया जायगा। अच्छे औजार, कच्चे माल और पूंजी को प्राप्त करने व माल की बिक्री का भरसक प्रयत्न किया जायगा।

४. हाथ कर्घा उद्योग तथा खादी— दूसरी योजना के अन्त में

हाथ कर्घा, अम्बर चर्खा व साधारण चर्खे से आठ करोड़ गज खादी तैयार होने लगी थी। इसके अलावा कुछ शक्ति संचालित कर्घे भी चलते हैं, जिनके द्वारा ४० करोड़ कपड़ा तैयार होता है।

इस प्रकार हाथ कर्घे और शक्ति संचालित कर्घे और खादी से मिलकर २६१ करोड़ गज कपड़ा तैयार करते हैं। तीसरी योजना का लक्ष्य ३५० करोड़ रखा गया है, जिसमें २८० करोड़ गज हाथ कर्घे के लिये निर्धारित है।

रेशम, नारियल तथा जूट उद्योग का भी तीसरी पंचवर्षीय योजना में विकास होगा। इन उद्योगों के विकास के लिये हाथ कर्घा बोर्ड, नारियल जूट बोर्ड और हाथ दस्तकारी बोर्ड आदि का संगठन किया गया है। तीसरी योजना में ३०० नई औद्योगिक बस्तियों का निर्माण का भी लक्ष्य रखा गया है।

यदि हमें इस योजना में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति होगई तो निःसंदेह रूप से हम औद्योगिक क्षेत्र में पूर्ण रूप से आत्म-निर्भर हो जायेंगे।

अध्याय ८

सहकारिता

(कृषि सम्बन्धी सहकारी समितियाँ)

प्रश्न १—सहकारिता से आप क्या समझते हैं? समझाकर लिखिए।

उत्तर १—सहकारिता का अर्थ—जब किसी आर्थिक लक्ष्य की पूर्ति के लिए भ्रातृत्व के आधार पर संगठित होकर प्रयत्न करें तथा होड़ और शोषण का अन्त करदें, तो उसे सहकारिता कहते हैं। श्री कैलबर्ट ने सहकारिता की परिभाषा देते हुए लिखा है, "सहकारिता वह संगठन है जिनमें मनुष्य अपनी इच्छा से समानता के आधार पर अपने प्रत्येक सदस्य के आर्थिक विकास के लिए शामिल होते हैं।

२. सहकारिता के सिद्धांत—सहकारिता एक व्यापक सिद्धांत है, जिसमें निम्नलिखित तत्त्वों का समावेश किया गया है:—

(क) सब एक के लिये और एक सबके लिए है।

(ख) व्यक्ति को समाज के हित के लिये और समाज को व्यक्ति के हित के लिए भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

(ग) सहकारिता निर्बलों की शक्ति है। आज का युग होड़ का युग है जिसमें सफलता प्राप्त करने का एक मात्र उपाय सहकारिता ही है। बड़े से बड़ा कार्य सहकारिता द्वारा ही पूरा किया जा सकता है।

(घ) निर्बलों और निर्धनों की रक्षक सहकारिता है। सहयोग और सहानुभूति तथा सेवा की प्रधानता इसकी आधारशिलाएँ हैं।

(ङ) सहकारिता में आर्थिक असमानता का कोई स्थान नहीं है। इसमें प्रत्येक व्यक्ति की आर्थिक स्वतन्त्रता बनी रहती है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचाते हैं कि आर्थिक विषमता के युग में सहकारिता अत्यन्त आवश्यक है जिसके द्वारा ही आर्थिक समानता स्थापित की जा सकती है और प्रत्येक समस्या को सरलतापूर्वक हल किया जा सकता है।

प्रश्न २—सहकारिता की क्या विशेषताएँ हैं? उनकी विवेचना कीजिए।

उत्तर—सहकारिता इस युग का प्रमुख आन्दोलन है जिसका स्वरूप अत्यन्त व्यापक हो गया है। ऐसी स्थिति में सहकारिता की विशेषताओं की व्याख्या करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

१. सहकारिता की विशेषताएँ—सहकारिता की निम्नलिखित विशेषतायें हैं—

(क) स्वेच्छा से सम्मिलित—सहकारिता की प्रमुख विशेषता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वेच्छा से सम्मिलित होता है, उसे इसकी सदस्यता के लिये विवश नहीं किया जाता है।

(ख) पारस्परिक और निज की सहायता पर आधारित—सहकारिता आन्दोलन पारस्परिक सहयोग के द्वारा निज की सहायता पर आधारित होता है। इसमें प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के लिए साधन एकत्रित करता है।

(ग) सहयोग की प्रधानता—सहकारिता में होड़ और संघर्ष की प्रधानता नहीं होती है, अपितु प्रत्येक कार्य सहकारिता की भावना से किया जाता है जिससे सामाजिक एकता की वृद्धि होती है।

(घ) जनतन्त्र के सिद्धांत पर आधारित—सहकारिता की आधारशिला जनतांत्रिक है। इसमें प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के समान सुविधायें प्राप्त होती हैं। सहकारी संघ में किसी व्यक्ति के पास कितने भी हिस्से क्यों न हों, प्रत्येक का एक ही मत होता है।

(ङ) चरित्र पर विशेष बल—सहकारिता में नैतिक भावना की प्रधानता होती है। इसमें चरित्र के विकास पर विशेष रूप से बल दिया जाता है।

(च) आर्थिक समानता का पक्षपाती—सहकारिता में पूँजीवाद व्यवस्था के कोई दोष नहीं होते हैं, अपितु आर्थिक समानता की प्रधानता होती है। इसमें प्रत्येक व्यक्ति का समान भाग होता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सहकारिता विशेषताओं से परिपूर्ण है. जिसका निरन्तर विकास किया जाना चाहिये। भारत जैसे देश के लिये सहकारिता अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

प्रश्न ३—ग्रामीण साख सहकारी समितियों की व्यवस्था और कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर—१. समिति के उद्देश्य—ग्रामीण सहकारी समितियों का एक मात्र लक्ष्य कृषि तथा अन्य छोटे उद्योगों के विकास के लिए ऋण देना है। समिति के द्वारा सदस्यों की बचत का रुपया जमा किया जाता है। इस पर उन्हें कुछ व्याज भी दिया जाता है। यह धन राशि हल, बीज, खाद और कृषि सम्बन्धी कार्यों के लिए ऋण के रूप में सदस्यों को दी जाती है।

२. समिति की सदस्यता—प्रत्येक समिति को रजिस्टर्ड करने के लिए कम से कम दस सदस्यों का होना आवश्यक है। प्रत्येक ग्रामवासी उसका सदस्य हो सकता है। कहीं उसे समिति का हिस्सा खरीदे बिना ही सदस्य बना लिया जाता है। साधारणतया दस रुपया का एक हिस्सा खरीदना पड़ता है जिसे वह किश्तों में चुकाता है।

३. **समिति की व्यवस्था**—समिति की व्यवस्था साधारण सभा के द्वारा की जाती है। इस सभा में समिति का प्रत्येक सदस्य होता है। प्रत्येक सदस्य चाहे वह कितना ही भाग क्यों न खरीदे, उसका एक ही मत माना जाता है। साधारण सभा में से एक प्रबन्ध समिति चुनी जाती है। साधारण सभा के द्वारा सभी महत्वपूर्ण प्रश्न जैसे सदस्यों की जमा रकम पर कितना व्याज दिया जाय, सदस्यों से कितना व्याज लिया जाये, सदस्यों को कितना ऋण दिया जाय और सहकारी बैङ्क से कितना कर्ज लेना चाहिये आदि हल किये जाते हैं।

४. **समिति की पूँजी**—कृषि समिति के पास पूँजी एकत्रित करने के लिये निम्नलिखित साधन हैं—

(क) प्रवेश शुल्क (ख) सदस्यों द्वारा खरीदे हुये हिस्से (ग) सहकारी अथवा सेन्ट्रल सहकारी बैंक से लिया हुआ कर्ज (घ) रक्षित कोष प्रवेश शुल्क। इसका शुल्क केवल एक रुपया होता है और प्रत्येक हिस्सा दस रुपये का होता है, जो दस वर्षों की किश्त में चुकाना पड़ता है। साख समिति को पूँजी के लिये सहकारी या सैन्ट्रल बैंक पर निर्भर रहना पड़ता है।

५. **साख समितियों की विशेषताएँ**—साख समितियों की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(क) **कम मूल्य के हिस्से**—ग्रामीण साख समितियों के हिस्से इतने कम मूल्य के होते हैं कि गरीब से गरीब ग्रामीण भी उसकी सदस्यता ग्रहणकर लाभ उठा सकता है।

(ख) **असीमित उत्तरदायित्व**—साख समितियों का उत्तरदायित्व असीमित होता है। प्रत्येक सदस्य समिति के सम्पूर्ण ऋण का देनदार होता है। आजकल कुछ सीमित दायित्व समितियों का निर्माण भी किया गया है।

(ग) **लाभ का विभाजन नहीं**—साधारण समिति में लाभ विभाजन नहीं किया जाता है। जब रक्षित कोष में निश्चित धन राशि से अधिक पूँजी एकत्रित हो जाती है उसका तीन चौथाई भाग सरकार की आज्ञा से सदस्यों को बाँट दिया जाता है, फिर भी २५ प्रतिशत लाभ कोष में जमा करना पड़ता है

(घ) अवैतनिक कार्यकर्त्ताओं का होना—समिति के किसी भी कार्यकर्त्ता को कोई वेतन नहीं दिया जाता है। यदि समिति के सभी सदस्य अनपढ़ होते हैं तो एक वैतनिक मन्त्री को रख लिया जाता है, जो न तो समिति का सदस्य होता है और न उसे मत देने का अधिकार होता है।

(ङ) समिति टूटने पर कोष का विभाजन नहीं—यदि साख समिति किसी कारणवश टूट जाय, तो उसका कोष सदस्यों में न बांटा जाकर गांव के विकास कार्यों में लगाया जायेगा।

६. समिति के ऋण कार्य—समिति के द्वारा केवल सदस्यों को ही ऋण दिया जाता है। प्रत्येक सदस्य को ऋण लेने के लिये प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करना पड़ता है। उद्देश्य और चुकाने की क्षमता को दृष्टिगत रखते हुए ऋण दिया जाता है। समिति के द्वारा निम्नलिखित कार्यों के लिये ही ऋण दिया जाता है:—

(क) कृषि कार्य अथवा लगान चुकाने के लिये। (ख) भूमि-सुधार और कुआ आदि बनाने के लिये। (ग) पुराना ऋण चुकाने के लिये (घ) गृहस्थ कार्य संचालन करने के लिये (ङ) व्यापार अथवा भूमि खरीदने के लिये।

ऋण किश्तों में चुकाया जाता है और फसल आदि नष्ट हो जाने पर किश्तों की मयाद बढ़ा दी जाती है।

७. आय-व्यय निरीक्षण—सहकारी विभाग के रजिस्ट्रार व विभाग के आडिटर हिसाब किताब की जांच करते हैं। हिसाब किताब के अतिरिक्त सहकारी विभाग के कर्मचारी समितियों की देखभाल करते हैं।

८. समितियों को अन्य सुविधाएँ—

(क) यदि समिति के द्वारा किसी सदस्य को बीज, बैल और यन्त्र आदि खरीदने के लिये ऋण दिया गया है, तो कोई भी दूसरा व्यक्ति अपना ऋण वसूल करने के लिए उसकी फसल को कुर्क नहीं कर सकता है। समिति को ऋण वसूल करने का पूर्ण अधिकार होगा।

(ख) समिति के किसी भी सदस्य के लाभ पर आय कर नहीं लिया जाता है।

(ग) पोस्ट ऑफिस भी कम फीस लेकर मनीआर्डर समितियों को भेजता है।

(घ) समिति के सदस्य का किसी भी अन्य लेनदार के द्वारा कुर्क नहीं कराया जा सकता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साख समितियों की व्यवस्था अत्यन्त सुचारु ढङ्ग से की जाती है और सब प्रकार की सुविधाएँ भी सरकार के द्वारा प्रदान की गई हैं। अब समितियों के विकास के द्वारा ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को सुधारा जा सकता है।

प्रश्न ४—क्या कृषि साख सहकारी समितियाँ सफल हुई हैं ?

उत्तर—साख सहकारी समितियाँ हमारे देश में बनाई गईं और इसके साथ ही उन्हें सुविधाएँ भी प्रदान की गईं, परन्तु इतना होते हुए कृषि साख सहकारी समितियाँ सफल नहीं हो सकीं, इसके निम्नलिखित कारण थे—

१. निर्बल आर्थिक स्थिति—इन समितियों की आर्थिक स्थिति निर्बल थी जिससे उन्हें सहकारी बैंक पर ही निर्भर रहना पड़ता था। इसके अतिरिक्त सदस्यों की जमा धन राशि भी बहुत कम होती थी।

२. कर्जदार की शोचनीय आर्थिक स्थति—समिति के द्वारा कृषि विकास के लिए ऋण दिया जाता है और यदि फसल नष्ट हो जाये तो चुकाना सदस्य के लिए असम्भव हो जाता है। ऐसी स्थिति में मयाद बढ़ानी पड़ती है। पूँजी रुक जाने से अन्य कार्य रुक जाते हैं।

३. असीमित उत्तरदायित्व—साख समितियों का उत्तरदायित्व असीमित होता है। प्रत्येक सदस्य साख समिति के ऋण का देनदार होता है। इस कारण अधिकतर व्यक्ति सदस्य बनने में हिचकते हैं।

४. सीमित क्षेत्र—ग्राम साख समिति का क्षेत्र संकुचित होता है। एक ग्राम के थोड़े व्यक्ति ही इसके सदस्य होते हैं। पूँजी की कमी के कारण आर्थिक स्थिति निर्बल होती है।

५. सदस्यों का अशिक्षित होना—ग्रामीण ही इसके सदस्य होते हैं जो प्राय: अशिक्षित होते हैं और इससे होने वाले लाभ के महत्व को नहीं समझ पाते हैं। आपसी झगड़े भी इसकी सफलता का कारण है।

६. साहूकारों का विरोध—गांव के साहूकार भी किसानों को समिति के विरुद्ध भड़काते थे, क्योंकि समितियों के विकास से उनके आर्थिक हितों की हानि होती थी।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साख समितियों के मार्ग में अनेक बाधाएँ हैं, जिन्हें दूर किये बिना किसी भी रूप में इनसे कोई लाभ नहीं हो सकता है। यही कारण है कि कृषि साख समितियाँ असफल रही हैं।

प्रश्न ५—ग्राम साख सर्वेक्षण कमेटी के कृषि सहकारी समितियों के सम्बन्ध में क्या सुझाव थे? उनकी व्याख्या कीजिये।

उत्तर—कृषि साख समितियों की असफलता को दृष्टिगत रखते हुए ग्राम साख सर्वेक्षण कमेटी ने समितियों के पुनःगठन के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये, जिन्हें ग्रहण करके निम्नलिखित परिवर्तनों के द्वारा समितियों को सफल बनाया जा सकता है—

१. साख समिति का क्षेत्र—कमेटी का कहना था कि समिति का कार्य क्षेत्र केवल एक ग्राम का होना ही इसकी सफलता के मार्ग में बाधक सिद्ध हुआ है। ऐसी स्थिति में समिति का क्षेत्र बढ़ाना अत्यन्त आवश्यक है। साख समिति के कम से कम सदस्य ५०० और उसकी हिस्सा पूँजी १५,००० रुपये तथा उसका कारोबार डेढ़ लाख रुपया वार्षिक होना चाहिए।

२. परिमित उत्तरदायित्व—विशाल साख समिति का उत्तरदायित्व परिमित होगा। इसके अतिरिक्त समिति को ऋण देने के साथ २ दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएँ नमक, शक्कर, मिट्टी का तेल, खेती के औजार आदि बेचने का कार्य करना चाहिए।

३. फसल बेचने के आश्वासन पर ऋण—साख समिति के द्वारा केवल उन्हीं सदस्यों को ऋण दिया जाना चाहिए जो कि अपनी फसल सहकारी विक्रय समिति के द्वारा बेचने का आश्वासन दें।

४. उत्पादन के लिए ऋण—सर्वेक्षण कमेटी ने यह सुझाव दिया कि ऋण सदस्य की हैसियत पर नहीं, अपितु कृषि विकास के लिये जितनी धन राशि की आवश्यकता हो दी जानी चाहिये।

५. कुशल कर्मचारी की नियुक्ति—कृषि साख समिति के कार्य

को सुचारुरूप से चलाने के लिये सहकारिता के क्षेत्र में प्रशिक्षित पूरे समय का वैज्ञानिक सैक्रेटरी रखा जाना चाहिए।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्राम साख सर्वेक्षण कमेटी के उपर्युक्त सुझाओं को मानकर कृषि साख समितियों की उपयोगिता को बढ़ाया जा सकता है। इस कमेटी की सिफारिश को मानकर ही बड़ी साख समितियों का संगठन किया गया, परन्तु कुछ समय पश्चात् मत बदल गया और माना जाने लगा कि साख समितियाँ अधिक बड़ी नहीं होनी चाहियें।

प्रश्न ६—सहकारी विक्रय समितियों के द्वारा खेती की पैदावार को बेचने की व्यवस्था से किसान को क्या लाभ है?

उत्तर—भारतीय कृषक इतना निर्धन है कि उसे पूर्ण रूप से गाँव के साहूकार पर ही निर्भर रहना पड़ता है। वह ऋणग्रस्त होता है और उसे कर्ज चुकाने के लिए और लगान आदि चुकाने के लिए अपनी फसल काटते ही गाँव के साहूकार को बेचनी पड़ती है। उसे अपने उत्पादन का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। उसकी इन समस्याओं को हल करने के लिये सहकारी विक्रय समितियों का संगठन ही एक मात्र उपाय है जिसके द्वारा कृषक अपनी फसल को सरलतापूर्वक मण्डी में बेच सकता है।

कृषकों को सहकारी विक्रय समितियों से लाभ—कृषकों को सहकारी विक्रय समिति के द्वारा निम्नलिखित लाभ हैं—

(क) सहकारी विक्रय समिति के द्वारा कृषक को अपनी उपज का उचित लाभ मिल जाता है। पैदावार समिति को देते ही आधा मूल्य पेशगी मिल जाता है। इस धन राशि से वह लगान और आबपाशी चुका ता है।

(ख) सहकारी समिति के पास अच्छे गोदाम होते हैं, जहाँ उसके अनाज को सुरक्षित रखा जा सकता है और भाव बढ़ने पर उचित मूल्य पर बेच दिया जाता है।

(ग) किसान के बहुत से अनाआवश्यक खर्चे जैसे धर्मादा, तुलाई, दलाली और फसल ले जाने का खर्च आदि बच जाता है। ये सब कार्य समिति के द्वारा कर लिये जाते हैं।

(घ) समिति को वर्ष भर में जो लाभ होता है उसका २५ प्रतिशत रक्षित कोष में जमा कर शेष सदस्यों में उनके पैदावार के अनुपात में बांट देती है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सहकारी विक्रय समितियों के द्वारा ही कृषकों की स्थिति को सुधारा जा सकता है और उन्हें अपने परिश्रम का उचित मूल्य मिल सकता है। उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने का एक मात्र उपाय भी यही है।

प्रश्न ७—सहकारी विक्रय समितियों को सफलतापूर्वक चलाने में कौनसी कठिनाइयां उपस्थित होती हैं? उनकी विवेचना कीजिये।

उत्तर—सहकारी विक्रय समितियों का ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था में विशेष महत्व है। ये समितियां सफलतापूर्वक कार्य करने में असमर्थ रही हैं। इनके सफलतापूर्वक संचालन के मार्ग में निम्नलिखित बाधायें हैं जिन्हें दूर किये बिना किसी भी रूप में इन समितियों की उपयोगिता नहीं बढ़ सकती है।

१. अधिक धन राशि की आवश्यकता—समितियों के पास अभी पूंजी बहुत थोड़ी है। उन्हें सफलतापूर्वक अपने कार्य को संचालित करने के लिये अधिक धन राशि की आवश्यकता है। इसका एक मात्र कारण यह है कि सहकारी समितियों को पैदावार जमा कराने वाले कृषक को आधी रकम पेशगी देनी पड़ती है।

२. अच्छे गोदामों की आवश्यकता—कृषकों द्वारा जमा कराई हुई पैदावार को सुरक्षित रखने के लिए अच्छे गोदामों की सबसे बड़ी आवश्यकता है। अच्छे गोदामों के अभाव में अनाज को किसी भी रूप में सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है।

३. व्यापारियों की प्रतियोगिता—सहकारी विक्रय समितियों को अपने अस्तित्व के लिए व्यापारियों से संघर्ष करना पड़ता है। समितियां छोटी होने के कारण व्यापारियों की प्रतियोगिता में नहीं टिक पाती हैं। इस कठिनाई को हल करने के लिये थोक सहकारी समिति का निर्माण करके ही व्यापारियों के मुकाबले में ठहरा जा सकता है। खेती की पैदावार के लिये सहकारी विक्रय को प्रोत्साहन देने के लिए राष्ट्रीय

भण्डार बोर्ड भी स्थापित किये गये हैं।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सहकारी विक्रय समितियों को सफलतापूर्वक संचालित करने के मार्ग में अनेक बाधाएँ हैं, जिन्हें दूर करके ही इन विक्रय समितियों की उपयोगिता को बढ़ाया जा सकता है।

प्रश्न ८—सहकारी खेती के सम्बन्ध में एक छोटा सा लेख लिखिये।

उत्तर—सहकारी कृषि पर इस युग में विशेष रूप से महत्व दिया जा रहा है। ऐसी स्थिति में सहकारी कृषि की व्याख्या करना आवश्यक हो जाता है। इसकी व्याख्या निम्नलिखित आधारों पर की जा सकती है :—

१. कृषकों की शोचनीय स्थिति—भारतीय कृषक की स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। उसके पास इतनी कम भूमि है कि वह दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ रहता है। उसके पास लाभकारी जोत नहीं है। उसकी भूमि एक चक्र में न होकर अलग-अलग टुकड़ों में बँटी हुई है। यही कारण है कि भारतीय कृषक अधिक परिश्रम करने पर भी पूरा लाभ नहीं उठा पाता है। विभाजित खेतों पर वैज्ञानिक ढंग से कृषि नहीं की जा सकती है।

२. सहकारी कृषि को प्रोत्साहन—कृषि सम्बन्धी सभी दोषों को दूर करने का एक मात्र उपाय सहकारी कृषि को प्रोत्साहन देना है। इसके द्वारा ही कम परिश्रम से कृषि के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। यही कारण है कि राष्ट्रीय कौंसिल ने सहकारी कृषि की आवश्यकता को बतलाया है।

३. सहकारी कृषि की आलोचना—सहकारी कृषि भारत में एक विवादग्रस्त विषय बना हुआ है। कुछ व्यक्तियों का कथन है कि भारत में सहकारी कृषि किसी भी रूप में सफल नहीं हो सकती है। भारतीय कृषक में स्वामित्व की भावना है, इस कारण वह अपनी पैतृक भूमि को किसी भी रूप में छोड़ने को तैयार नहीं है। कृषि तो व्यक्तिगत रूप में की जानी चाहिए परन्तु सहकारी समितियों के द्वारा बीज, खाद, औजार की सहायता विकास कार्य के लिए दी जानी चाहिए। योजना

आयोग का यह मत है कि सहकारी कृषि के बिना भी उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

४. सहकारी कृषि का रूप—भारत में सहकारी कृषि का रूप अन्य देशों से पूर्ण रूप में भिन्न है। यहाँ भूमि पर तो मालिक का ही अधिकार होगा, परन्तु कृषि कार्य के लिए भूमि सम्मिलित कर दी जायेगी। प्रत्येक भूमि के मालिक को प्रति बीघा या प्रति एकड़ के हिसाब से लगान देना पड़ेगा। लगान का निर्णय सरकार के द्वारा किया जायेगा। योजना आयोग ने इस व्यवस्था को 'सहकारी ग्राम प्रबन्ध' का नाम दिया है। पंचायत के द्वारा ही सहकारी कृषि की व्यवस्था की जायेगी। भूमि पर काम करने वाले को मजदूरी और स्वामित्व लाभ भी भूस्वामी को दिया जायेगा। यह प्रबन्ध केवल उसी ग्राम में लागू किया जावेगा जहाँ गाँव में कम से कम दो तिहाई भूस्वामी, जिनके पास गाँव की कम से कम तीन चौथाई भूमि हो, अपनी भूमि को सहकारी कृषि में देने के लिए प्रस्तुत होंगे। योजना आयोग ने यह सुझाव भी दिया है कि जब तक ग्रामवासियों के द्वारा सहकारी ग्राम प्रबन्ध को स्वीकृत न किया जाये, उस समय तक स्वेच्छाचारी सहकारी समितियों को स्थापना की जानी चाहिए। अनुपात से धन राशि लगाकर सामूहिक रूप से कृषि की जाये और उपज को भूमि के अनुपात से विभाजित कर दिया जाये।

५. भारत में सहकारी कृषि के मार्ग में बाधाएँ—भारत में सहकारी कृषि को विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है। भूमिहीन कृषकों को इस व्यवस्था के अन्तर्गत जहाँ बंजर और बेकार भूमि को कृषि योग्य बना कर दिया गया है। वे भी निजी कृषि के भूमि की माँग करने लगे हैं। सहकारी कृषि के विकास के मार्ग में निम्नलिखित बाधाएँ हैं:—

(क) भारतीय कृषक को भूमि से अधिक प्रेम—भारतीय कृषक भूमि को बपौती मानता है और उसे एक पवित्र धरोहर समझता है, जिसे छोड़ना वह नैतिक दृष्टिकोण से पाप समझता है। उसे अपनी भूमि से बहुत अधिक प्यार है, जिसे वह किसी भी रूप में छोड़ना नहीं चाहता है।

(ख) बेकारी की वृद्धि—यदि भारत में सहकारी कृषि का विकास हुआ तो उत्पादन की वृद्धि के लिए ट्रैक्टर आदि का उपयोग किया जायेगा,

जिससे जनशक्ति का कोई विशेष महत्व नहीं रहेगा। अधिकांश कृषक बेकार हो जावेंगे, जिससे ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था अधिक शोचनीय हो जावेगी। ऐसी स्थिति में सहकारी कृषि हानिप्रद सिद्ध होगी।

(ग) भारतीय कृषक का व्यक्तिवादी स्वभाव—भारतीय कृषक स्वभाव से व्यक्तिवादी है। वह अपनी भूमि को सहकारी कृषि के लिए किसी भी रूप में मिलाने के पक्ष में नहीं है। इस प्रकार की कृषि में उसे निजत्व की कमी महसूस होती है।

(घ) कृषक की गौरवपूर्ण स्थिति में कमी—भारतीय कृषक कृषि कार्य को गौरवपूर्ण व्यवसाय समझते हैं। इसमें वे कम लाभ पाकर भी संतुष्ट रहते हैं। वे मजदूर बनना लज्जाजनक कार्य समझते हैं। सहकारी कृषि व्यवस्था में उन्हें मजदूर के रूप में दूसरे के आदेशों पर कार्य करना पड़ता है। जिसे वह किसी भी रूप में पसन्द नहीं करता है। यही कारण है कि भारतीय कृषक सहकारी कृषि के प्रति आकृष्ट नहीं है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत में सहकारी कृषि को कोई विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है, परन्तु इतना होते हुए भी भारत सरकार इसकी सफलता के लिए प्रयत्नशील है। प्रारम्भ में सहकारी समितियों को कृषकों को कृषि सम्बन्धी कार्यों के लिए बीज, खाद, यन्त्र आदि देने चाहिए। जब उन्हें सहकारिता के लाभ से परिचय प्राप्त हो जावेगा, तो वह सहकारी कृषि के प्रति स्वतः आकृष्ट हो जावेगा।

प्रश्न ६—सहकारी खेती के लिए भारत में क्या कठिनाइयाँ हैं?

उत्तर—(इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नं० ८ का अन्तिम भाग देखिये।)

प्रश्न १२—कुटीर उद्योगों की दशा को सुधारने में औद्योगिक सहकारी समितियाँ कहाँ तक उपयोगी हो सकती हैं? विस्तारपूर्वक लिखिए।

उत्तर—भारत एक कृषि प्रधान देश है, परन्तु इसके पश्चात् दूसरा प्रमुख व्यवसाय हमारे देश में कुटीर उद्योग है। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व हमारे [illegible] उद्योग उन्नति की चरम सीमा पर थे, परन्तु धीरे-धीरे कृषकों

की भाँति ही मजदूरों की स्थिति भी बिगड़ती गई। भारतीय मजदूर भी निर्धन हैं। उनके पास पूँजी का अभाव है। उन्हें कच्चा माल प्राप्त करने में भी विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उनके साधन आज भी वे ही प्राचीन हैं जिनसे उत्पादन कम मात्रा में होता है। इसके अतिरिक्त तैयार माल को बेचना भी एक प्रमुख समस्या है। कुटीर उद्योग की बनी हुई वस्तुओं को कारखाने के बने हुये माल से संघर्ष करना पड़ता है। यही कारण है कि कुटीर उद्योग का पूर्णरूप से विकास नहीं हो सका है। कुटीर उद्योग के मार्ग में आई हुई सभी बाधाओं को दूर करने का एक मात्र उपाय औद्योगिक सहकारी समितियों का निर्माण करना है।

१. विभिन्न कारीगरों का संगठन—कुटीर उद्योग सम्बन्धी दोषों को दूर करने के लिए प्रत्येक उद्योग के लिए अलग-अलग सहकारी समितियों का निर्माण करना चाहिये। उदाहरण के लिए हाथकर्घा उद्योग के लिए बुनकर सहकारी समिति, लोहार का काम करने वालों के लिए लोह सहकारी समिति का निर्माण किया जाना चाहिये।

२. कच्चा माल प्राप्त करने की सुविधाएँ—प्रत्येक उद्योग का सदस्य अपनी-अपनी समितियों से सरलतापूर्वक कच्चा माल प्राप्त कर सकता है और माल तैयार करके समिति को बेच सकता है।

३. बिक्री की सुविधा—कुटीर उद्योग के बने हुए माल को समिति देश विदेश में भेजने का प्रयत्न करती है। इससे जितना भी लाभ होता है, उसे अन्त में समिति के सदस्यों में बांट दिया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक कारीगर को अपने परिश्रम का उचित मूल्य प्राप्त हो जाता है।

४. धन का वितरण—औद्योगिक सहकारी समितियों के द्वारा सैन्ट्रल सहकारी बैंकों से तथा सरकार से ऋण लेने की व्यवस्था की जाती है जिसे समिति के सदस्यों को औद्योगिक विकास के लिए ऋण के रूप में दिया जाता है। हिस्सों को भी बेचा जाता है तथा सुरक्षित धन राशि भी रखी जाती है। समिति विभिन्न साधनों से पूँजी एकत्रित करके उसका वितरण कर देती है।

५. प्रशिक्षण की व्यवस्था—औद्योगिक सहकारी समिति के द्वारा

सदस्यों को कच्चा माल देने और बेचने की व्यवस्था भी की ही जाती है, परन्तु इसके साथ ही कारीगरों को नवीनतम ढंग से नई प्रकार की वस्तुएँ बनाने का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था भी की जाती है। प्रशिक्षण प्राप्त करने से उनकी योग्यता और भी बढ़ जाती है।

६. औद्योगिक सहकारी संघ का निर्माण—कुटीर उद्योग सम्बन्धी विभिन्न सहकारी समितियाँ, उस उद्योग की एक सहकारी संघ का निर्माण कर लेती हैं। यह संघ तैयार माल को बेचने के लिए भण्डार खोलने, प्रदर्शनी आयोजित करने और विज्ञापन आदि का कार्य करता है। नवीनतम डिजाइन निकालने के लिए संघ के द्वारा उच्च वेतन पर डिजाइन मेकर रखने की व्यवस्था की जाती है। उन्हें कारीगरी को सिखाया जाता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सहकारी समितियों का संगठन कुटीर व्यवसाय की उन्नति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। यूरोपीय देशों में भी उद्योगों के विकास के क्षेत्र में ये समितियाँ लाभप्रद सिद्ध हुई हैं। भारत सरकार ने भी पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत खादी ग्रामोद्योग आयोग, नारियल जटा उद्योग बोर्ड, रेशम उद्योग बोर्ड और लघु उद्योग बोर्ड स्थापित किये हैं। आशा की जाती है कि इन समितियों के सहयोग से कुटीर उद्योगों का विकास सम्भव हो सकेगा।

प्रश्न ११—सहकारी उपभोक्ता स्टोर के संगठन और उसकी कार्य-प्रणाली पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—सहकारी उपभोक्ता स्टोर जो कि आजकल अधिक संख्या में खुलते जा रहे हैं, ऐसी स्थिति में उनके संगठन और कार्य-प्रणाली पर प्रकाश डालना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। इसकी व्याख्या निम्नलिखित आधारों पर की जा सकती है—

१. उपभोक्ता स्टोर का संगठन—सहकारी उपभोक्ता स्टोर के द्वारा उत्पादकों से माल खरीद कर सस्ते मूल्य पर खरीददारों को बेचने की व्यवस्था की जाती है। दलाली कार्य से भी मुक्ति दिलवाता है। इसके द्वारा अच्छी किस्म की वस्तुएँ प्राप्त करने की चेष्टा की जाती है।

सहकारी स्टोर के व्यापारियों को हटाकर उपभोक्ताओं को

अच्छी वस्तुएँ उचित मूल्य पर देने की व्यवस्था की जाती है। प्रत्येक सदस्य को कम से कम एक हिस्सा खरीदना पड़ता है। स्टोर का उत्तर-दायित्व सीमित होता है। प्रत्येक सदस्य कितने ही हिस्से खरीद सकता है परन्तु उसका मत एक ही होता है। प्रत्येक सदस्य साधारण सभा का सदस्य होता है। साधारण सभा के द्वारा संचालक मण्डल को चुना जाता है, जो स्टोर की व्यवस्था करता है।

२. **उपभोक्ता स्टोर की कार्य-प्रणाली**—उपभोक्ता स्टोर के प्रत्येक सदस्य के लिए यह आवश्यक होता है कि उसी स्थान से अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ खरीदे। वस्तुएँ नकद मूल्य पर दी जाती हैं तथा उधार की कोई व्यवस्था नहीं होती है। वस्तुएँ बाजार मूल्य से सस्ती और पूरी तोल पर वेची जाती हैं। वर्ष के अन्त में जो लाभ होता है, उसका २५ प्रतिशत भाग रक्षित कोष में जमा करा दिया जाता है। शेष सदस्यों को उसी अनुपात से बाँट दिया जाता है, जिस अनुपात से उन्होंने स्टोर से वस्तुएँ खरीदी हैं। अधिक पूँजी की आवश्यकता पड़ने पर स्टोर डिपोजिट लेता है और उस पर व्याज देता है अथवा सहकारी सैन्ट्रल बैंक से ऋण लेता है।

उपभोक्ता विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सहकारी उपभोक्ता स्टोर की व्यवस्था अत्यन्त सुन्दर है यदि इसे सफलतापूर्वक संचालित किया जा सके।

प्रश्न १२—भारत में उपभोक्ता स्टोर आंदोलन अधिक सफल क्यों नहीं हुआ? कारण सहित लिखिए।

उत्तर—हमारे देश में उपभोक्ता स्टोरों का प्रारम्भ प्रथम महायुद्ध के समय में हुआ, परन्तु द्वितीय महायुद्ध के काल में खाद्य पदार्थों पर नियन्त्रण रखने के लिए उपभोक्ता स्टोरों की वृद्धि हुई। युद्ध काल के पश्चात् जैसे-जैसे वस्तुओं पर से नियन्त्रण हटाया गया, उपभोक्ता भण्डारों की संख्या कम होती गई। अधिकांश स्टोर तो बन्द हो गये। इसकी असफलता के निम्नलिखित कारण हैं:—

१. **बाजार भाव से अधिक मूल्य पर वस्तुएँ प्राप्त होना**—उपभोक्ता केवल उस स्थिति तक ही स्टोर से वस्तुएँ खरीदता है, जब तक कि उसे बाजार भाव के सस्ती मिलती हैं। जैसे-जैसे बाजार का भाव

घटने लगता है तो वह स्टोर की वस्तुओं को मँहगी समझकर खरीदना छोड़ देता है। ऐसी स्थिति में स्टोर बन्द हो जाते हैं। वास्तविक सिद्धांत तो यह है कि वस्तुओं को बाजार मूल्य पर बेचा जावे किन्तु चीजें अच्छी और तौल में पूरी हों। इस सिद्धांत को उपभोक्ता भुला देते हैं।

२. उधार वस्तुएँ बेचना—जब स्टोर उपभोक्ताओं को उधार वस्तुएँ देता है, तो उसे थोक व्यापारियों से माल उधार लेना पड़ता है। ठीक समय पर पैसा नहीं पहुँचने पर स्टोर में माल का अभाव हो जाता है।

३. स्टोरों की असंगठित व्यवस्था और अधिक व्यय—स्टोरों में धन राशि तो अधिक व्यय होती है, परन्तु व्यवस्था ठीक नहीं हो पाती है। ऐसी स्थिति में स्टोरों को व्यापारियों और दुकानदारों के सामने टिकने में विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

४. थोक माल का अभाव—स्टोर को माल देने के लिये होलसेल सोसाइटी का अभाव है। इस कारण उन्हें थोक माल ऊँचे मूल्य पर बाजार के व्यापारियों से खरीदना पड़ता है। इस कारण उन्हें कोई लाभ नहीं हो पाता है।

५. दुकानदारों द्वारा अधिक सुविधाएँ प्रदान करना—भारत का व्यापारी कम लाभ पर व्यापार करता है। वह घर पर माल पहुँचाता है और दाम माह के अन्त में लेता है। जब उपभोक्ता को ये सुविधाएँ घर बैठे ही प्राप्त हो जाती हैं, तो स्टोर में जाना पसन्द नहीं करता है। वहाँ उसका अधिक समय लगता है। नकद दाम देने पड़ते हैं और स्वयं सामान उठाकर ले जाना पड़ता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत में उपभोक्ता भण्डार अनेक बाधाओं के कारण असफल रहे हैं। इन दोषों को दूर करके ही इनकी उपयोगिता को बढ़ाया जा सकता है।

प्रश्न १३—सहकारिता आन्दोलन की कमजोरियाँ और उसके होने वाले लाभों की विवेचना करो।

उत्तर—सहकारिता आन्दोलन हमारे देश में सन् १९४० में प्रारम्भ हुआ, परन्तु परिणाम आशा के विपरीत रहे। इस आन्दोलन को न कोई अधिक सफलता प्राप्त हुई और न ग्रामों की स्थिति में किसी

प्रकार का परिवर्तन हुआ ।

१. सहकारिता आन्दोलन की कमजोरियाँ—सहकारिता आन्दोलन में निम्नलिखित कमियाँ थीं, जिससे यह आन्दोलन सफलता प्राप्त नहीं कर सका ।

(क) कृषक का ऋण भार से दबा रहना—भारतीय कृषक ऋण भार से इतना दबा हुआ है कि वह मुक्त हुए बिना स्वतन्त्र रूप से किसी भी कार्य के प्रति कोई रुचि नहीं रख सकता है ।

(ख) ग्रामीणों में शिक्षा की कमी—सहकारी समिति के नियम और उनकी योजना को भली भाँति समझने के लिए सदस्यों का शिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है । ग्रामीण अधिकतर अशिक्षित हैं इस कारण उन्हें कोई लाभ नहीं हो पाता और वैतनिक पूँजी सब कुछ बन जाता है ।

(ग) सहकारिता से अनभिज्ञ—सहकारी समिति सदस्य और पंच सहकारिता प्रणाली और उनसे होने वाले लाभों से सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों रूपों से अनभिज्ञ है । इस कारण वे कुछ भी नहीं समझ पाते हैं ।

(घ सहकारी प्रतिबन्ध—सहकारी समितियों और सहकारिता आन्दोलन पर सरकार का पूर्ण रूप से नियन्त्रण रहता है । रजिस्ट्रार ही मुखिया होता है और सहकारिता सम्बन्धी प्रत्येक कार्य को अपनी इच्छा से करता है ।

(ङ) गैर साख समितियों की अवहेलना—सहकारिता आंदोलन के अन्तर्गत केवल साख समितियों पर ही ध्यान दिया गया और गैर साख समितियों को अवहेलना की दृष्टि से देखा गया है । कृषकों को साख के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी सहकारिता की आवश्यकता पड़ती है । आज इस आवश्यकता को महसूस किया जा रहा है और बहूद्देशीय समितियों का भी निर्माण किया जा रहा है ।

(च) कर्मचारियों का दिखावटी प्रयास—सहकारी विभाग के कर्मचारी सर्व-साधारण को सहकारिता के सिद्धान्तों को भली भाँति समझाये बिना ही समितियों को संगठित कर देते हैं, जो उनके तबादले के साथ ही समाप्त हो जाती है । प्रत्येक कर्मचारी उस कार्य की चिन्ता

न करके केवल दिखावटी कार्य अधिक करता है।

(छ) अधिकारियों की चरित्रहीनता—कहीं-कहीं समितियों के अधिकारियों में सेवा-भाव का अभाव होता है। वे लालची होते हैं जो सदस्यों को धोखा देकर स्वयं अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं।

(ज) स्वार्थी व्यक्तियों का समितियों में समावेश—कभी-कभी समितियों में लालची साहूकारों की प्रधानता हो जाती है, जो सम्पूर्ण समिति पर अपना अधिकार करके प्रत्येक कार्य मनमाने रूप से करते हैं।

(झ) आवश्यकता पर सहायता प्राप्त न होना—सहकारी समितियाँ अधिकतर समय पर सदस्यों को पूँजी देने या ऋण देने में असमर्थ रहती हैं तो ऐसी स्थिति में उनका विश्वास सहकारिता से हट जाता है।

(ञ) समय पर ऋण चुकाने में असमर्थता—फसल नष्ट हो जाने की स्थिति में लेनदार उचित समय पर ऋण चुकाने में असमर्थता प्रकट करते हैं, तो ऐसी स्थिति में अन्य सदस्यगण इस लाभ से वंचित रह जाते हैं।

(ट) कृषक में आत्म-सम्मान की भावना—भारतीय कृषक में सदैव से आत्म सम्मान की भावना रही है। वह कभी भी अपनी आर्थिक स्थिति दूसरे के सामने स्पष्ट करना पसन्द नहीं करता है। समिति से रुपया लेने पर उसे कार्य और आवश्यकता को स्पष्ट रूप से उनके सामने रखना पड़ता है, जिसे वह आत्म सम्मान के विरुद्ध समझता है।

(ठ) निःस्वार्थ कार्यकर्त्ताओं का अभाव—इस आन्दोलन की असफलता का एक कारण यह भी है कि कृषकों के हित और लाभ के लिए कार्य करने वाले व्यक्तियों का सर्वथा अभाव है।

२. सहकारी समितियों से लाभ—सहकारिता आन्दोलन में अनेक दुर्बलताओं के होते हुए भी इससे निम्नलिखित लाभ हैं—

(क) ब्याज की दर घट जाना—जिन स्थानों पर सहकारी समितियाँ कार्य कर रही हैं, वहाँ महाजनों ने ब्याज की दर कम करदी है, जिससे कृषकों को शोषण से बचाया जा सका है।

(ख) कृषकों की स्थिति में परिवर्तन—सहकारी समितियों के द्वारा कृषकों को कम खर्च करने की शिक्षा दी गई। उन्हें वैंकिग और व्यापारिक बातों की जानकारी प्राप्त हो जाने के कारण पहले की अपेक्षा आपसी झगड़े कम हो गए हैं।

(ग) कृषकों को सहायता—सहकारी समितियों के द्वारा कृषकों को उचित मूल्य पर बीज खरीदने, उपज बेचने और ऋण देने आदि की सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। इस प्रकार उन्हें कृषि सम्बन्धी सहायता प्राप्त होती रहती है।

(घ) गृह उद्योगों का विकास—विभिन्न औद्योगिक सहकारी संस्थाओं के द्वारा ग्रामीण उद्योगों का पूर्णरूप से विकास हुआ है। इनके द्वारा उनकी आर्थिक स्थिति में काफी परिवर्तन हुए हैं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि सहकारिता आन्दोलन को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि इनके संगठन को सुचारु रूप से संचालित किया जावे। इसके अतिरिक्त इन समितियों को अधिक से अधिक जनहितकारी कार्य करने चाहिए।

अध्याय ९

स्वास्थ्य के लिये संघर्ष

प्रश्न १—स्पष्ट कीजिए "दुर्बल स्वास्थ्य न केवल व्यक्तिगत समस्या है वरन् एक सामाजिक समस्या भी है।"

उत्तर—स्वास्थ्य मनुष्य की एक बड़ी आवश्यकता है। वेदों में अच्छे स्वास्थ्य के लिए अनेकों प्रार्थनाएँ की गई हैं जिससे प्रतीत होता है कि प्राचीन काल से ही मनुष्य अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहा है। आज भी हम जब किसी को पत्र लिखते हैं तो सबसे पहले अपने परिवार के सदस्यों तथा जिसको पत्र लिख रहे हैं, उसकी कुशलता के समाचार लिखते हैं।

(१) स्वास्थ्य का महत्व—मनुष्य जीवन की सार्थकता अच्छे स्वास्थ्य में ही है। अच्छा स्वास्थ्य मनुष्य को दीर्घायु बनाता है। स्वस्थ मनुष्य बड़ा प्रसन्न चित्त रहता है। उसमें सोचने-विचारने की शक्ति भी बढ़ जाती है। इसीलिए कहा भी है, "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन निवास करता है।" अपार धन सम्पत्ति होने पर भी मनुष्य उसके सुख से केवल इसलिए वंचित रह जाता है क्योंकि वह दुर्बल एवं रोगी है जबकि निर्धन परन्तु स्वस्थ व्यक्ति जीवन का पूरा आनन्द उठाता है।

२. दुर्बल स्वास्थ्य (व्यक्तिगत समस्या के रूप में)—

(अ) व्यक्तिगत कष्ट और वेदना—रोगी व्यक्ति को अपार कष्ट का अनुभव होता है। उसे ऐसा मालूम होता है मानो मृत्यु उसके सामने मुँह खोले खड़ी है। थोड़ा पेट या सिर में दर्द होने पर ही व्यक्ति छटपटाने लगता है। वह भय से कांपने लगता है और प्रत्येक व्यक्ति से सहायता और अपना कष्ट दूर करने की याचना करता है।

(ब) निराशावादी दृष्टिकोण—रोगी व्यक्ति को अपना जीवन बहुत छोटा प्रतीत होता है इसलिए उसमें एक निराशावादी भावना आजाती है। उसमें विचारों की स्थिरता नहीं रहती। कभी वह एक बात सोचता है और कभी उसके विपरीत ही बात कहने लग जाता है।

(स) आर्थिक अभाव—रोगी व्यक्ति अपना धन्धा भली प्रकार नहीं कर पाता इसलिए उसे आर्थिक कष्ट भी सहना पड़ता है। बीमारी में दवा इत्यादि पर पैसा खर्च करना पड़ता है। नौकरी करने वाला व्यक्ति नौकरी से छुट्टी ले लेता है तथा दुकानदार को अपनी दुकान बन्द करनी होती है इस प्रकार उसकी आर्थिक दशा खराब हो जाती है।

(द) घृणा का पात्र—रोगी व्यक्ति से घर व समाज के व्यक्ति घृणा करने लगते हैं। टी० बी० आदि के रोगी के पास बैठना लोग पसंद नहीं करते। दमे का रोगी जब रात को खांसता है तो उससे दूसरों की नींद भी खराब हो जाती है। इस तरह उसे दूसरों की घृणा का पात्र भी बनना पड़ता है।

३. दुर्बल स्वास्थ्य (सामाजिक समस्या के रूप में)

(अ) परिचर्या की आवश्यकता—रोगी व्यक्ति की देखभाल करने के लिए परिचर्या की जरूरत रहती है। अस्तपतालों में इस कार्य के लिए नर्सें और परिचारक रखे जाते हैं। घर में यह कार्य रोगी के सम्बन्धी करते हैं।

(ब) धन का अपव्यय—रोगी व्यक्ति के ऊपर धन का अपव्यय होता है। हमारे देश से लाखों रुपया प्रतिवर्ष दवाएं खरीदने के लिए विदेशों में जाता है। रोग निदान के लिए करोड़ों रुपयों के यन्त्र खरीदे जाते हैं तथा करोड़ों की लागत से अस्तपतालों के भवन बनवाये जाते हैं।

(स) सेवा से वंचित रहना—रोगी व्यक्ति समाज की कोई सेवा नहीं कर सकता उसकी उपयोगिता से समाज को वंचित रहना पड़ता है। इसके अलावा उसकी कुशलता में भी कमी आ जाती है। स्वास्थ्य लाभ करने के बाद भी वह उतनी तेजी और मेहनत से काम नहीं कर सकता कि वह रोगी होने से पूर्व कर लेता था।

(द) संक्रामक रोग—कुछ रोग संक्रामक होते हैं जो एक से दूसरे को लगते हैं। हैजा, प्लेग आदि के एक बार प्रारम्भ हो जाने पर उसे रोक पाना एक बड़ी समस्या हो जाती है। समाज सेवी संस्थाओं और सरकारी कर्मचारियों का काफी समय ऐसी बिमारियों को फैलने से रोकने के लिए अथक प्रयत्न करना पड़ता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि दुर्बल स्वास्थ्य न केवल व्यक्तिगत बल्कि एक सामाजिक समस्या भी है।

प्रश्न २—जनसाधारण के स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के लिए योजनाओं में किन बातों को प्राथमिकता दी गई है ?

उत्तर—भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से जनसाधारण के स्वास्थ्य को ऊँचा उठाने का काफी प्रयत्न किया गया है उसी का परिणाम है कि भारत में मृत्यु संख्या घट कर आधी रह गई है। लोगों की औसत आयु भी पिछले १० वर्षों में ३२ से बढ़कर ४२ वर्ष हो गई है। पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य सम्बन्धी जो कार्यक्रम प्रारम्भ हुए थे तीसरी योजना में उन्हें आगे बढ़ाया गया। इन कार्यक्रमों में निम्नलिखित बातों को प्राथमिकता दी गई—

(१) फैलने वाली बीमारियाँ—हमारे देश में मलेरिया से ७ करोड़ से भी अधिक लोग ग्रसित होते थे। इसे समाप्त करने के लिए राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसके कारण यह संख्या घटकर १ करोड़ रह गई है। आशा है कि तीसरी योजना के अन्त तक इस रोग का पूरा उन्मूलन हो जायगा। दूसरा भयानक रोग क्षयरोग है इसे रोकने के लिए बी० सी० जी० के टीके लगाने तथा टी० बी० सेनेटोरियम खोलने की व्यवस्था की गई है। इसी प्रकार चेचक, हैजा, फीलपांव आदि भयानक रोगों की भी रोकथाम की जा रही है।

(२) चिकित्सा सुविधाओं में वृद्धि—प्रत्येक योजना में डाक्टरों व नर्सों की संख्या में वृद्धि की जा रही है। वर्तमान अस्पतालों में रोगी शैयाएँ बढ़ादी गई हैं तथा नये अस्पताल भी खोले गये हैं। राज्य कर्मचारियों तथा कारखानों के मजदूरों के लिए विशेष योजनाएँ चलाई गई हैं।

(३) चिकित्सा सम्बन्धी शिक्षा—हमारे देश में डाक्टरों व नर्सों की बहुत कमी है इसके लिए कई नये २ मेडीकल कॉलेज खोले गये हैं तथा वर्तमान कॉलेजों की क्षमता बढ़ाई गई है। नर्सों की ट्रेनिंग का विशेष [प्र]बन्ध किया गया है उन्हें प्रोत्साहन देने के लिए छात्रवृत्तियाँ दी जाती हैं।

(४) पीने के जल की व्यवस्था—हमारे देश में ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषरूप से पीने के स्वच्छ जल का अभाव था इस कारण भी बीमा-

रियाँ अधिक होती थी इस अभाव को दूर किया गया है। हैन्डपम्प, ट्यूबवैल तथा नलों द्वारा स्वच्छ जल की व्यवस्था की गई है। कुओं को पक्का करने के विशेष अनुदान दिये गये हैं। गाँवों में पीने योग्य साफ पानी की व्यवस्था करना तीसरी योजना का लक्ष्य रखा गया है।

(५) **चिकित्साशोध और औषधि निर्माण**—चिकित्सा विज्ञान में शोधकार्य की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। इस कार्य के लिए देहली तथा बम्बई में शोधसंस्थान स्थापित किये गये हैं। देश में ही औषधियों का निर्माण तेजी से किया जा रहा है। अब हमारे देश में ही पेन्सिलीन के इन्जेक्शन, भिन्न २ बीमारियों के टीके तथा डी० डी० टी० का उत्पादन होता है। दवाओं में मिलावट रोकने के लिए अधिकारी नियुक्त किये गये हैं।

(६) **देशी चिकित्सा पद्धति को प्रोत्साहन**—अब देश के बड़े २ नेताओं ने देशी चिकित्सा पद्धति की उपयोगिता को स्वीकार कर लिया है। सरकार द्वारा देशी दवाओं के औषधालय खोले गये हैं। वैद्यों व हकीमों का सरकार द्वारा रजिस्ट्रेशन किया जाता है तथा इसके सुधार के लिए बोर्ड का गठन किया गया है। इस पद्धति का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों को अधिक प्राप्त हुआ है।

(७) **माताओं और शिशुओं का स्वास्थ्य**—इस कार्य के लिए जच्चा बच्चा केन्द्र खोले गये हैं जहाँ ट्रेन्ड दाइयां रखी जाती हैं। प्रजनन के समय होने वाली जच्चाओं की मृत्यु को काफी हद तक काबू में ले लिया गया है।

(८) **ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य रक्षा**—ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएँ पहुँचाने के लिए प्राथमिक स्वास्थ केन्द्र स्थापित किये गये हैं। ये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र ऐसे ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किये जाते हैं जहाँ अधिक से अधिक ग्रामवासी इसका लाभ उठा सकें।

(९) **स्वास्थ्यवर्धक निवास स्थान**—अधिक बीमारियाँ अस्वास्थ्यकर मकानों में रहने के कारण होती हैं। सीलन, बदबूदार और अंधेरे मकानों में रोग के कीटाणु अधिक पनपते हैं। अतः खुले हवादार मकान बनवाने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया जाता है तथा इस कार्य के लिए कम ब्याज पर रुपया उधार दिया जाता है।

(१०) **परिवार नियोजन**—यह सभी जानते हैं कि परिवार में जितने अधिक बच्चे होंगे उतनी ही परिवार की आर्थिक दशा खराब होगी। बच्चों को उचित भोजन और पोषक तत्व कम मिल सकेंगे इसलिए सरकार ने परिवार नियोजन कार्यक्रम को विशेष महत्व दिया है। भिन्न २ तरीकों से लोगों को परिवार नियोजन सम्बन्धी जानकारी दी जाती है।

प्रश्न ३—फैलने वाले रोगों की रोक थाम और उन पर नियन्त्रण किस प्रकार किया जा रहा है?

उत्तर—यह तो सभी जानते हैं कि कुछ बीमारियां बड़ी तेजी से फैलती हैं अतः उन बीमारियों का इलाज करने के साथ साथ यह भी जरूरी है कि उनको फैलाने से रोका जाय। पंचवर्षीय योजनाओं में बीमारियों के नियंत्रण की ओर भी ध्यान दिया गया है।

(१) **मलेरिया नियन्त्रण**—हमारे देश में बरसात के मौसम में मलेरिया अधिक होता था। इस भयानक रोग से प्रतिवर्ष ७ करोड़ व्यक्ति ग्रसित होते थे अतः एक राष्ट्रीय मलेरिया कार्यक्रम चलाया गया जिसे बाद में राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन के कार्यक्रम में बदल दिया गया। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य किये जा रहे हैं—

(अ) ज्योंही किसी को बुखार होता है उसके खून की मुफ्त जांच की जाती है।

(ब) स्वस्थ्य व्यक्तियों में रोग से लड़ने की क्षमता जांचने के लिए रक्त की जाँच की जाती है।

(स) समय समय पर घरों में अनिवार्य रूप से डी० डी० टी० छिड़का जाता है।

(द) मलेरिया की रोकथाम के लिए मुफ्त दवाएं बांटी जाती हैं।

उपर्युक्त कार्यक्रमों के फलस्वरूप मलेरिया से ग्रसित होने वालों की संख्या १०.८ प्रतिशत से घट कर २.४ रह गई है। आशा है तीसरी योजना के अन्त तक इसका पूर्णरूप से उन्मूलन हो जायगा।

(२) **क्षयरोग नियन्त्रण**—फैलने वाले रोगों में क्षय या तपेदिक बहुत व्यापक है इसकी रोक थाम के लिए निम्नलिखित को अपनाया गया है—

(अ) अधिक से अधिक लोगों को बी० सी० जी० के टीके लगाये जाते हैं।

(ब) मद्रास के गिन्डी नामक स्थान पर बी० सी० जी० टीका प्रयोग-शाला स्थापित की गई है।

(स) रोगियों की चिकित्सा के लिए अस्पतालों में रोग शैयाओं की संख्या काफी बढ़ा दी गई है।

(द) रोग से मुक्त हो जाने के बाद रोगी की विशेष देख-भाल रखी जाती है और समय समय पर उसके रक्त की परीक्षा की जाती है।

(घ) कई स्थानों पर टी० बी० सेनेटोरियम और अस्पतालों में टी० बी० क्लीनिक स्थापित किये गये हैं।

(न) टी० बी० सील बेचकर रोगियों के लिए धन संग्रह किया जाता है।

(३) **चेचक नियन्त्रण**—यह भी फैलने वाली बीमारी है। चेचक से हमारे देश के लाखों बच्चे प्रतिवर्ष मर जाते हैं और अनेकों कुरूप हो जाते हैं। इसके लिए निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं—

(अ) सभी व्यक्तियों को अनिवार्य रूप से टीके लगाये जाते हैं।

(ब) टीका तैयार करने के लिए देश में कारखाना स्थापित किया गया है जो बम्बई में स्थित है।

(स) इस बीमारी के बारे में अंधविश्वास दूर करने के लिए प्रचार किया जाता है।

(द) परिवार में किसी के इस रोग से ग्रसित हो जाने पर कर्मचारियों को सवेतन अवकाश दिया जाता है ताकि उनके माध्यम से रोग दूसरों में न फैले।

प्रश्न ४—निम्नलिखित पर संक्षेप में टिप्पणी लिखिये—

(१) प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, (२) पोषक भोजन (३) परिवार नियोजन।

(१) **उत्तर—प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र**—यह ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएं पहुँचाने के लिए खोले जाते हैं। ग्रामीण लोग दूर शहरों के अस्पतालों में रोगी को ले जाने में कठिनाई अनुभव करते हैं अतः सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे केन्द्र खोले हैं जहाँ आसपास के ग्रामवासी

सुविधापूर्वक आकर स्वास्थ्य लाभ कर सकें। प्रथम योजना काल में ऐसे ७४ केन्द्र खोले गये थे। तृतीय योजना के अन्त तक इनकी संख्या बढ़कर १००० तक पहुँच जायगी इन केन्द्रों में शल्य चिकित्सा के नवीन उपकरण रखे जाते हैं। ऐसे प्रत्येक केन्द्र से लगभग ६६०००० व्यक्ति लाभ उठा सकते हैं। ऐसे केन्द्रों में सबसे बड़ी समस्या डाक्टरों की होती है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में डाक्टर जाना पसंद नहीं करते अतः उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए विशेष भत्ता दिया जाता है।

(२) पोषक भोजन—शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए भोजन का महत्वपूर्ण स्थान है। भोजन ऐसा होना चाहिये जिसमें पोषक तत्व अधिक हो। भोजन के आवश्यक तत्व जैसे प्रोटीन, कारबोहाइड्रेट, चर्बी, विटामिन आदि जिन पदार्थों में अधिक मात्रा में पाये जाते हैं उनका सही तरीके से उपयोग करना ही पोषक भोजन है। आज टी० बी० की बीमारी अधिक फैलने का मुख्य कारण यही है कि लोगों को पोषक भोजन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं होता। स्वास्थ्यवर्द्धक भोजन से मनुष्य में बीमारियों से लड़ने की शक्ति प्राप्त होती है। बंगलौर के रिसर्च इन्स्टीट्यूट में इस सम्बन्ध में अनुसंधान भी किया जाता है।

(३) परिवार नियोजन—नियोजित परिवार सुख और समृद्धि की कुन्जी है। अधिक बच्चे होने से मां के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है तथा बच्चे भी कमजोर होते हैं। इसीलिए हमारे देश में बच्चों की मृत्यु संख्या बहुत अधिक है। भारत में संख्या इतनी तेजी से बढ़ रही है कि अगले चालीस वर्षों में जनसंख्या दुगुनी हो जाने का अनुमान है ऐसी स्थिति में हमारी योजनाएँ भी कोई महत्व नहीं रखती। स्वास्थ्य सेवाओं में वृद्धि के कारण मृत्यु संख्या घट गई है। इसलिए यह नितान्त आवश्यक है कि आबादी को नियंत्रित किया जाय। परिवार में जितने कम बच्चे होंगे उतना ही उनकी पढ़ाई लिखाई और भोजन पर अधिक व्यय किया जा सकेगा। आजकल २ या ३ बच्चों का आदर्श परिवार माना जाता है। देश की पंचवर्षीय योजनाओं में इस समस्या पर विशेष बल दिया गया है। भिन्न-भिन्न तरीकों से लोगों को परिवार नियोजन के बारे में बतलाया जाता है ताकि लोग स्वयं इसके महत्व को समझें और आवश्यक उपाय काम में लाएँ।

अध्याय १०

स्वतन्त्रता के उपरान्त शिक्षा का विकास

प्रश्न १—"शिक्षा अच्छे, सुखी तथा सफल जीवन की कुंजी है" इस कथन को दस पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—शिक्षा मनुष्य में सच्ची मानवता का संचार करती है। वह उसे योग्य नागरिक और सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाती है। शिक्षित व्यक्ति ही प्रगति की सराहना कर सकते हैं और उसका महत्व समझ सकते हैं।

(१) शिक्षा का अर्थ—शिक्षा का अर्थ केवल कुछ किताबें पढ़ लेना नहीं है बल्कि शिक्षा का अर्थ है मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास तथा उन्नति करना है। संस्कृत ग्रंथों में बताया गया है कि विद्या वह है जो मनुष्य को विनयशील बनाती है और उसे मुक्ति प्रदान करती है। गांधीजी ने भी कहा है कि सच्ची शिक्षा वही है जो मनुष्य का चरित्र बनाए, उसकी सुप्त शक्तियों को जाग्रत करे तथा स्वावलम्बी बनाए और समाज की उपयोगी इकाई के रूप में उसका निर्माण करे।

(२) शिक्षा का महत्व—

(अ) सामाजिक महत्व—शिक्षित व्यक्ति समाज की अच्छी प्रकार सेवा कर सकते हैं। शिक्षा से अन्धविश्वास दूर होता है और लोगों में पुरानी रूढ़ियों के प्रति आस्था कम होती है। वे नये और प्रगति शील विचारों को ग्रहण करते हैं। आज हमारे देश में समाज सुधार के जो कार्य-क्रम बनाए गये हैं उनको पूरी तरह अमल में तभी लाया जा सकता है जब लोग शिक्षित हों।

(ब) आर्थिक महत्व—शिक्षा व्यक्ति की आर्थिक दशा भी सुधारती है। शिक्षित किसान वैज्ञानिक तरीके से खेती करके अधिक अनाज उत्पन्न करता है और शिक्षित व्यापारी भी संसार की गतिविधि को देखकर अपने व्यापार को कुशल ढंग से चलाता है। इस प्रकार व्यक्तिगत आय के साथ राष्ट्रीय आय भी बढ़ती है।

(स) राजनैतिक महत्व—प्रजातन्त्र में शिक्षित व्यक्ति मतदान का सही उपयोग करते हैं और योग्य सरकार का निर्माण करते हैं वे राष्ट्र

की आवश्यकता को समझते हैं और सही ढंग से अपनी राय प्रकट करते हैं।

(द) आध्यात्मिक महत्व—मनुष्य अपनी व्यक्तिगत, नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति शिक्षा के द्वारा करता है। वह दूसरों के विचार पढ़ता है और उनका मनन करता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिक्षा अच्छे सुखी तथा सफल जीवन की कुंजी है।

प्रश्न २—अंग्रेजी शासन द्वारा प्रारम्भ की गई शिक्षा के कोई दो प्रमुख दोष बताइये।

उत्तर—अंग्रेजी शासन द्वारा जो शिक्षा प्रणाली चलाई गई वह दोषपूर्ण थी। उसके प्रमुख दोष निम्न प्रकार हैं:—

(१) **अराष्ट्रीय शिक्षा**—अंग्रेज शासकों द्वारा चलाई गई शिक्षा अराष्ट्रीय थी उसका मुख्य उद्देश्य भारत में क्लर्क और नौकरियों के लिए व्यक्ति तैयार करना था। शिक्षा विदेशी भाषा के माध्यम से दी गई। इस कारण उनमें अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति कोई प्रेम न रहा। शिक्षा के दौरान अंग्रेजों के विकास और उन्नति को बढ़ा-चढ़ा कर बताया गया और भारतीय इतिहा,स जीवन और संस्कृति को हेय और पिछड़ा हुआ बताकर उसके प्रति घृणा पैदा की गई।

(२) **अनुपयुक्त शिक्षा**—अंग्रेजों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा हमारे देश की आवश्यकता के उपयुक्त नहीं थी। अंग्रेज चाहते थे कि भारतवासी अधिक से अधिक समय तक गुलाम बने रहें इसलिए वे ऐसी शिक्षा नहीं चलाना चाहते थे जो उन्हें स्वावलम्बी और चरित्रवान बनाए। पढ़े-लिखे लोग श्रम से घृणा करते हैं और ऐसे व्यवसायों को नहीं चुनना चाहते जिनमें उनमें कपड़ों पर धब्बे पड़ें। पढ़े-लिखे व्यक्तियों का उद्देश्य केवल मात्र नौकरी करना रह गया। इसीलिए बेरोजगारी की समस्या हमारे देश में बढ़ती रही है। औद्योगिक और प्राविधिक शिक्षा की ओर अंग्रेज शासकों द्वारा कतई ध्यान नहीं दिया गया।

इस प्रकार अंग्रेजों द्वारा चलाई गई शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण थी।

प्रश्न ३—प्रारम्भिक शिक्षा का विशेष महत्व क्यों माना गया है?

उत्तर—प्रारम्भिक शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। आज के विद्यार्थी ही कल के नागरिक बनते हैं और प्राथमिक शिक्षा ही वह महत्वपूर्ण सीढ़ी है जिस पर शिक्षार्थी सर्वप्रथम कदम रखता है। निम्न कारणों से इस शिक्षा का विशेष महत्व माना गया है:—

(१) निर्देशक सिद्धान्त—हमारे संविधान में लिखित निर्देशक सिद्धान्तों में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि सरकार विधान लागू होने के १० वर्ष के अन्दर इस बात का प्रयत्न करेगी कि १४ वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो सके। यद्यपि किन्हीं विशेष कारणों से यह संकल्प पूरा नहीं हो सका है परन्तु तीसरी योजना के अन्त तक ६ से ११ वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था के लिए सरकार कटिबद्ध है।

(२) शिक्षा की पहली सीढ़ी—सभी प्रकार की उच्च शिक्षा की पहली सीढ़ी प्रारम्भिक शिक्षा है। इस कारण जितनी अच्छी पद्धति से प्राथमिक शिक्षा दी जावेगी उतने ही बच्चों की शिक्षा के प्रति स्वाभाविक रुचि बढ़ेगी। इससे न केवल बालकों की भीतरी शक्ति का विकास होगा बल्कि भविष्य की नींव भी मजबूत होगी।

(३) बाल्य-जीवन की मधुरिमा—हमारे देश में गरीबी के कारण माता-पिता बालकों को पढ़ने के लिए न भेजकर मजदूरी करवाते हैं। गांव में छोटे-छोटे बालक पशु चराने के लिए भेजे जाते हैं। इतनी छोटी उम्र में वे धनोपार्जन के भार से दब जाते हैं और उनके बाल्य-जीवन की मधुरता नष्ट हो जाती है। इसलिए अनिवार्य निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

(४) निरक्षरता का कलंक—यह हमारे देश के लिए बड़े कलंक की बात है कि देश के ७० प्रतिशत लोग हस्ताक्षर न करके अँगूठा लगाते हैं। अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के द्वारा प्रत्येक छात्र कम से कम इतना साक्षर तो बना ही दिया जावेगा कि वह मामूली लिख पढ़ सके।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रारम्भिक शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है।

प्रश्न ४—स्वतंत्रता के बाद भारत में शिक्षा सम्बन्धी प्रगति पर अपने विचार अपनी उत्तर पुस्तिका के एक पृष्ठ में लिखिये।

उत्तर—स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत में शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। शिक्षा सम्बन्धी उन्नति भिन्न क्षेत्रों मे भिन्न प्रकार से हुई है।

(१) **प्राथमिक शिक्षा**—निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करके और 'स्कूल चलो अभियान' चलाकर प्राथमिक शालाओं में छात्रों की संख्या काफी बढ़ गई है। १९४७ में ६ से ११ वर्ष के बीच की आयु के ३० प्रतिशत बच्चे स्कूल जाते थे तीसरी योजना के अन्त तक यह संख्या बढ़कर ७६ प्रतिशत पहुँच जावेगी इसके अलावा प्राथमिक शालाओं में बुनियादी शिक्षा पद्धति को चलाया गया है जिससे कि पढ़ाई के साथ साथ बालक कुछ उपयोगी कार्य भी कर सके और समन्वय भी बना रहे।

(२) **माध्यमिक शिक्षा**—माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में विद्यार्थियों की रूचि को ध्यान में रखते हुए ऐसे पाठ्य क्रम चलाए गये हैं ताकि इस शिक्षा को पूर्ण करके विद्यार्थी सीधे जीवन में प्रवेश कर सके। दूसरे शब्दों में माध्यमिक शिक्षा केवल क्लर्की की शिक्षा नहीं रह गई है। इस शिक्षा को अधिक व्यवहारिक और व्यवसायिक बनाया गया है। बहुउद्देशीय विद्यालय अधिकाधिक खोले गये है। पिछले १८ वर्षो में माध्यमिक विद्यालयों की संख्या ३ गुनी तथा विद्यार्थी संख्या ४ गुनी बढ़ गई है।

(३) **उच्च शिक्षा**—पिछले वर्षो में कालेजों और विश्वविद्यालयों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। राजस्थान मे जहाँ पहले एक विश्वविद्यालय था वहाँ अब ३ विश्वविद्यालय हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान की शिक्षा पर अब अधिक जोर दिया गया है। कई विश्वविद्यालयों ने डाक द्वारा शिक्षा के कोर्स चालू किये हैं।

(४) **स्त्री शिक्षा**—हमारे देश में स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार बहुत कम है इस कारण स्त्री शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। उनके स्कूल व कॉलेजों की संख्या बढ़ाई गई है।

(५) **अनुसूचित जातियों की शिक्षा**—अनुसूचित जातियों, जन जातियों तथा आदिम जातियों मे शिक्षा के प्रचार के लिए उनके छात्रों को विशेष छा— वृत्ति दी जाति है तथा उनके लिए निःशुल्क शिक्षा की

व्यवस्था की गई है इसके अतिरिक्त इन जातियों के बच्चों के लिए सरकार की ओर से मुफ्त होस्टल खोले गये हैं।

इस प्रकार स्वतंत्रता के बाद से शिक्षा में विशेष उन्नति हुई है।

प्रश्न ५—आजकल औद्योगिक तथा प्रावधिक शिक्षा पर विशेष बल क्यों दिया जाता है ?

उत्तर—हमारे शिक्षा शास्त्रियों ने देश में औद्योगिक तथा प्रावधिक शिक्षा की कमी को महसूस किया और इसके लिए पंचवर्षीय योजनाओं में विशेष प्रावधान रखे गये। जिसके फलस्वरूप पिछले १० वर्षों में इन्जीनियरिंग और टेक्नोलोजी की शिक्षा देने वाले कॉलिज और स्कूलों की संख्या बढ़कर दुगुने से अधिक हो गई है। इस प्रकार की शिक्षा पर आज विशेष बल दिया जारहा है, जिसके निम्नलिखित कारण हैं:—

(१) तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों का अभाव—हमारे देश में अच्छी तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों का अभाव है। हमारे देश के कारखानों को चलाने के लिए हमें उच्च पदों के इंजीनियर विदेशों से मंगाने पड़ते हैं इस कारण हमारे देश को आर्थिक हानि सहनी पड़ती है।

(२) तकनीकी शिक्षा संस्थाओं का अभाव—हमारे देश में औद्योगिक तथा प्रावधिक शिक्षा देने वाली संस्थाओं का अभाव है। बहुत से कारखानों में काम चलाऊ ट्रेनिंग दे दी जाती है। इस कारण अच्छी तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेशों में जाना पड़ता है। अब देश में कई टेकनोलोजी के संस्थान स्थापित किये गये हैं। इनमें एक बम्बई में रूस सरकार की सहायता से स्थापित किया गया है।

(३) औद्योगिक प्रगति—हमारे देश में अब औद्योगिक प्रगति हो रही है। देश में स्थापित होने वाले नये नये उद्योगों के लिए टेक्नीशियनों की मांग बढ़ती जा रही है। इसलिए यह नितांत आवश्यक है कि इन कल कारखानों के लिए तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति भारत के ही नवयुवक हों। इस कारण डिप्लोमा तथा सर्टिफिकेट कोर्स चलाये गये हैं।

(४) बेकारी की समस्या का हल—आजकल शिक्षित व्यक्ति लाखों की संख्या में बेकार हैं या ऐसे कामों में लगे हैं जिनमें उनकी रूचि बिल्कुल नहीं है। सका मुख्य कारण यह है कि उन्होंने व्यर्थ बनाने वाली शिक्षा ही

प्राप्त की है। यदि देश के नवयुवकों को औद्योगिक शिक्षा दी जाय तो बेकारी बहुत हद तक कम हो जाय।

(५) कुशल कारीगर—कारीगरों की कुशलता का उत्पादन पर बड़ा असर पड़ता है। अधिक उत्पादन होने से उस पर लागत कम बैठती है और माल सस्ता बनता है अतः कारीगरों में कुशलता लाने के लिए उनकी ट्रेनिंग और रिफ्रेशर ट्रेनिंग का पूरा इन्तजाम होना चाहिये।

६. श्रम के प्रति आदर—कुछ वर्ष पूर्व तक हमारे यहां कारीगरी का काम करने वालों को हीनता की दृष्टि से देखा जाता था। अधिकांश लोग ऐसे व्यवसाय पसन्द करते थे जिसमें उनके कपड़े मैले न हों।

कारीगरों को वेतन भी कम मिलता था। अब समय बदल गया है प्राविधिक शिक्षा प्राप्त व्यक्ति सामान्य शिक्षितों से अधिक वेतन प्राप्त करता है। इससे श्रम के प्रति आदर बढ़ा है। अब अधिकांश लोग अपने बच्चों को तकनी की शिक्षा दिलाना चाहते हैं।

७. स्वावलम्बी बनाना—औद्योगिक तथा प्राविधिक शिक्षा प्राप्त व्यक्ति नौकरी की तलाश में मारा मारा नहीं फिरना चाहता। वह छोटे व्यवसाय और घरेलू धन्धे चलाकर अपनी रोजी कमा सकता है। आज हम देखते हैं कि रेडियो, मशीनें, मोटर आदि ठीक करने वाले, बिजली फिटिंग करने तथा वैल्डिंग या पहियों पर रबड़ चढ़ाने वाले अनेकों व्यक्ति बड़ी सुविधापूर्वक अपनी रोजी कमाते हैं।

इस प्रकार आज भारत में औद्योगिक तथा प्राविधिक शिक्षा का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है। इसलिये इस पर विशेष बल दिया जाता है।

अध्याय ११

चीन का खतरा

प्रश्न १—भारत और चीन के सीमा विवाद का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारत की उत्तरी सीमा पर सबसे बड़ा पड़ौसी देश चीन है। चीन के साथ हमारे देश की २००० मील लम्बी सीमा है। पिछले कुछ वर्षों में इस सीमा के सम्बन्ध में विवाद इतना उग्ररूप धारण कर गया कि युद्ध

आरम्भ हो गया। यद्यपि युद्ध बन्द हो गया परन्तु विवाद अभी तक ज्यों का त्यों बना हुआ है।

१. विवाद के क्षेत्र—चीन के साथ सीमा विवाद के क्षेत्रों को तीन भागों में बांटा जा सकता है:—

(a) लद्दाख का क्षेत्र—लद्दाख हमारे काश्मीर प्रान्त के उत्तर पूर्व में स्थित है। इस क्षेत्र में लगभग १२००० वर्ग मील क्षेत्र पर चीन अपना अधिकार प्रस्तुत करना चाहता है। इस क्षेत्र को कब्जे में लेने से उसका तिब्बत से चीनी तुर्किस्तान जाने का मार्ग सीधा बन जाता है।

(b) मध्य क्षेत्र—इस क्षेत्र में विवाद अधिक नहीं है। उत्तर प्रदेश और तिब्बत से लगने वाली सीमा पर बाड़ाहोती क्षेत्र पर चीन अपना दावा करता है। यह स्थान बद्रीनाथ के उत्तर पूर्व में स्थित है।

(c) उत्तरी पूर्वी क्षेत्र—भारत के पूर्वी प्रान्त आसाम का उत्तरी भाग का प्रशासनिक दृष्टि से एक कमिश्नर के आधीन रहता है। इसे उत्तर पूर्वी सीमा एजेन्सी या नेफा कहते हैं। चीन इस क्षेत्र में २५ हजार वर्ग-मील क्षेत्र, करीब करीब पूरे नेफा प्रदेश पर अपना दावा बतलाता है। इसके अतिरिक्त वह सिक्कम और भूटान राज्य पर भी कब्जा करना चाहता है।

२. विवाद का आरम्भ—चीन से विवाद उसके द्वारा की गई कुछ अवांछित घटनाओं के स्वरूप हुआ ये घटनाएँ निम्न प्रकार हैं:—

(a) सितम्बर १९५८ की घटना—इस तारीख को चीन सरकार ने एक ऐसे भारतीय दल को नजर बन्द कर लिया जो भारतीय सीमा में ही गश्त कर रहा था। भारत सरकार को चीनियों के इस कार्य से उनकी नीयत पर संदेह तो अवश्य हुआ परन्तु उसे अपने ही लोगों की गल्ती समझ कर चुप हो गई। इससे पूर्व चीनियों ने लद्दाख के अक्ष्य चीन क्षेत्र में एक सड़क का निर्माण भी कर लिया था।

(b) मेकमोहन रेखा पर आपत्ति—भारत और चीन के बीच की सीमा नक्शों में एक रेखा द्वारा दिखाई गई है। जिसे मेकमोहन रेखा कहते हैं। यह सीमा रेखा शिमला सम्मेलन में तय हुई थी। जिसमें तत्कालीन चीन सरकार और तिब्बत सरकार के प्रतिनिधि भी थे, परन्तु

चीन के प्रधान मन्त्री ने जनवरी १९५९ में इस रेखा को "तिब्बत के विरुद्ध अंग्रेजों की आक्रामक नीति की चाल" बताकर अस्वीकार कर दिया।

(c) **अक्टूबर १९५९ की घटना**—अक्टूम्बर १९५९ को चीन के सशस्त्र सैनिक लद्दाख के दक्षिणी भाग में भारतीय प्रदेश में ४० मील घुस आये। भारतीय दल ने उनका मुकाबिला किया। इसके फलस्वरूप ९ भारतीय मारे गये और १० पकड लिए गये जिनके साथ बहुत अपमाननीय व्यवहार किया गया। इस घटना की जांच के लिए चीनी और भारतीयों की एक मीटिंग हुई परन्तु उस मीटिंग से चीनी अधिकारियों ने, पहले से भी अधिक क्षेत्र पर अपना दावा प्रस्तुत किया।

(d) **युद्ध का आरम्भ**—सन् ५९ की घटना के तीन वर्ष बाद तक इस सम्बन्ध में कोई अन्तिम हल प्राप्त नहीं हो सका और चीन छुटपुट हमले करता रहा, परन्तु २० अक्टूम्बर, १९६२ को उसने खुले रूप से भारत पर तीनों ओर से आक्रमण कर दिया। यह हमला अचानक हुआ था तथा भारतीय सेना संख्या में भी कम थी तथा उसे पहाड़ी क्षेत्र में युद्ध करने का अभ्यास भी नहीं था। इस कारण यद्यपि भारतीय जवान बहुत वीरता से लड़े फिर भी उन्हें पीछे हटना पड़ा। चीन ने इस स्थिति का लाभ उठाकर युद्ध बन्दी की बड़ी शर्तें पेश कीं परन्तु भारत ने उन्हें ठुकरा दिया।

(e) **युद्ध बन्दी**—युद्ध आरम्भ करने के एक माह बाद चीन स्वयं ने युद्ध बन्दी की घोषणा करदी। क्योंकि उसके इस कार्य की संसार के सभी देशों ने निन्दा की थी। स्वयं रूस ने भी उसके इस कार्य को अच्छा नहीं बताया। इसके अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, कनाड़ा, और आस्ट्रेलिया आदि देशों ने भारत को चीन के विरूद्ध अस्त्र-शस्त्र भेजना शुरू कर दिया।

(f) **कोलम्बो का प्रस्ताव**—पांच तटस्थ देशों, वरमा, घाना, इन्डोनेशिया, कम्बोडिया और संयुक्त अरब गण राज्य ने कोलम्बो में एक प्रस्ताव पास करके यह सुझाव रखा कि चीन १० नवम्बर, १९५६ की रेखा से २० किलो मीटर पीछे हट जाये तथा इस खाली किये क्षेत्र में दोनों देशों की असैनिक चौकियाँ स्थापित करदी जांय। भारत ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है परन्तु चीन आनाकानी कर रहा है।

संक्षेप में यही भारत चीन का सीमा विवाद है।

प्रश्न २—चीन के आक्रमण का भारतीय जनता ने किस प्रकार सामना किया ?

उत्तर—चीनी आक्रमण के समय भारत के तत्कालीन प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था "हमारी लड़ाई केवल मोर्चे पर ही नहीं है लड़ाई खेतों, खलिहानों, कारखानों, स्कूलों और दफ्तरों हर जगह लड़ाई जायगी।" इसका अर्थ यह था सभी देशवासी अपना काम ईमानदारी और मेहनत के साथ करें। देश वासियों ने उनकी इस आज्ञा का अक्षरशः पालन किया।.

(१) जवानों की वीरता—लड़ाई के मोर्चे पर भारतीय जवानों ने असाधारण वीरता का परिचय दिया। यद्यपि हमारे सिपाही संख्या में बहुत कम थे फिर भी उन्होंने दुश्मन के दांत खट्टे कर दिये। पहाड़ी स्थान पर युद्ध का अभ्यास न होते हुए भी उन्होंने अपनी जान की परवाह न करके दुश्मन की बाढ़ को रोका। इस युद्ध में असाधारण वीरता के लिए मेजर शैतान सिंह का नाम सदा अमर रहेगा। लाखों भारतीयों ने देश के लिए अपनी सेवायें अर्पित कर दी।

(२) विरोधी पक्षों का सहयोग—चीनी आक्रमण के समय भारतवासी अपने आपसी भेदभाव भुलाकर एक हो गये। सभी विरोधी पक्षों ने सरकार का खुले दिल से समर्थन किया। केवल वामपक्षी साम्यवादी दल छिपे रूप से चीन का समर्थन करता था। भारतीयों ने संसार को यह दिखा दिया कि चाहे हमारे कितने ही मतभेद हों संकट के समय हम सब एक हैं।

(३) रक्षा कोष—इस युद्ध के लिए साज सामान खरीदने के लिए प्रधान मंत्री ने एक रक्षा कोष की स्थापना की। इस रक्षा कोष में सभी भारतीयों ने खुले दिल से दान दिया। स्त्रियों ने अपने जेवर दान कर दिये मजदूरों ने निर्वेतन ओवर टाइम काम किया। विद्यार्थियों ने अपने दैनिक खर्चे के पैसे बचाकर कोष को दान किया। देश के सभी वर्गों के लोगों ने सिपाहियों के लिए रक्त दान दिया

(४) अन्य देशों की सहायता—चीन सरकार का ख्याल था कि तटस्थ राष्ट्र होने के कारण भारत का कोई देश साथ नहीं देगा। परन्तु भारत की अपील पर पश्चिमी राष्ट्रों ने भारत को शस्त्रास्त्र दिये तथा

तटस्थ राष्ट्रों ने चीन से अधिकार की हुई भूमि को खाली करने की अपील की। इस सहायता का भारतीय जनता ने हृदय से स्वागत किया।

इस प्रकार भारतीय जनता ने चीनी आक्रमण का डट कर मुकाबिला किया।

प्रश्न ३—चीन ने भारत के साथ जो विश्वास घात किया उसकी आलोचना कीजिये।

उत्तर—भारतीय सरकार ने चीन से मित्रता कायम रखने के लिए कोई कसर उठा न रखी थी। उसने सबसे पहले चीन की कम्यूनिस्ट सरकार को मान्यता दी थी। संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन को सदस्य बनाये जाने के लिए उसकी सबसे अधिक वकालत भारत ने ही की थी। चीनी प्रधानमंत्री चाऊ एन ली का भारत में दिल खोल कर स्वागत किया गया, परन्तु चीन ने फिर भी हमारे साथ विश्वास घात किया।

(१) भाई भाई का नारा—भारत ने 'हिन्दी चीनी भाई भाई' का नारा लगाया। उसने चीनी कार्यक्रमों में बड़ी दिल चस्पी ली। उसने संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन को सदस्य बनाने के लिए अमेरिका से टक्कर ली। परन्तु चीनी सरकार ने इस भलाई का बदला पीठ में छुरा घोंस कर चुकाया। उसने चुप चाप युद्ध की तैयारी की और आक्रमण किया।

(२) तिब्बत में सुविधाओं की समाप्ति—अंग्रेजों के समय से तिब्बत में भारत को व्यापार की विशेष सुविधाएँ प्राप्त थी। वहाँ की तार टेलीफोन की लाइन और डाकखाने भारतीयों द्वारा चलाये जाते थे। वहाँ एक सैनिक टुकड़ी रहती थी तथा कुछ सैनिक चौकियाँ थी। जब चीन ने तिब्बत को अपने कब्जे में किया तब भारत ने चीन से मित्रता बनाए रखने के लिए तिब्बत में से अपनी सभी सुविधाओं को त्याग दिया।

(३) सड़कों का निर्माण—चीनीयों ने तिब्बत में भारतीय सीमा को छूती हुई कई सड़कें बनाई। इसके अतिरिक्त उसने भारत के लद्दाख प्रदेश में एक सड़क का निर्माण चुपचाप कर लिया ताकि उसे भारत पर हमला करने में आसानी रहे।

(४) पंचशील की उपेक्षा—चीन ने बोडुंग सम्मेलन में भारत के प्रस्ताव को माना था और यह प्रतिज्ञा की थी कि वह सभी प्रकार के

विवादों को शान्तिपूर्वक वार्ता करके निबटायेगा, परन्तु वह अपनी प्रतिज्ञा को भूल गया और उसने उन प्रस्तावों की भी उपेक्षा करदी।

(५) समझौता वार्ता और युद्ध की तैयारी—चीनी प्रधान मंत्री जहाँ एक ओर भारत सरकार से सीमा विवाद को निबटाने के लिए समझौते की वार्ता करते थे वहीं चुपचाप भारतीय सीमा पर फौजें भी जमा करते रहे ताकि भारत समझौता वार्ता में लगा रहे और चीन अचानक आक्रमण कर सके तथा उसने ऐसा ही किया भी। यह उसकी सबसे बड़ी धोखे बाज़ी थी।

(६) युद्ध विराम—चीन ने युद्ध विराम के समय भी धोखे बाजी का काम किया। युद्ध विराम की घोषणा करने के बाद किसी प्रकार का शस्त्र प्रयोग नहीं किया जाता है यह अन्तर्राष्ट्रीय नियम है, परन्तु चीन ने युद्ध विराम की घोषणा करने के बाद भी एक भारतीय फौजी टुकड़ी को घेर कर मार डाला। जिसमें भारत का एक अफसर मेजर होशियार सिंह भी मारा गया।

(७) पाकिस्तान से सन्धि—भारत को नुकसान पहुँचाने की दृष्टि से उसने पाकिस्तान से सैनिक संधि करली है। उसी के इशारों पर पाकिस्तान ने काश्मीर में घुसपैठ करवाई और सशस्त्र हमला किया है। ऐसे समय जब भारत पाकिस्तान से युद्ध में उलझा हुआ है चीन भी मौके का फायदा उठाकर भारत पर आक्रमण करना चाहता है और इसीलिए उसने भारत को अल्टीमेटम दे दिया है।

(८) कोलम्बो प्रस्तावों की उपेक्षा—कोलम्बो प्रस्तावों के अनुसार चीन को सीमा के उन इलाकों से जहाँ उसने जबरदस्ती कब्जा कर रखा था, अपनी सेनाएँ हटा लेनी चाहिये थी, परन्तु पहले तो वह एक न एक बहाने से इस बात को टालता रहा और भारत पर यह आरोप लगाता रहा कि वह प्रस्तावों की उपेक्षा कर रहा है। जब भारत ने अपनी स्थिति स्पष्ट करदी तो उसने दो वर्ष बाद उन्हें स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया।

इस प्रकार चीन ने भारत के साथ ऐसा विश्वास घात किया है जिसका उदाहरण संसार के इतिहास में दूसरा नहीं मिलेगा।

प्रश्न ४—चीन के खतरे पर संक्षेप में अपने विचार प्रकट कीजिये ?

उत्तर—पिछले वर्षों में चीन ने जो कुछ किया उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उसकी नीयत साफ नहीं है । उसके कारण हमारे आर्थिक और राजनैतिक जीवन के लिए एक बहुत गम्भीर खतरा पैदा हो गया है । चीनी अधिकारी छलकपट और बेईमानी से भरे हुए हैं । वे विश्वास घात करने में कभी नहीं चूकते । चीन से हमें निम्नलिखित सभी बातों के लिए सावधान रहने की आवश्यकता है:—

(१) विस्तारवादी नीति—चीन की जनसंख्या ६५ करोड़ के लगभग है परन्तु वहां उपजाऊ भूमि पर्याप्त नहीं है । इस कारण यदा कदा अकाल पड़ते रहते है । चीन इसीलिए अपनी सीमाओं का विस्तार करना चाहता है । इसी कारण उसने भारत की ५० हजार वर्ग मील भूमि पर अपना दावा किया है । उसकी यह भूख सदैव बढ़ती ही जायगी । इसलिए सीमा के सम्बन्धों में उससे कोई भी समझौता लाभदायक सिद्ध नहीं होगा ।

(२) साम्यवाद का खतरा—चीनी सरकार संसार में साम्यवाद का विस्तार चाहती है । इसके लिए वह नीच से नीच उपाय अपनाने को तैयार रहती है । देश में फूट पैदा करना, घुस पैठ करना तथा साम्यवादी पार्टी को रुपया देकर अपनी ओर करना आदि उपाय काम में लेकर वह साम्यवाद फैलाना चाहती है ।

(३) एशिया और अफ्रीका में प्रभाव--चीन एशिया और अफ्रीका में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता है । इसीलिए वह भारत को जगह जगह बदनाम करने का प्रयत्न करता है । दक्षिणी और पूर्वी एशिया में भारत ही एक प्रजातन्त्र देश है और कई छोटे देश, भारत से प्रेरणा प्राप्त करते हैं । इसी कारण चीन भारत से शत्रुता रखता है । वह भारत के प्रभाव को खोदकर अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता है ।

(४) लम्बा युद्ध—चीन की नीति लम्बे समय तक युद्ध में उलझाये रखने की है । उसके पास सैन्य बल अधिक है । तिब्बत में भारतीय सीमापर उसने भारी सेना जमा कर रखी है और काफी मात्रा में अस्त्र-शस्त्र

जमा किये हैं ताकि लम्बे समय तक वह भारत से युद्ध कर सके। उसने अणु बम भी बनाया है जिससे भारत को गम्भीर खतरा है।

(५) पाकिस्तान से संधि—चीन ने पाकिस्तान से सांठ-गांठ कर रखी है। 'शत्रु का शत्रु अपना मित्र होता है' इस सिद्धान्त पर उसने पाकिस्तान को अपनी ओर मिलाया है। उसकी इस सन्धि को स्व० जवाहर लाल जी ने खतरनाक बतलाया था। उनका कथन अब सत्य सिद्ध होगया। हाल में पाकिस्तान ने चीन के इशारों पर जो युद्ध छेड़ा है और चीन ने भी पाकिस्तान का साथ देकर युद्ध की जो धमकी दी है वह भारत के लिए एक बड़ी चुनौती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि चीन ने हमारे लिए अनेकों खतरे पैदा कर दिये हैं। अब आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी एकता को नष्ट न होने दें और मातृ-भूमि की अखंडता के लिए अपना सर्वस्व निछावर करदें।

अध्याय १२

आजादी के बाद का भारत

प्रश्न १—स्वतंत्रता के उपरान्त भारत ने किन क्षेत्रों में उन्नति की? इस पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।

उत्तर—स्वतंत्रता से पूर्व भारत अंग्रेजों के आधीन था। अंग्रेजों ने भारत में उन्हीं कार्यों को प्रोत्साहन दिया जिनसे उनकी जड़ें देश में मजबूत हो सकें। देश उस समय अभावों से घिरा हुआ था। साधारण व्यक्ति को भर पेट भोजन, वस्त्र और मकान का अभाव था। शिक्षा की व्यवस्था ठीक नहीं थी। भारत ने स्वतन्त्र होने के पश्चात् जो असाधारण उन्नति की है वह सराहनीय है। भारत ने निम्नलिखित क्षेत्रों में उन्नति की है—

(१) उद्योगों का विकास—पिछली पंचवर्षीय योजनाओं में सभी प्रकार के उद्योगों का विकास हुआ है। भारी और आधारभूत उद्योगों में तो बहुत ही तेजी से विकास हुआ है। वायुयान, जलयान, मोटरें, रेल के इंजन, मशीनटूल, भारी बिजली का सामान, दवाइयां, इन्जीनिअरिंग का सामान

सभी देश में बनता है। इस प्रकार उद्योगों के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है।

(२) कृषि का विकास—भारत में कृषि का भी काफी विकास हुआ है। लाखों एकड़ बंजड़ और अयोग्य भूमि को उपजाऊ बनाया गया है। जूट, कपास, गेहूँ आदि जिन वस्तुओं के क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये थे उनकी कमी भी अब भारत में ही पूरी की जाती है। वैज्ञानिक ढंग से कृषि के लिए ट्रैक्टर, रासायनिक खाद आदि भी देश में तैयार की जाती है। चौथी योजना के अन्त तक हमारा देश अनाज के मामले में पूर्ण आत्म-निर्भर हो जायगा।

(३) विद्युत् और सिंचाई—स्वतंत्रता के बाद से भारत में सिंचाई की सुविधाएँ बहुत बढ़ गई हैं। ट्यूबवैल का विकास हुआ है। अनेकों बहुउद्देशीय योजनाएँ, जैसे भांकड़ा-नागल, चम्बल, रिहन्द आदि तैयार हुई हैं जिनके कारण सस्ती बिजली और सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हुई है। सिंचाई के लिए कई छोटे बांध भी तैयार हुए हैं जिनसे स्थानीय रूप से सिंचाई की जाती है।

(४) शिक्षा तथा स्वास्थ्य—प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने योग्य उम्र के ७० प्रतिशत बच्चे स्कूल जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों मे माध्यमिक और उच्च माध्यमिक विद्यालय अधिक खोले गये हैं ताकि किसी विद्यार्थी को पढ़ाई के लिए शहरों में चक्कर न काटना पड़े। विश्व विद्यालयों की संख्या पहले से तीन गुणी बढ़ी है। औद्योगिक और प्राविधिक शिक्षा का शतप्रतिशत विकास हुआ है। गाँवों में स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किये गये हैं तथा चिकित्सालयों की संख्या, शैय्याओं की संख्या और डाक्टरों की संख्या मे पर्याप्त वृद्धि हुई है। मलेरिया का उन्मूलन कर दिया गया है।

(५) खनिज सम्पत्ति—भारत की खनिज सम्पत्ति का पता वैज्ञानिक आधार पर लगाया गया है। केन्द्रीय सरकार में खनिज तेल और प्राकृतिक गैस के लिए एक पृथक् मंत्रालय है। राजस्थान और गुजरात में नये तेल के कुओं का पता लगाया गया है। राजस्थान व मध्यप्रदेश में लोहे की खानों का पता लगाया गया है।

(६) कला और संस्कृति—स्वतंत्रता के उपरान्त भारतीय कला और संस्कृति का विदेशों में भी प्रचार किया गया है। अनेकों सांस्कृतिक

प्रतिनिधि मण्डल विदेशों में भेजे गये। साहित्य, कला, और नाटक अकादमियों की स्थापना की गई है। भारतीय संगीत का पुनरुद्धार किया गया है।

(७) नागरिक सुरक्षा—स्वतंत्रता के बाद से राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश की सीमा पर बीहड़ों में बसे हुए डाकुओं का डटकर मुकाबला किया गया तथा अनेकों का सफाया किया गया। बड़े-बड़े शहरों में अपराधों की संख्या में काफी कमी हुई है। भारतीय सेनाओं को सैनिक साजसमान से लैस किया गया है। हमारे सैनिक देश की सीमाओं के सजग प्रहरी हैं।

(८) अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा—स्वतंत्रता के बाद भारत की अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में काफी प्रतिष्ठा बढ़ी है। इसका मुख्य कारण हमारा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व में विश्वास तथा हमारी तटस्थता की विदेश नीति है। भारत सैनिक गुटों से अलग है। इसी कारण अन्य देशों को इस पर विश्वास है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश ने हर क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति की है।

प्रश्न २—भारत को स्वतन्त्रता के उपरान्त किन समस्याओं को हल करने में सफलता मिली? संक्षेप में लिखिये।

उत्तर—स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा है। जब अंग्रेज भारत से गये थे उस समय हमारा देश अनेक अभावों से ग्रस्त था। हमारे नेताओं ने धीरे २ बड़े धैर्य और बुद्धिमानी के साथ उन पर काबू पा लिया है।

(१) शरणार्थी समस्या—अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज्य करो' नीति के कारण भारत के मुसलमान एक पृथक राज्य की मांग करते थे। अंग्रेजों ने उनकी मांग को पूरा किया और देश का विभाजन कर पाकिस्तान का निर्माण किया। पाकिस्तान बनने के बाद वहाँ पर रहने वाले हिन्दुओं पर नृशंस अत्याचार हुए और उन्हें अपना घरबार छोड़कर भारत आना पड़ा। लाखों बेघरबार बेरोजगार शरणार्थियों को बसाना आसान काम नहीं था परन्तु भारत सरकार ने बड़े धैर्य के साथ उनका पुनर्वास किया है। अभी यह समस्या समाप्त नहीं हुई है। पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं का आना अब भी जारी है परन्तु भारत सरकार उन्हें बसाने में भी वैसी ही तत्परता

बरत रही है जैसी कि उसने पश्चिमी पाकिस्तान से आने वालों के साथ वरती थी।

(२) देशी राज्यों की समस्या—अंग्रेजी शासन काल में लगभग ६३५ देशी रियासतें थीं इनमें से कुछ रियासतें जैसे हैदराबाद, मैसूर, जोधपुर आदि काफी बड़ी और सशक्त थीं। ये सभी रियासतें अंग्रेजों के आधीन विभिन्न संधियों के अन्तर्गत थीं। जब अंग्रेज भारत से गये तो वे इन रियासतों को भी स्वतन्त्र कर गये। यदि ये सभी रियासतें उसी प्रकार अपना स्वतंत्र अस्तित्व कायम रखतीं तो हमारा देश आज सैकड़ों छोटे बड़े टुकड़ों में बँटा होता और मध्यकालीन फिर एक बार सामने आ जाता, परन्तु धन्य है लोह पुरुष सरदार पटेल को, जिन्होंने अपनी बुद्धिमता और नीति कुशलता से उन सभी देशी रियासतों को भारत संघ में शामिल कर लिया और देश को संगठित किया। भारतीय इतिहास में उनका यह कार्य स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है।

(३) काश्मीर समस्या—भारत की अन्य रियासतों की तरह काश्मीर की रियासत भी स्वतन्त्र हुई थी। काश्मीर में मुसलमान जनसंख्या अधिक है अतः पाकिस्तान चाहता था कि काश्मीर पाकिस्तान में मिलने की घोषणा करे इसीलिए पाकिस्तान ने उस पर आक्रमण कर दिया और उसके एक भाग पर कब्जा कर लिया परन्तु वहाँ के महाराजा और प्रतिनिधि संस्था नेशनल कांफ्रेन्स ने भारत में मिलने का निर्णय किया जिसके फलस्वरूप भारतीय सेनाएँ काश्मीर में पहुँचीं और पाकिस्तानी सेनाओं को खदेड़ना प्रारम्भ किया। संयुक्त राष्ट्रसंघ के हस्तक्षेप के कारण युद्ध रुक गया तब से काश्मीर के कुछ भाग पर पाकिस्तान का कब्जा है। भारत ने अपने प्रदेश में तीन बार चुनाव कराये हैं और वहाँ की विधान-सभा ने सर्वसम्मत्ति से भारत में मिलने की स्वीकृति दी है परन्तु पाकिस्तान पूरे काश्मीर में विदेशी प्रेक्षकों की देख-रेख में जनमत संग्रह कराना चाहता है इस हेतु उसने काश्मीर पर दुबारा आक्रमण कर दिया है।

(४) फ्रांसीसी और पुर्तगाली प्रदेश—अंग्रेजों के अलावा भारत में चन्द्रनगर, पांडीचेरी और कालीकट पर फ्रांसीसियों का तथा गोवा, दमन, ड्यू, दादरा और नगर हवेली पर पुर्तगालियों का अधिकार था। इन

प्रदेशों के लोग भी स्वतंत्र होकर भारत के साथ रहना चाहते थे। फ्रांस सरकार ने स्वेच्छा से भारतीय प्रदेशों को स्वतंत्र कर दिया। दादरा और नागर हवेली की जनता ने विद्रोह कर दिया और अपनी स्वतंत्र सरकार बनाकर भारत में मिल गये। गोआ आदि के लिए भारत ने बड़े धैर्य से पुर्तगाली सरकार को समझाया जब उसने किसी प्रकार नहीं माना तो सेना की सहायता से इन प्रदेशों को मुक्त कराया गया।

(५) भाषावार प्रान्त—अंग्रेजों ने प्रान्तों का गठन शासन की सुविधा के लिए किया था। कांग्रेस ने स्वतंत्रता से पूर्व ही घोषणा कर दी थी कि वह भाषा के आधार पर प्रान्तों की रचना के पक्ष में है। भारत स्वतंत्र होने के बाद यह मांग जोर पकड़ने लगी। अन्ततः एक आयोग की स्थापना की गई और भाषा के आधार पर प्रान्तों का पुनर्गठन हुआ है यद्यपि पंजाब के कुछ सिक्ख एक पृथक पंजाबी सूबे की मांग करते हैं परन्तु वहाँ के हिन्दू पंजाबी सूबे के विरोध में हैं। इस बार अभी द्विभाषा सिद्धांत ही चल रहा है।

(६) राष्ट्र भाषा की समस्या—स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के कर्णधारों ने यह महसूस किया कि देश की एक राष्ट्र भाषा होनी चाहिये तथा इसके लिए हिन्दी को सर्वसम्मति से चुना गया और अंग्रेजी को बदल कर हिन्दी को लाने के लिए १५ वर्ष का समय नियत किया गया। परन्तु इस दिशा में पूरी लगन से काम नहीं किया गया इसीलिए जब सन् १९६५ में २६ जनवरी को हिन्दी में कार्य प्रारम्भ करना था। मद्रास व बंगाल में भीषण हिन्दी विरोधी प्रदर्शन हुआ इस कारण हिन्दी के प्रश्न को अनिश्चित काल के लिए टाल दिया गया है तथा भविष्य के लिए त्रिभाषा फार्मूला स्कूलों में पढ़ाई के लिए स्वीकार किया गया है ताकि दक्षिण के लोग हिंदी सीख सकें और उत्तर के लोग दक्षिण भारतीय भाषा सीख सकें। आशा है इससे हिन्दी का विरोध समाप्त हो जायगा और राष्ट्र भाषा का प्रश्न हल हो जायगा।

(७) राष्ट्रीय एकता—हमारे देश में सभी सम्प्रदायों के लोग रहते हैं तथा अनेक प्रकार की बोलियाँ बोली जाती हैं इसीलिए समय-समय पर प्रश्नों को लेकर जनता में कटुता पैदा हो जाती है। दक्षिण में द्रविड़ मुनेत्र कजगम एक स्वतंत्र राज्य चाहता है। आसाम में नागा लोग भारत

से पृथक राज्य चाहते हैं उधर पंजाब के कुछ सिक्ख पंजाबी सूबे की माँग करते हैं। कजगम को स्वतंत्र राज्य का जनता से समर्थन नहीं मिला इसलिए उसने स्वतंत्र राष्ट्र की माँग को छोड़ दिया। आसाम में पृथक नागालैंड नाम का राज्य स्थापित किया गया है। पंजाब में भाषा के प्रश्न पर रीजनल फार्मूला स्वीकार किया है।

(८) आर्थिक समस्या—अभावों से ग्रस्त इस देश में गरीबी भी एक समस्या है। आबादी की वृद्धि ने इसे और भी जटिल बना दिया है। अतः आर्थिक दशा को सुधारने के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ बनाई गई हैं जिनसे कृषि, उद्योग और व्यापार मे उन्नति हुई है। कुछ लोगों का ख्याल है कि राष्ट्रीय आय में जो वृद्धि हुई है उसका वितरण समान नहीं है इसके लिए कमेटी बैठाई गई है जो इस सम्बन्ध में रिपोर्ट पेश करेगी।

इस प्रकार हमारी सरकार ने अनेकों समस्याओं को सुलझाया है।

प्रश्न ३—स्वतंत्र होने के उपरान्त भारत की सफलताओं और असफलताओं का लेखा जोखा कीजिए।

उत्तर—स्वतंत्र होने के उपरान्त भारत को अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ा है इनमें से कुछ में उसने सफलता प्राप्त की है तथा कुछ में उसे सफलता नहीं मिली है।

सफलताएँ—

(१) शरणार्थी समस्या को हल कर लिया गया और शरणार्थियों को भली प्रकार बसा दिया गया है।

(२) देशी राज्यों को भारत संघ में शामिल कर लिया गया और देश की एकता को सुदृढ़ किया गया।

(३) फ्रांस और पुर्तगाल के आधीन प्रदेशों को भारत में शामिल कर लिया गया।

(४) देश में लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए विस्तृत विधान बनाया गया जिसका लक्ष्य समाजवादी जनतन्त्र की स्थापना करना है अन्य देशों के मुकाबले भारत में जनतत्र सफल रहा है।

(५) भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया गया है।

(६) देश का आर्थिक विकास बडी तेजी से हुआ है और राष्ट्रीय में वृद्धि हुई है।

(७) अनुसूचित और पिछड़ी हुई जातियों को आगे बढ़ाया गया है। छुआ-छूत को समाप्त किया गया है।

(८) विज्ञान और तकनीकी शिक्षा का विकास हुआ है। अणुशक्ति शान्तिकालीन प्रयोग करने के लिए अणु ताप भट्टियां बनाई गई हैं।

(९) कला साहित्य और संस्कृति का विकास हुआ है और विदेशों में इसका प्रचार हुआ है।

(१०) अशिक्षा दूर हुई है और चिकित्सा सुविधाएं बहुत अधिक बढ़ गई हैं।

असफलताएं—

(१) काश्मीर का प्रश्न पूरी तरह हल नहीं हुआ है। काश्मीर के एक भाग पर पाकिस्तान का कब्जा है दूसरे भाग पर चीन ने कब्जा कर रखा है।

(२) राष्ट्र भाषा का प्रश्न उलझा पड़ा है। आज भी देश में अंग्रेजी का साम्राज्य है।

(३) विदेशों में रहने वाले भारतीयों के हितों की रक्षा करने में भारतीय सरकार असफल रही है।

(४) चीन के साथ मित्रता बनाए रखने में भारत ने जबरदस्त धोखा खाया है। लद्दाख के कुछ भाग पर चीनियों का जबरदस्ती कब्जा है।

(५) राष्ट्रीय आय में यद्यपि वृद्धि हुई है परन्तु आय का समान वितरण नहीं हुआ है। गरीब अधिक गरीब हुए हैं और धनी अधिक धनी।

(६) देश से भ्रष्टाचार का पूरी तरह सफाया नहीं किया जा सका है तथा इस सम्बन्ध में सारी कोशिशें बेकार साबित हुई हैं।

(७) आर्थिक योजनाओं के बावजूद देश में मँहगाई और बेरोजगारी बेहद बढ़ गई है।

(८) राष्ट्रीय एकता को नष्ट करने वाले तत्वों का दृढ़ता से दमन नहीं किया गया है बल्कि उनसे समझौता वार्ता की गई है।

(९) देश पर विदेशों का अरबों रुपयों का ऋण भार बढ़ा है इसे चुकाना भी एक समस्या है क्योंकि इससे मँहगाई बढ़ेगी।

(१०) भारत की तटस्थतावादी विदेश नीति यद्यपि सिद्धांतः अच्छी है परन्तु इससे मित्र देशों की संख्या नहीं बढ़ी है। आज जब पाकिस्तान ने हमारी सीमा पर हमला किया है तब भी पाकिस्तान को स्पष्ट हमलावर संयुक्त राष्ट्र संघ घोषित नहीं कर पाया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कुछ क्षेत्रों में हमारी नीतियां सफल हुई हैं परन्तु कुछ में असफल हुई हैं।

चौथा भाग

आज की अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ

अध्याय १

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता

प्रश्न १--उन कारणों की व्याख्या कीजिए जिनके कारण अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सम्पर्क आज आवश्यक और अनिवार्य हो गया है ?

उत्तर—आज का युग विज्ञान का युग है। विज्ञान के कारण ही अन्तर्राष्ट्रीय युग का जन्म हुआ, प्रत्येक राष्ट्र के मध्य आपसी सम्पर्क बढ़ता जा रहा है। इस सम्पर्क ने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृति जीवन में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिये हैं। ऐसी स्थिति में हमें यह जानना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सम्पर्क किन कारणों से अधिक बढ़ गया है।

१. वैज्ञानिक आविष्कार की अधिकता—मानव ने विज्ञान की सहायता से दूरी पर पूर्णरूप से विजय प्राप्त करली है। प्रारम्भ में उसका कार्य-क्षेत्र अत्यन्त सीमित था। वह अपने देशवासियों से ही परिचित था और उनके साथ ही लेन-देन करता था। व्यापार थोड़ा बहुत काफिलों द्वारा किया जाता था। प्राचीन काल में मनुष्य की आवश्यकताएँ सीमित थीं। उसका जीवन अत्यन्त सरल और साधारण था। आज स्थिति पूर्ण रूप से बदल गई है। संदेशवाहन के साधनों ने मानव को एक दूसरे के निकट ला दिया है। रेल, डाक, तार, वायुयान, रेडियो, टेलीफोन, टेलीविजन और समाचार पत्र आदि ने दूरी को समाप्त कर दिया है। आज संसार के किसी भी भाग में होने वाली घटना के विषय में तुरन्त जानकर प्राप्त कर लेते हैं। यह सब विज्ञान का चमत्कार है।

२. औद्योगिक क्रांति का प्रभाव—विद्युत् और यन्त्रों के आविष्कार के कारण उत्पादन के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन होगये हैं। कुटीर व्यवसाय का स्थान कल कारखानों ने ग्रहण कर लिया है। कल-कारखानों से वस्तुओं का उत्पादन अधिक मात्रा में होने लगा है। समाज में एक नवीन वर्ग, पूँजीपति वर्ग का जन्म हुआ। उसने निर्बल राष्ट्रों का शोषण करने की योजना बनाई। १९ वीं शताब्दी में साम्राज्यवाद का जन्म हुआ। उन्होंने पिछड़े हुए देशों से कच्चा माल खरीदकर उन्हें तैयार माल भेजना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार आत्म-निर्भरता का अन्त हुआ और प्रत्येक राष्ट्र को अपनी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने लिए अन्य राष्ट्रों पर निर्भर रहना पड़ा। इस प्रकार संसार का प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी रूप में अन्तर्निर्भर होगया।

३. आर्थिक परस्पर निर्भरता का जन्म—आर्थिक दृष्टिकोण से भी एक देश दूसरे देश पर आधारित है। उदाहरण के लिए यदि अमेरिका में कपास की फसल ठीक नहीं हो, तो हमारे देश में कपास की अच्छी फसल होने पर भी कपास का मूल्य बढ़ जाता है। ठीक उसी प्रकार यदि कनाड़ा में गेहूँ कम मात्रा में हों, तो उसका प्रभाव संसार के सम्पूर्ण गेहूँ बाजार पर पड़ेगा। इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी एक विशाल बाजार के रूप में परिवर्तित होगई है। किसी भी देश की घटना का प्रभाव सम्पूर्ण राष्ट्रों पर पड़े बिना नहीं रह सकता है। कोरिया के युद्ध का प्रभाव विश्व के सभी राष्ट्रों पर पड़ा। इस प्रकार आर्थिक निर्भरता ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क को बढ़ाया है।

४. महायुद्धों का प्रभाव—संसार में दो महायुद्ध प्रथम और द्वितीय हुए, जिन्होंने समूचे विश्व को पूर्ण रूप से प्रभावित किया। प्राचीन काल में सेनाएँ खेतों के निकट होकर गुजर जाती थीं, परन्तु फिर भी कृषक अपने काम में लगे रहते थे। आज का युद्ध अत्यन्त भयंकर होता है, जिसका प्रभाव प्रत्येक राष्ट्र पर पड़ता है। युद्ध के काल में केवल सेना ही भाग नहीं लेती है, अपितु वैज्ञानिक, उद्योगपति, बूढ़े, स्त्री, बच्चे आदि सभी को किसी न किसी रूप में जुटना पड़ता है। बम वर्षा से कोई सुरक्षित नहीं बच सकता हैं। इस समय तो भयंकर अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण किया जा चुका है, जिन्हें बटन से दबाकर प्रत्येक वस्तु को

सरलतापूर्वक तहस-तहस किया जा सकता है। हाइड्रोजन बम और राकेट आदि के द्वारा सम्पूर्ण मानव जाति को तत्काल ही नष्ट किया जा सकता है। ऐसी विषम परिस्थियों को दृष्टिगत रखते हुए विश्व के २४ तटस्थ राष्ट्रों ने मिलकर अस्त्र-शस्त्र निर्माण की प्रतियोगिता पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए विचार विमर्श किया। ऐसी स्थिति को देखते हुए आज प्रत्येक क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

५. अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग—कुछ समय में ही अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की भावना विशेष रूप से बल पकड गई है और निरन्तर इसका विकास हो रहा है। राष्ट्रसंघ और सयुक्त राष्ट्रसंघ आदि संस्थाओं का निर्माण सहयोग के आधार पर ही किया गया। सरकारी और गैर सरकारी दोनों संस्थाओं के द्वारा ही सम्पर्क बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। रेडक्रास जैसी लोक हितकारी संस्था की स्थापना मानव-कल्याण के दृष्टिकोण से की गई है। हम आज केवल अपने देश की समस्याओं को हल करने के लिए ही उत्तरदायी नही हैं, अपितु विश्व समस्याओं के प्रति भी हमारा उत्तरदायित्व है।

उपर्युक्त परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि वैज्ञानिक आविष्कारों और औद्योगिक क्रांति ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क को बढ़ाया है। प्रत्येक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर किसी रूप में निर्भर है। वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अकेला किसी भी रूप में नहीं कर सकता है। यही कारण है कि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग नित्य प्रति बढ़ता जा रहा है।

प्रश्न २—आप इस मत से कहाँ तक सहमत हैं कि आज वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण दुनियाँ छोटी हो गई है ?

उत्तर—वर्तमान युग विज्ञान का युग है। वैज्ञानिक आविष्कारों की बढ़ती हुई संख्या ने विश्व की स्थिति में आमूल परिवर्तन कर दिये हैं। ।ज सम्पूर्ण विश्व एक छोटा सा स्थान बन गया है। इस कथन की पुष्टि ।लिखित आधारों पर की जा सकती है—

१. दूरी पर विजय—आज मनुष्य ने प्रकृति की तीन शक्तियाँ स्थल, जल और थल पर पूर्णरूप से विजय प्राप्त करली है। आज मनुष्य यातायात के शीघ्रगामी साधन जैसे मोटर, रेल, जलयान और वायुयान

आदि का निर्माण कर लिया है, जिनकी सहायता से वह किसी भी स्थान पर सरलतापूर्वक कम समय में आ जा सकता है।

२. सन्देश वाहन के साधन में वृद्धि—दूरी को समाप्त करने में सन्देशवाहन के साधन भी महत्वपूर्ण माने जाते हैं। आज मनुष्य के पास तार, केबिल, वायरलेस, रेडियो, टेलीफोन, टेलीप्रिन्टर और टेलीवीजन जैसे अनेक महत्वपूर्ण साधन हैं, जिनकी सहायता से वह विश्व के किसी भी भाग में होने वाली घटनाओं के विषय मे जानकारी प्राप्त कर सकता है। सम्पूर्ण विश्व में सन्देशवाहन के साधनों का जाल इस प्रकार फैल गया है कि कोई भी राष्ट्र अपने आपको अलग नहीं रख सकता है।

३. विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण—विज्ञान ने मानव का हित तो किया ही है, परन्तु इसके साथ ही विनाशकारी यन्त्र जैसे अणुबम, हाईड्रोजन बम, राकेट आदि का निर्माण कर मानव जाति को विनाश के मार्ग पर खड़ा कर दिया है। इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी अत्यन्त छोटी हो गई है। कोई भी व्यक्ति युद्ध के प्रभाव से नहीं बच सकता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण दूरी का कोई महत्व नहीं रहा है। आज सम्पूर्ण विश्व एक स्थान बन गया है।

अध्याय ८

युद्धों की विभीषिका

प्रश्न १—वर्तमान समय में युद्ध का स्वरूप अधिक भयंकर क्यों हो गया है? विस्तारपूर्वक लिखिये।

उत्तर—युद्ध प्राचीन काल से चले आ रहे हैं, उनका रूप चाहे कुछ भी रहा हो। राज्य विस्तार की इच्छा, सम्मान बढ़ाना, अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए व धन एकत्रित करने के लिए एक शासक दूसरे शासक पर आक्रमण करता था और युद्ध होते रहते थे। प्रारम्भिक युद्ध इतने भयंकर और विश्वव्यापी नहीं थे। सेनाएँ खेतों के पास

से निकल जाती थीं, परन्तु कृषक निर्भीक रूप से अपने कार्यों में लगे रहते थे। युद्ध का प्रभाव केवल शासकों तथा सामन्तों तक ही सीमित था और उसका साधारण जनता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था।

१. आधुनिक काल में युद्ध—वर्तमान काल में युद्ध का स्वरूप पूर्ण रूप से परिवर्तित हो गया है। आज के युद्ध का प्रभाव सम्पूर्ण विश्व पर पड़ता है और कोई भी राष्ट्र इसके प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता है। वैज्ञानिक आविष्कारों तथा संदेशवाहन के आधुनिक साधनों ने सम्पूर्ण विश्व को एक स्थान बना दिया है। यही कारण है कि वर्तमान युद्धों का रूप सर्वव्यापी हो गया है।

२. भयंकर अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण—प्राचीन काल में अस्त्र-शस्त्र इतने भयंकर नहीं थे, जितने कि आज हो गये हैं। आज तो विज्ञान की सहायता से अणुबम, हाईड्रोजनबम, बमवर्षक, राकेट जैसे विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण किया जा चुका है। इन यन्त्रों से क्षण भर में मानव जाति का संहार किया जा सकता है। हिरोशिमा और नागासाकी में अणुशक्ति ने जो हृदय-विदारक दृश्य प्रस्तुत किया है, वह मानव जाति के लिए सदैव को एक अमिट कलंक रहेगा। यहाँ मनुष्यों को चने और मटर के समान भून दिया गया। सम्पूर्ण वातावरण इतना जहरीला हो गया है कि इतना समय व्यतीत हो जाने पर भी न वहाँ वनस्पतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं और न कोई प्राणी जीवित ही रह सकता है। आज तो रूस और अमेरिका जैसे शक्तिशाली राष्ट्रों का यह दावा है कि वे क्षण भर में ही बटन दबाते ही आधे विश्व को तहस-नहस कर सकते हैं। विज्ञान ने मनुष्य को इतनी विनाशकारी शक्तियाँ प्रदान करदी हैं, कि यदि इनका प्रयोग युद्ध-क्षेत्र में नहीं रोका गया, तो मानव जाति का विनाश किसी न किसी दिन :१२५ हो जायेगा।

३. महायुद्धों का सर्वव्यापी प्रभाव—बीसवीं शताब्दी में संसार को दो महायुद्धों के मध्य होकर गुजरना पड़ा है। युद्धों की कल्पना मात्र से मानव का हृदय कांप उठता है। इन महायुद्धों के कारण मानव के खून से होली खेली गई है, लाखों व्यक्ति बेघर हो गये। सभ्यता और संस्कृति का पतन हो गया है, तथा औद्योगिक विकास भी अवनति की ओर अग्रसर हो गया है। ऐसी परिस्थितियों का हल आज भी नहीं निकाला जा

सका है। बहुत देश तो आज फिर से उठने का साहस भी नहीं कर सके हैं।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वैज्ञानिक आविष्कारों और नरसंहारी अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण ने युद्ध के क्षेत्रों को अत्यन्त व्यापक बना दिया है। उसका स्वरूप अत्यन्त भयंकर हो गया है। संसार आज तृतीय महायुद्ध की सम्भावना से भयभीत है। अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण तीव्रगति से किया जा रहा है और शक्तिशाली राष्ट्र रूस अणु-शक्ति का परीक्षण करने में व्यस्त है। हानिकारक अस्त्र-शस्त्र निर्माण की होड़ चल रही है। विभिन्न राष्ट्रों के द्वारा गुप्त सैनिक संधियाँ की जा रही हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण विश्व दो गुटों में विभाजित हो गया है।

(क) साम्यवादी गुट—इस गुट का नेता रूस है, जो साम्यवादी विचारधारा को फैलाने के लिए प्रयत्नशील है।

(ख) पूँजीपति गुट—इस गुट का नेता अमेरिका है, जो धन के प्रभाव में अन्य राष्ट्रों को रखना चाहता है।

दोनों एक दूसरे से आशंकित हैं। एक दूसरे को अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं। मानव जाति पतन की उस दीवार पर बैठी हुई है, जो किसी भी समय गिर सकती है। आगामी युद्ध इतना भयंकर और सर्वव्यापी होगा, जिसके प्रभाव से कोई भी राष्ट्र अछूता नहीं रह सकेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि युद्ध का स्वरूप अत्यन्त भयंकर और क्षेत्र सर्वव्यापक हो गया है।

प्रश्न २—प्रथम महायुद्ध के परिणामों का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

उत्तर—प्रथम महायुद्ध यद्यपि समाप्त हो गया, परन्तु उसका प्रभाव अत्यन्त व्यापक रहा। जिन राष्ट्रों ने इस युद्ध में भाग लिया था, उनकी स्थिति तो खराब हो ही गई, परन्तु इसके साथ ही उन राष्ट्रों पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ा, जिन्होंने युद्ध में कोई भाग नहीं लिया था। इस महायुद्ध के निम्नलिखित प्रभाव पड़े :—

१. यूरोप का छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित हो जाना—प्रथम महायुद्ध से पूर्व यूरोप में बड़े राज्य थे, परन्तु महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् २२ छोटे राज्यों की स्थापना की गई और केवल ६ विशाल राज्य रह गये।

२. प्रजातन्त्र शासन का विकास—इस महायुद्ध के कारण यूरोप की राजनीति में आमूल परिवर्तन हो गये। राजतन्त्र के स्थान पर प्रजातंत्र शासन का विकास हुआ। जर्मनी, रूस, आस्ट्रेलिया, लुथुनियाँ और एस्थोनिया आदि देशों में प्रजातंत्र सरकारों की स्थापना की गई।

३. अपराधों की वृद्धि—विश्व के युद्ध का मानव के नैतिक जीवन पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। यूरोपीय देशों मे अपराध प्रवृत्ति का विकास हुआ और जनता का नैतिक पतन हो गया।

४. नवीन वादों का जन्म—प्रथम महायुद्ध के कारण नवीन वादों का जन्म हुआ। समाजवाद का विकास हुआ और इसके अतिरिक्त जर्मनी में नाजीवाद और इटली मे फासिस्टवाद का जन्म हुआ। इस प्रकार एक बार पुनः यूरोप मे सैनिकवाद का जन्म हुआ।

५. अमेरिका का उत्कर्ष—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् अमेरिका यूरोप में प्रथम श्रेणी का राष्ट्र बन गया। यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों पर उसका १२,०००,०००,००० डालर कर्ज हो गया और नित्य प्रति व्यापारिक विकास होता गया।

६. अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीयता का विकास हुआ। विश्व शान्ति स्थापित करने और भावी युद्धों की सम्भावनाओं को रोकने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संस्था राष्ट्रसंघ का जन्म हुआ।

७. जापान का शक्तिशाली राष्ट्र बनना—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् जापान की शक्ति का निरन्तर विकास होता गया और परिणाम यह निकला कि जापान विश्व का एक शक्तिशाली राष्ट्र बन गया।

८. शक्ति-संतुलन सिद्धांत की समाप्ति—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् शक्ति संतुलन सिद्धांत की समाप्ति हो गई। यूरोप के प्रमुख राष्ट्रों ने इस सिद्धांत का डटकर मुकाबला किया। इंगलैंड जो कि इसका जन्मदाता था, वही साम्राज्यवादी भावना का शिकार बन गया।

९. सामाजिक सुधार—उत्पादन बढ़ जाने के कारण अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई। समाज दो गुटो मे बँट गया—(क) पूँजीपति (ख) मजदूर गुट। इस प्रकार वर्ग संघर्ष की प्रधानता हो गई।

सरकार को मजदूर हित कानूनों का निर्माण करना पड़ा। स्त्रियों की स्थिति में आमूल परिवर्तन हो गये। उन्हें सरकारी पदों पर नियुक्त किया जाने लगा और उन्हें राजनीति में भी भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रथम महायुद्ध का विश्व के सभी राष्ट्रों पर गहरा प्रभाव पड़ा। इसने अनेक विषम समस्याओं को जन्म दिया, जिन्हें हल करने के लिए विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

प्रश्न ३—प्रथम महायुद्ध के उपरान्त अधिनायकवाद का उदय क्यों हुआ? कारण सहित लिखिये।

उत्तर—प्रथम महायुद्ध से यूरोप में एक नवीन वाद का जन्म हुआ, जिसे अधिनायकवाद कहते हैं। इस शासन प्रणाली को प्राचीन निरंकुश राजतन्त्र का वर्तमान रूप कह सकते हैं। अधिनायकवाद के विकास के निम्नलिखित कारण थे:—

१. भीषण आर्थिक कठिनाइयाँ—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् संसार के प्रमुख राष्ट्रों को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। सब ओर अशान्ति और असन्तोष का वातावरण उपस्थित हो गया। सब ओर निर्धनता फैल रही थी। जनता का जीवन नीरस और दुःखमय हो गया था।

२. जनतन्त्र का धीमा मार्ग—आर्थिक कठिनाइयों के कारण जनसाधारण का जीवन अत्यंत दुखी था। उस समय एक ऐसे शक्तिशाली व्यक्ति की आवश्यकता थी जो शान्ति और व्यवस्था स्थापित कर सके, तथा जनता के दु:खों को शीघ्रता से दूर कर सके। जनतन्त्र का मार्ग धीमा था और सामाजिक सुरक्षा और आर्थिक विकास का कार्य शीघ्रता से पूरा नहीं हो सकता था। जनता अधीर हो उठी थी और शीघ्रता से परिवर्तन चाहती थी। ऐसी स्थिति में अमेरिका, इंगलैंड और फ्रांस के अतिरिक्त अन्य सभी राष्ट्रों ने अधिनायकवाद को स्वीकार किया।

६ रूस, चीन, जापान, इटली और जर्मनी में अधिनायकवाद का जन्म—प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् रूस में जारशाही के स्थान पर सर्वहारा वर्ग का, इटली में मुसलीनी की फासिस्ट सरकार, टर्की

में मुस्तफा कमाल पाशा की और ईरान में रजाशाह पसलवी ने निरंकुश राजतन्त्र को जन्म दिया। इसके अतिरिक्त चीन में च्यांगकाई शेक, जापान में सैनिक अधिनायकवाद का और जर्मनी में हिटलर ने नाजीवादी सरकार की स्थापना की। हिटलर और मुसोलीनी दिन-रात अपनी शक्ति बढ़ाने में लगे रहे। उन्होंने अपने साम्राज्य विस्तार की व्यापक योजनाएं बनाईं और इनके परिणामस्वरूप ही द्वितीय महायुद्ध का जन्म हुआ, जिसका विश्व में सभी राष्ट्रों पर गहरा प्रभाव पड़ा।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यूरोप की तत्कालीन परिस्थितियों ने अधिनायकवाद को जन्म दिया, जिसके हाथ में द्वितीय महायुद्ध तक सम्पूर्ण सत्ता रही और इसके पश्चात् उनका पतन हो गया।

प्रश्न ४—दूसरे महायुद्ध के कारणों और परिणामों का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

उत्तर—प्रथम महायुद्ध यद्यपि वार्साई की संधि के पश्चात् समाप्त अवश्य हो गया था, परन्तु इसके बाद ही यूरोप में एक बार पुनः अधिनायकवाद का जन्म हुआ, सैनिक शक्ति का विकास हुआ। उग्र राष्ट्रीयता, उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गई थी। ऐसी स्थिति में युद्ध का होना अनिवार्य हो गया। युद्ध की यह भयंकर लहर १६३६ में फूट निकली। द्वितीय महायुद्ध होने के निम्नलिखित कारण थे—

१. **तानाशाही के विरुद्ध प्रतिक्रिया**—प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अमेरिका, इङ्गलैंड और फ्रांस को छोड़कर शेष सभी राष्ट्रों में तानाशाही शासन व्यवस्था का जन्म हो गया था। वह स्थिति अधिक समय तक चलने वाली नहीं थी क्योंकि पश्चिमी राष्ट्रों में इसके विरुद्ध प्रतिक्रिया होने लगी थी।

२. **साम्राज्यवादी भावना**—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् सम्राज्यवादी भावना का नित्य प्रति विस्तार हो रहा था। जर्मनी, इटली और जापान आदि राष्ट्र केवल अपनी सीमा में ही जनतांत्रिक भावनाओं को कुचलकर संतुष्ट नहीं हुये थे। वे बाहर भी अपना प्रभाव जमाने में लगे हुए थे।

औद्योगीकरण की होड़—जर्मनी, इटली और जापान तो

औद्योगिक क्षमता को बढ़ाने में लगे हुए थे, परन्तु इसके अतिरिक्त अन्य राष्ट्र भी औद्योगिक भाग-दौड़ में पीछे नहीं रहना चाहते थे। जर्मनी की साम्राज्यवादी भूख इतनी अधिक बढ़ गई थी कि उसे शांत करने के लिए युद्ध का होना अनिवार्य हो गया था।

४. वार्साई की आरोपित संधि—प्रथम महायुद्ध की समाप्ति यद्यपि वार्साई की संधि से हो गई थी, परन्तु वास्तव में देखा जाये तो यह एक आरोपित संधि थी, जिसका एक मात्र लक्ष्य जर्मनी का राजनैतिक और आर्थिक शोषण करना था। तत्कालीन परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए जर्मनी को इसे स्वीकार करना पड़ा था। हिटलर ने इस आरोपित संधि को ठुकरा दिया और शक्ति की परीक्षा के लिये अपनी सैनिक सत्ता बढ़ाने लगा।

५. जर्मनी की भयंकर राष्ट्रवादी भावना—जर्मनी प्रथम महायुद्ध के पश्चात् अपने साथ किये हुए अपमान और दुर्व्यवहार को भूला नहीं था। उसने अपनी उग्र राष्ट्रवादी भावना को फैलाने के लए अपनी सैनिक शक्ति का विकास किया। ऐसी विषम परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए युद्ध का होना अनिवार्य हो गया था।

६. इङ्गलैंड और फ्रांस की संतुष्टीकरण की नीति—जर्मनी और इटली निरन्तर अपने साम्राज्य को बढ़ाने में लगे हुए थे। इन दोनों राष्ट्रों की भूख साम्राज्यवादी भूख निरन्तर बढ़ती जा रही है। इङ्गलैंड ने जर्मनी को और फ्रांस ने इटली को संतुष्ट रखने की नीति को ग्रहण किया। इटली ने यथोपिया पर और जर्मनी ने आस्ट्रिया पर अधिकार कर लिया। परन्तु दोनों राष्ट्र अर्थात् इङ्गलैंड और फ्रांस चुप रहे। हिटलर का साहस निरन्तर बढ़ता ही गया।

७. हिटलर द्वारा पोलैंड पर आक्रमण—द्वितीय महायुद्ध का प्रमुख कारण हिटलर द्वारा डानजिग की समस्या को हल करना था। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उसने पोलैंड पर आक्रमण कर दिया तथा इसके दो दिन पश्चात् उसने इङ्गलैंड और फ्रांस के विरुद्ध भी युद्ध की घोषणा करदी।

८ राष्ट्रसंघ की असफलता—प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर विश्वशांति को बनाये रखने के लि‍ए राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई परन्तु

वह भी अपने उद्देश्य में असफल रहा। वह यूरोप में बढ़ते हुए सैनिकवाद को रोकने में असमर्थ रहा।

उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण द्वितीय महायुद्ध छिड़ गया, जिसका विश्व के प्रमुख राष्ट्रों पर गहरा प्रभाव पड़ा।

९. **युद्ध का प्रभाव**—द्वितीय महायुद्ध के निम्नलिखित प्रभाव प्रमुख माने जाते है—

(क) **सामाजिक व आर्थिक जीवन पर प्रभाव**—द्वितीय महायुद्ध के कारण धन और जन की महान् हानि हुई। इस युद्ध में लगभग दो करोड़ व्यक्ति मारे गये। मजदूरों का मिलना एक कठिन समस्या बन गई। अमेरिका का पूर्ण रूप से विकास हुआ। पूँजीवाद की प्रधानता हुई। विश्व दो गुटों मे विभाजित हो गया— (१) पूँजीपति गुट—जिसका नेता अमेरिका बन गया। (२) साम्यवादी गुट– जिसका नेता रूस बन गया।

(ख) **इटली में प्रजातन्त्र की स्थापना**—मित्र राष्ट्रों ने इटली को पराजित किया परन्तु वहाँ साम्यवाद का जन्म हुआ। इस प्रकार वहाँ दलबन्दी का जन्म हुआ। मित्र राष्ट्रों की सहायता से साम्यवादी दल की पराजय हुई और प्रजातन्त्र सरकार की स्थापना की गई।

(ग) **जर्मनी का विभाजन**– जर्मनी जो युद्ध का प्रमुख कारण था, उसे इङ्गलैंड, फ्रांस, रूस और अमेरिका के मध्य बांट लिया गया। जर्मनी नेताओं पर खुले रूप से मुकदमा चलाया गया। यह एक विश्व की अनोखी घटना मानी जाती है।

(घ) **जापान में राजतन्त्र की समाप्ति**—जापान में भी राजतन्त्र की समाप्ति हो गई और प्रजातन्त्र शासन की स्थापना हुई। यह जापान में प्रथम अवसर था।

(ङ) **अमेरिका का शक्तिशाली होना**—द्वितीय महायुद्ध ने अमेरिका में औद्योगिक विकास किया जिससे वह विश्व का समृद्धिशाली राष्ट्र बन गया।

(च) **भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति**—इस महायुद्ध की समाप्ति पर इङ्गलैंड में पुनः चुनाव हुए, जिसमे चर्चिल दल की पराजय हुई और मजदूर दल विजयी हुआ। उन्होंने भारतवासियों को स्वतंत्रता प्रदान करदी।

(छ) चीन में साम्यवादी सरकार की स्थापना—द्वितीय महायुद्ध के समय चीन ने मित्र राष्ट्रों को सहयोग दिया था। वहाँ का राष्ट्रपति च्यांगकाई शेख अमेरिका की शक्ति पर आधारित था। रूस ने साम्यवाद को प्रोत्साहन दिया। चीन में गृह-युद्ध का जन्म हुआ। उसे फारमोसा में शरण लेनी पड़ी। रूस की सफलता में साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई।

(ज) संयुक्त राष्ट्रसंघ का जन्म—विश्वशांति की समस्या को हल करने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना २४ अक्टूबर, १९४५ को की गई।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि द्वितीय महायुद्ध ने क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिये जिसका प्रभाव सम्पूर्ण विश्व पर पड़ा।

प्रश्न ५—क्या यह सत्य है कि यदि तीसरा महायुद्ध हुआ तो मानव जाति का विनाश होगा ? तर्क सहित लिखिये।

उत्तर—आज संसार दो सैनिक गुटों में विभाजित है। एक गुट का नेता सोवित रूस है तो दूसरे गुट का नेतृत्व संयुक्त राज्य अमेरिका के हाथ में है। सभी देश सैनिक गुटबन्दी कर रहे हैं तथा सैनिक तैयारी बड़े जोरों से चल रही है। अणुबमों के परीक्षण किये जा रहे हैं। अणुबम रूस और अमेरिका के अतिरिक्त इङ्गलैण्ड, फ्रांस के पास भी हैं। निःशस्त्रीकरण के प्रयास सभी असफल हो रहे हैं। इधर एशिया में चीन की विस्तारवादी नीति का खतरा दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। पूर्वी व पश्चिमी जर्मनी का एकीकरण का प्रश्न भी शान्तपूर्ण ढंग से नहीं सुलझ रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय तनाव दिन पर दिन बढ़ते जा रहे हैं। सब कुछ होते हुये भी विवेकशील मनुष्य पंचशील का प्रचार कर रहे हैं। शान्ति स्थापित किये रखने की कोशिशें की जा रही हैं।

आज विश्व के पास अनेकों प्रलयकारी साधन हैं उनमें अणुबम, राकेट हाइड्रोजन बम, विनाशकारी गैसें, मिसाइल, तारपीडो आदि एक क्षण में ही विश्व का विनाश कर सकते हैं। तनिक सी असावधानी होने पर तृतीय महायुद्ध हुये बिना नहीं रुक सकता। युद्ध होने पर कोई भी इसकी लपट से बच नहीं सकता। मानव संस्कृति व सभ्यता का नाश हो जायेगा। विश्व युद्ध के किनारे पर खड़ा है। यदि विश्वशान्ति का प्रयास न किया

गया तो मानव जाति समूल नष्ट हो जायेगी। हिरोशिमा और नागासाकी का उदाहरण हमारे समक्ष है जहाँ पल भर में निर्दोष नर, नारी, बच्चे काल के मुख में चले गये।

प्रश्न ६—तीसरे महायुद्ध की आशंका किन कारणों से है? संक्षेप में लिखिये।

उत्तर—तीसरे महायुद्ध की आशंका के निम्नलिखित कारण हमारे समक्ष आते हैं—

१. सैनिक संगठन—संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और सोवियत रूस दोनों गुट सैनिक संगठन एवं सैनिक संधियाँ कर रहे हैं। सीटो और नाटो के, संगठन किये जा रहे हैं। दोनों ही गुट अपने प्रभाव का क्षेत्र बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने के हेतु ही पिछड़े हुए देशों को आर्थिक सहायता दी जा रही है।

२. अन्तर्राष्ट्रीय तनाव-आज हमारा संसार दो गुटों में विभाजित है, एक गुट का नेता संयुक्त राष्ट्र अमेरिका है और दूसरे गुट का नेता सोवियत रूस है। दोनों में ही अन्तर्राष्ट्रीय तनाव अत्यन्त तीव्र है तथा शीत युद्ध चल रहा है।

३. चीन का विस्तारवाद—दिन पर दिन चीन की शक्ति बढ़ती जा रही है। उसने तिब्बत को हजम करके वहाँ के राष्ट्रवादियों का बड़ी निर्दयता से दमन किया है। चीन की विस्तारवादी नीति है। इसी नीति के अनुसार उसने भारत की उत्तरी सीमा का बारह हजार वर्ग मील क्षेत्र दबा लिया तथा अब भी उनकी गिद्ध दृष्टि लद्दाख, नेपाल, भूटान, सिक्कम, आसम और दार्जिलिंग पर लगी हुई है। चीन संयुक्त राष्ट्रसंघ का सदस्य भी नहीं है। इसलिए उस पर किसी का कोई नियन्त्रण नहीं है। वह अवसरवादी है। यदि उसने दक्षिण की ओर बढ़ने का प्रयास किया तो युद्ध होना अनिवार्य हो जायेगा।

४. भय, आशंका, अविश्वास और संदेह का वातावरण—रूस और अमेरिका दोनों में ही आजकल सद्भावना पूर्ण रूप से लुप्त हो गई है। दोनों ही एक दूसरे पर संदेह की दृष्टि रखते हैं। अन्य राष्ट्र भी इससे भयभीत हो रहे हैं।

५. सैनिक तैयारी—आज संसार के सभी देश अपनी सैनिक शक्ति

बढ़ा रहे हैं। अणुबम के परीक्षण किये जा रहे हैं। समस्त विश्व नये नये विनाशकारी यन्त्र बनाने में लगे हुए हैं। इसके अतिरिक्त अणुबम, राकेट टैंक, तारपीडो, वायुयान, तोड़क तोपें, स्वसंचालित वायुयान आदि प्रलयकारी अस्त्र-शस्त्र का निर्माण तेजी से किया जा रहा है। दोनों ही राष्ट्रों के पास ऐसे विनाशकारी एवं भयङ्कर साधन हैं जिनसे एक क्षण में आधा विश्व नष्ट किया जा सकता है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के प्रति जागरूक है, तथा वैज्ञानिक खोजों एवं शस्त्रों के निर्माण करने में प्रतियोगिताएं चल रही हैं। आज निःशस्त्रीकरण के सभी प्रयत्न असफल सिद्ध हो रहे हैं। 'पंचशील' के सिद्धान्तों का विवेकशील व्यक्ति प्रचार कर रहे हैं। किन्तु फिर भी बलशाली राष्ट्र चुपचाप अपनी शक्ति बढ़ा रहे हैं। रूस और अमेरिका दोनों ही अपनी किलेबन्दी कर रहे हैं और सहायक देशों में हवाई अड्डों का निर्माण करके एक दूसरे को घेराबन्दी करने की कोशिश की जा रही है। गुप्तचर विभाग दोनों ही राष्ट्रों का सक्रिय है। गत वर्ष अमेरिका के राकेट को साईवेरिया के सैनिक स्थानों की गुप्तचरी करने के कारण रूस ने मार गिराया था। आज परिस्थिति ऐसी है कि युद्ध की बारूद तैयार है केवल आग लगाने की देरी है।

६. **राजनैतिक समस्यायें**—द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् ऐसी कुछ समस्याएं विश्व के सामने हैं जिन पर रूस एवं अमेरिका दोनों में विरोध है। जैसे पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी का एकीकरण, हिन्द चीन का विभाजन, जापान पर अमेरिका का अधिकार, समाजवादी चीन की राष्ट्रसंघ की सदस्यता, उत्तरी एवं दक्षिणी कोरिया की समस्या आदि। इन्हीं समस्याओं को लेकर समय २ पर तनातनी होती रहती है और गृह युद्ध हो जाते हैं। गोआ, कांगो आदि की स्वाधीनता के प्रयत्न बड़े टेढ़े हैं। वे भी युद्ध का रूप ग्रहण कर सकते हैं। वास्तव में आज विश्व युद्ध रूपी ज्वालामुखी के किनारे पर खड़ा है। तनिक भी प्रमुख राष्ट्रों का मानसिक संतुलन बिगड़ने पर महायुद्ध छिड़ जायेगा, जिनमें सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश हो जायेगा इसमें सन्देह नहीं है।

अध्याय ३

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के प्रयत्न

प्रश्न १—राष्ट्रसंघ (लीग आफ नेशंस) के बारे में आप क्या जानते हैं ? संक्षेप में लिखिये।

उत्तर—राष्ट्रसंघ की स्थापना—प्रथम महायुद्ध से पूर्व अनेक देशों में एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना के लिये योजनाएँ बनाई जा रही थीं, जिनका एक मात्र उद्देश्य युद्ध को रोकना ही था। सन् १९१७ में अमेरिका इसी सिद्धान्त पर युद्ध में सम्मिलित हुआ कि "वह युद्ध को समाप्त करने और संसार को जनतन्त्र के लिये सुरक्षित बनाने के लिए लड़ा जा रहा है।" अमेरिका के प्रेसीडेंट विलसन ने भी ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठन पर जोर दिया जो समय समय पर युद्ध को रोक सके।

इस प्रकार राष्ट्रसंघ की स्थापना अमेरिका के प्रेसीडेंट विलसन की प्रेरणा से हुई। पेरिस के शान्ति सम्मेलन में इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ने जन्म लिया। यद्यपि इस संस्था के निर्माताओं ने अमेरिका को खुश रखने के लिये अत्यन्त उदार नियम बनाये, तथापि अमेरिका की सिनेट ने उसका सदस्य होना स्वीकार नहीं किया।

राष्ट्रसंघ की निम्नलिखित विशेषताएँ हमारे समक्ष आई। नैतिक बल ही शक्ति थी। राष्ट्रसंघ का निर्माण विभिन्न सत्ता सम्पन्न राष्ट्रों ने अपनी इच्छा से किया था। अतः अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के पास नैतिक बल से अधिक कोई शक्ति नहीं थी। प्रत्येक सदस्य को राष्ट्रों के मानने या न मानने की पूरी स्वाधीनता थी।

राष्ट्रसंघ का निर्माण विभिन्न सत्ताधारी राष्ट्रों की स्वेच्छा से निर्मित एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन था।

इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का निर्माण महान् उद्देश्यों को दृष्टिगत रखकर किया गया। इसे अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफलता प्राप्त नहीं हो सकी और द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने के कारण इसे भंग कर दिया गया।

प्रश्न २—राष्ट्रसंघ की आवश्यकता के कारणों पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—राष्ट्रसंघ का निर्माण प्रथम महायुद्ध के बाद युद्धों को रोकने का उद्देश्य लेकर किया गया। इसके साथ ही संसार को जनतन्त्र के लिए सुरक्षित रखना था किन्तु राष्ट्रसंघ अपने उद्देश्यों की पूर्ति करने में पूर्ण रूप से सफल न हो सका। उसकी असफलता के निम्नांकित कारण हैं—

१. अमेरिका का सदस्य न बनना—राष्ट्रसंघ की असफलता का प्रमुख कारण अमेरिका का राष्ट्रसंघ में सदस्यता स्वीकार न करना है। अमेरिका की इस नीरसता को देखकर अन्य राष्ट्र भी धीरे-धीरे राष्ट्रसंघ की सदस्यता से अलग हो गये तथा कुछ प्रत्यक्ष रूप से अलग न होकर राष्ट्रसंघ के नियमों का उल्लंघन करने लगे।

२. संकीर्ण राष्ट्रीय स्वार्थ—ब्रिटेन और फ्रांस जैसे बड़े राष्ट्रों ने अपने संकीर्ण राष्ट्रीय स्वार्थों की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया तथा अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा और हित की चिन्ता किसी ने नहीं की।

३. बड़े देशों में ईमानदारी और साहस का अभाव—राष्ट्रसंघ के सदस्यों में जो कि बड़े २ देशों का प्रतिनिधित्व करते थे, उनमें ईमानदारी और साहस का अभाव था। एक ओर छोटे राष्ट्रों ने अन्त तक राष्ट्रसंघ का साथ दिया जब कि इन सदस्यों ने राष्ट्रसंघ के उद्देश्य की पूर्ति के लिये कुछ भी प्रयास अथवा कार्य नहीं किया।

४. शक्तिहीन संस्था—राष्ट्रसंघ की असफलता का एक मुख्य कारण शक्ति की कमी भी रही। यद्यपि राष्ट्रसंघ में सत्ता सम्पन्न राष्ट्र थे तथापि इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के पास अपनी कोई सेना नहीं थी और न ही शस्त्रादि ही थे। शस्त्रों की कमी के कारण राष्ट्रसंघ छोटे राष्ट्रों पर बड़े राष्ट्रों के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को रोक नहीं सका। उसके पास नैतिक बल के अतिरिक्त और कोई शक्ति न थी। इसके अतिरिक्त प्रत्येक राष्ट्र के सदस्यों को राष्ट्रसंघ के आदेश मानने अथवा न मानने की स्वतंत्रता प्राप्त थी। उनको किसी भी आदेश को मानने के लिये बाध्य नहीं किया जा सकता था।

५. बड़े राष्ट्रों के झगड़े सुलझाने में असमर्थ—राष्ट्रसंघ के उद्देश्यों में असफल रहने का एक यह भी प्रमुख कारण रहा। जहाँ तक छोटे राष्ट्रों के झगड़े सुलझाने का प्रश्न आया राष्ट्रसंघ पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त

करता रहा किन्तु राष्ट्रसंघ बड़े राष्ट्रों के झगड़े सुलझाने में सफलता प्राप्त न कर सका। जापान के मंचूरिया पर आक्रमण करने, हिटलर द्वारा मध्य तथा पूर्वीय यूरोप में राज्य विस्तार करने पर राष्ट्रसंघ निस्सहाय होकर देखता रह गया तथा कुछ भी उपाय न कर सका। यद्यपि राष्ट्र-संघ फासिस्ट आक्रमणों को रोकने के लिए प्रभावशाली कदम उठा सकता था किन्तु ब्रिटेन और फ्रांस की लापरवाही के कारण और उनके राष्ट्रीय स्वार्थों के कारण राष्ट्रसंघ कुछ न कर सका। परिणामस्वरूप द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ होगया और इस प्रकार से राष्ट्रसंघ का पूर्ण रूप से अन्त होगया।

प्रश्न ३—संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना किस उद्देश्य से की गई थी? उनकी व्याख्या कीजिये?

उत्तर—द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर विश्व के प्रमुख नेताओं ने इस आवश्यकता को महसूस किया कि विश्वशान्ति की समस्या को हल करने के लिए एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना की जानी चाहिये जो भविष्य में होने वाले युद्धों की सम्भावनाओं को रोक सके।

संयुक्त राष्ट्रसंघ के लक्ष्य—

(क) अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को हल करना—युद्ध के काल में ही मित्र राष्ट्रों ने यह अनुभव किया कि युद्ध के पश्चात् शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सस्था का निर्माण किया जाना चाहिये।

(ख) राष्ट्रपति रूजवेल्ट के चार सिद्धांत—अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने ७ जनवरी, १९४१ को यह घोषणा की, "हम एक ऐसे विश्व का निर्माण करना चाहते है जिसका आधार चार मानवीय स्वतन्त्रता क्रमशः वाणी और विचार प्रदर्शन की स्वतन्त्रता, ईश्वर उपासना की स्वतन्त्रता, आर्थिक स्वतन्त्रता और भय से स्वतन्त्रता हो।"

इस एटलांटिक घोषणा-पत्र में चर्चिल और रूजवेल्ट ने संयुक्त रूप से यह घोषणा की, "वे विश्व में एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करना चाहते हैं, जिसमे मानव मात्र सब प्रकार के भयों से मुक्त हों और राष्ट्रों में आपसी सम्बन्ध बने रहें।"

इन सिद्धान्तों को दृष्टिगत रखते हुए २५ अप्रेल, १९४५ को सेन फ्रान्सिस्को ...

फ्रांसिसको में ५१ राष्ट्रों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसके अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्रसंघ के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये:—

संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्य—

(क) युद्ध की सम्भावनाओं को रोकना और अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों को शांतिपूर्ण ढंग से हल करना।

(ख) प्रत्येक राष्ट्र के मध्य मित्रतापूर्ण व्यवहार बनाये रखना और एक दूसरे का समान रूप से सम्मान करना।

(ग) संकुचित विचारधारा का परित्याग कर प्रत्येक समस्या को अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से हल करने का प्रयत्न करना।

(घ) अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिये प्रयत्न-शील रहना।

(ङ) विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए तथा राष्ट्रों के कार्यों में सामंजस्य स्थापित करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का निर्माण करना।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि महान् उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुये संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई।

प्रश्न ४— संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्यों और सिद्धान्तों पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्य प्रश्न नं० ३ में देखिये तथा सिद्धान्तों की व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती है—

(१) संयुक्त राष्ट्रसंघ का प्रत्येक सदस्य सर्वशक्तिशाली और समान है तथा किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं है।

(२) अटलांटिक घोषणा-पत्र के अनुसार प्रत्येक सदस्य राष्ट्र अपने वचनों का पालन करने के लिए बद्ध है।

(३) शान्ति व्यवस्था और सुरक्षा की व्यवस्था को बनाये रखने के लिये भरसक प्रयत्न करना।

(४) सभी प्रकार के आपसी झगड़ों को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने का प्रयास करना।

(५) कोई भी सदस्य राष्ट्र किसी भी देश की स्वतंत्रता के विरुद्ध शक्ति का प्रयोग नहीं करेगा और न किसी प्रकार की धमकी ही देगा।

(६) संयुक्त राष्ट्रसंघ की प्रत्येक कार्यवाही को सफलतापूर्वक संचालित करने में सदस्य राष्ट्र पूर्णरूप से सहयोग प्रदान करेंगे।

(७) संयुक्त राष्ट्रसंघ के द्वारा किसी भी देश के आन्तरिक विषयों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जावेगा।

(८) अधिकार पत्र द्वारा निर्धारित शर्तों को स्वीकार करने वाला प्रत्येक शान्तिप्रिय राष्ट्र उसकी सदस्यता ग्रहण कर सकता है।

(९) वह गैर सदस्य राष्ट्रों के झगड़ों को हल करने के लिए अपनी सेनाओं का उपयोग कर सकता है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उच्च और महान् आदर्शों को दृष्टिगत रखते हुये विश्वशांति की समस्या को हल करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संस्था संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई।

प्रश्न ५—संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की आवश्यकता क्यों पड़ी ?

उत्तर—मनुष्य को परिस्थितियों और वातावरण के अनुकूल प्रत्येक कार्य करना ही पड़ता है। यदि वह ऐसा नहीं करे, तो वह किसी भी रूप में उन्नति नहीं कर सकता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना भी २४ अक्टूम्बर, १९४५ को निम्नलिखित परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए की गई।

१. तत्कालीन युग की आवश्यकता—तत्कालीन परिस्थितियों ने एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना को नष्ट कर दिया था। विज्ञान ने सम्पूर्ण स्थिति को परिवर्तित कर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक क्रांति उत्पन्न कर दी थी। विज्ञान ने प्राकृतिक सीमाओं पर विजय प्राप्त कर ली थी। औद्योगिक क्रांति ने सभी देशों के आर्थिक जीवन को एक सूत्र में बांध दिया था। यातायात और संदेश-वाहन के शीघ्रगामी साधनों के कारण विभिन्न संस्कृतियों में समन्वय स्थापित हो गया था। इस आपसी सम्पर्क को चिरस्थायी रूप प्रदान करने के लिये एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना अत्यंत आवश्यक हो गई थी। औद्योगिक क्रान्ति के कारण राष्ट्रों का जीवन आर्थिक दृष्टिकोण से परस्पर निर्भर हो गया था। एकता और सहयोग की सद्भावना को निरंतर बनाये रखने के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की [illegible] को महसूस किया गया।

२. दो महायुद्धों की विभीषिका—वर्तमान काल के युद्ध अत्यन्त हानिकारक हो गये हैं। अणुशक्ति प्रहार से कोई भी राष्ट्र सुरक्षित नहीं रह सकता है, चाहे वह राष्ट्र तटस्थ ही क्यों न रहे। आज का मानव युद्ध के दर्दनाक दृश्यों से भयभीत है, जिनने उसके हृदय में युद्ध के प्रति घृणा के भाव उत्पन्न कर दिये हैं। इसलिए मानव मात्र शान्ति और सुरक्षा चाहता है। द्वितीय महायुद्ध के काल में विजयी मित्र राष्ट्रों ने भी इस आवश्यकता को महसूस किया। इसके साथ ही यह भी अनुभव किया गया कि जितने भी युद्ध आज तक हुये हैं, उनका एक मात्र कारण आर्थिक असमानता है। इसे दूर किये बिना किसी भी रूप में युद्ध की भावी सम्भावनाओं को नहीं रोका जा सकता है संकुचित विचारधारा को नष्ट करके उदार विचारधारा के विकास के लिये भी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना नितान्त आवश्यक है। इन्हीं भावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई। आज शक्तिशाली राष्ट्र भी यह अनुभव करने लगे हैं कि पिछड़े हुये और निर्बल राष्ट्रों को आगे बढ़ने का अवसर देना उनके हित में है। विश्वशान्ति इस समय की प्रमुख समस्या है, जिसका एकमात्र हल अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना करना भी है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन परिस्थितियाँ कुछ ऐसी थीं, जिन्हें दृष्टिगत रखते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह उस युग की प्रमुख माँग थी, जिसे पूरा करना आवश्यक था।

प्रश्न ६—संयुक्त राष्ट्रसंघ की प्रमुख संस्थाओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—संयुक्त राष्ट्रसंघ के छः प्रमुख विभाग हैं, जिनकी सहायता से उनका कार्य संचालित किया जाता है। प्रत्येक विभाग को अलग-अलग कार्य दिये गये हैं, जिनकी व्यवस्था निम्नलिखित रूप में की जाती है:—

१. साधारण सभा—साधारण सभा संयुक्त राष्ट्रसंघ का प्रमुख भाग है, इसे विश्व संसद कहा जा सकता है। प्रत्येक सदस्य राष्ट्र पाँच प्रतिनिधि तक भेज सकता है, परन्तु प्रत्येक विषय पर एक राष्ट्र का एक ही मत माना जाता है। सभा का वार्षिक अधिवेशन प्रति वर्ष सितम्बर मास

में मंगलवार को होता है। आवश्यकता पड़ने पर बहुमत से विशेष अधिवेशन बुलाया जा सकता है। अधिक महत्वपूर्ण समस्याओं का निर्णय दो तिहाई बहुमत से किया जाता है। इस सभा के द्वारा ही बजट स्वीकृत किया जाता है। इसके अतिरिक्त सुरक्षा परिषद् के छः अस्थायी सदस्य, सामाजिक व आर्थिक परिषद् के सदस्य, संरक्षण परिषद् के सदस्य, महासचिव और अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों का निर्वाचन साधारण सभा के द्वारा ही किया जाता है। इस सभा के द्वारा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की भावना को विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है।

२. सुरक्षा परिषद्—सुरक्षा परिषद् संयुक्त राष्ट्रसंघ की कार्यपालिका है, इसमें ११ सदस्य होते हैं। ५ स्थायी और ६ अस्थायी होते हैं। अमेरिका, रूस, फ्रांस, इंगलैंड और राष्ट्रवादी चीन इसके स्थायी सदस्य हैं। अस्थायी सदस्यों की नियुक्ति दो वर्ष के लिये साधारण सभा के द्वारा की जाती है। एक सदस्य जो एक बार दो वर्ष तक सदस्य रह चुका हो, तो वह पुनः एकदम सदस्यता प्राप्त नहीं कर सकता है। महत्वपूर्ण प्रश्नों के निर्माण हेतु ११ में से ७ सदस्यों का एक मत होना तथा ७ सदस्यों में से ५सदस्यों का एकमत होना अनिवार्य है। इन स्थायी सदस्यों का 'मतनिषेधाधिकार' (Veto Power) दिया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई निर्णय नहीं दिया जा सकता है। सुरक्षा परिषद् की बैठक माह में दो बार होती है तथा आवश्यकता पड़ने पर विशेष अधिवेशन बुलाया जा सकता है। परिषद् का सभापति प्रति माह सदस्य राष्ट्रों के प्रथम अक्षर के क्रमानुसार परिवर्तित होता रहता है।

सुरक्षा परिषद् का प्रमुख कार्य युद्ध की सम्भावनाओं को रोकना तथा प्रत्येक समस्या को शांति पूर्ण ढंग से हल करना है। यदि कोई राष्ट्र उसकी आज्ञाओं का पालन न करे, तो वह सैनिक शक्ति का प्रयोग कर सकता है। नये राष्ट्रों को सदस्य बनाने की सिफारिश को भी सुरक्षा परिषद् के द्वारा की जाती है।

३. आर्थिक व सामाजिक परिषद्—इसमें १८ सदस्य होते हैं जिनका निर्वाचन साधारण सभा के द्वारा १ वर्ष के लिये किया जाता है। इस परिषद् के एक तिहाई सदस्य प्रत्येक तीसरे वर्ष अवकाश ग्रहण कर

लेते हैं और उनके स्थान पर नये सदस्य आ जाते हैं। इस परिषद् का एक मात्र लक्ष्य आर्थिक विषमता को नष्ट करना है और प्रत्येक सामाजिक समस्या को हल करना है। इसके द्वारा मानववादी विचारधारा को फैलाने का प्रयत्न किया जाता है।

४. संरक्षण परिषद्— इस परिषद् का मुख्य लक्ष्य परतन्त्र राष्ट्रों को स्वशासन की शिक्षा देकर आत्म-निर्भर बनाना है। कोई भी देश अपनी स्वेच्छा से परिषद की सुरक्षा में स्वयं को रख सकता है। इसका अधिवेशन वर्ष में दो बार होता है। प्रत्येक अधिवेशन के लिए नया सभापति चुना जाता है। प्रत्येक सदस्य राष्ट्र का एक ही मत होता है।

५. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय—इसके १५ न्यायाधीश हैं, जिनका निर्वाचन सुरक्षा परिषद् की सिफारिश पर साधारण सभा के द्वारा ९ वर्ष के लिए किया जाता है। यह हालैण्ड की राजधानी हेग में स्थित है। प्रत्येक विवाद का निर्णय दो तिहाई बहुमत से किया जाता है। इस अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के द्वारा दो प्रकार के कार्य किये जाते हैं।

(क) सदस्य राष्ट्रों के झगड़ों का निर्णय देता है।

(ख) कानूनी विषयों पर सलाह देता है। न्यायालय की भाषा अंग्रेजी और फ्रेंच है।

६. सचिवालय —प्रशासनिक कार्यों का संचालन सचिवालय के द्वारा किया जाता है। इसका प्रमुख अधिकारी महासचिव कहलाता है। इसकी नियुक्ति सुरक्षा परिषद् की सिफारिस पर साधारण सभा के द्वारा की जाती है। इसमें विभिन्न देशों के ४१०० कर्मचारी कार्य कर रहे हैं। सचिवालय को अपने कार्यों की वार्षिक रिपोर्ट साधारण सभा को देनी पड़ती है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि संयुक्त राष्ट्र-संघ के विभिन्न विभागों को अलग-अलग कार्य दिया गया है, जिससे वे सफलतापूर्वक अपनी नीति का संचालन कर सकें।

प्रश्न ७—संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा तथा सुरक्षा परिषद् के कार्यों का विवरण दीजिये।

उत्तर—(इसका उत्तर प्रश्न नं० ६ में देखिये)

प्रश्न ८—क्या संयुक्त राष्ट्रसंघ अपने उद्देश्यों में सफल हुआ है?

उत्तर—आज तक यह प्रश्न विवाद का बना हुआ है कि संयुक्त राष्ट्र संघ अपने उद्देश्यों में सफल हुआ है या नहीं। कुछ का मत है कि राष्ट्र संघ एकदम असफल हुआ है।

असफलता के निम्न कारण हैं—

(क) कमजोर सङ्गठन—इसका संगठन अच्छा नहीं है। संगठन की दृष्टि से इसे लीग आफ नेशन्स की उपमा भी दी जा सकती है।

(ख) बड़े राष्ट्रों में अनबन—संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना इस आधार पर की गई थी कि सभी छोटे एवं बड़े राष्ट्रों में 'मित्रता एवं सद्‌भावना बनी रहेगी, परन्तु ऐसा नहीं हो सका।

आज विश्व की दो महान् शक्तियों—सोवियत संघ एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में गहरा मतभेद है जो दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। जिसके कारण कभी भी शीत युद्ध का आरम्भ हो सकता है, जिसमें सारे विश्व के नष्ट होने का खतरा है।

कुछ तटस्थ राष्ट्रों को छोड़कर संसार के अधिकांश देश दो गुटों में विभाजित हो गये हैं। दोनों दल छोटी-छोटी बातों को वृहद् रूप देने की कोशिश में रहते हैं। अतः यू० एन० ओ० के शान्ति के प्रयास असफल सिद्ध हुये हैं।

इन दोनों राष्ट्रों के कारण सुरक्षा परिषद् अभी तक अपनी निजी सेना का निर्माण नहीं कर सकी है। अणुशक्ति और अस्त्र-शस्त्र के निर्माण पर नियन्त्रण करने के मामले में पूर्णतः असफल सिद्ध हुआ है।

संयुक्त राष्ट्र संघ किसी राष्ट्र के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। उसी का यह परिणाम है कि स्पेन में तानाशाही शासन, दक्षिणी अफ्रीका में भारतीयों के साथ भेद-भाव को दूर करने में U. N. O. असमर्थ रहा है।

काश्मीर का प्रश्न अभी तक हल नहीं हो पाया है। स्वेज नहर के बारे में भी विवाद चला। कांगो की स्वतन्त्रता तथा एकता का प्रश्न अभी तक हल नहीं हुआ है।

सफलता—

१. कर्त्तव्य भावना की जागृति—कुछ छोटे-छोटे प्रश्नों को राष्ट्र

संघ ने बड़ी सफलता से सुलझा दिया। एक दूसरे के प्रति सद्भावना भी बढ़ी है।

२. मानव कल्याण—समस्त देशों की जनता को समान अधिकार तथा राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त करने में राष्ट्रसंघ ने सहायता दी है। कुछ अन्तर्राष्ट्रीय कानून भी बनाये हैं, जो मानव कल्याण में उपयोगी सिद्ध हुये हैं।

३. उपयोगी संस्थाओं का निर्माण—इस संघ के द्वारा कुछ उपयोगी सस्थाएं स्थापित हुई हैं, जैसे—

(क) खाद्य और कृषि सङ्गठन—इसके द्वारा गरीब देशों को खाद्य पदार्थों की सहायता दी जाती है तथा कृषि सम्बन्धी उत्पादन और वितरण के साधनों में सुधार किया गया है।

(ख) यूनेस्को—इसके द्वारा शिक्षा, विज्ञान, सांस्कृतिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण काम किया गया है।

४. अन्तर्राष्ट्रीय बैंक—इसने समस्त राष्ट्रों के विकास में बहुत सहायता दी है। यह उद्योगों के विकास के लिए तथा योजनाओं को कार्य रूप में परिणित करने के लिए ऋण देता है।

५. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष—यह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को विकसित करने, विभिन्न राष्ट्रों की विदेशी विनिमय दर को स्थिर करने और उसके उतार चढ़ाव को रोकने का कार्य करता है।

६. अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य सङ्गठन—यह बीमारियों को रोकने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास करता है, स्वास्थ्य के स्तर को भी ऊँचा इसी के द्वारा किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा एक महान् मानव कल्याण का कार्य किया गया है। इसके द्वारा पिछड़े देशों का उद्धार भी किया गया है। यह शान्ति और सुरक्षा के मामलों में अधिक सफल नहीं हो सका है, परन्तु कुछ समस्याओं का समाधान इसके द्वारा बहुत महत्वपूर्ण ढंग से किया गया है। यह शान्ति की स्थापना का प्रयत्न कर रहा है और देखना चाहता है कि इस उद्देश्य में यह कहाँ तक सफल होता है।

प्रश्न ९—आप संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान में क्या परिवर्तन करना चाहेंगे जिससे वह अधिक प्रभावशाली हो सके?

उत्तर—संयुक्त राष्ट्रसंघ विश्व की एक महान संस्था है। यदि

यह संस्था समाप्त करदी जाती है तो विश्व का बहुत हित होगा। अतः यह आवश्यक है कि विश्व में शान्ति के हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान में कुछ आवश्यक परिवर्तन कर दिए जायें जिससे कि वह अपने उद्देश्य में सफल हो सके जो निम्नलिखित हैं—

१. विटो शक्ति समाप्त की जानी चाहिए—संयुक्त राष्ट्र संघ में पांच स्थाई सदस्यों के हाथ में विटो शक्ति है तथा वे उसका दुरुपयोग करते हैं और यू० एन० ओ० कोई महत्वपूर्ण निश्चय नहीं दे सकती।

अतः यह अधिकार समाप्त किया जाना चाहिए।

२. सुरक्षा व्यवस्था को अधिक दृढ़ और प्रस्तावपूर्ण बनाना चाहिए—संयुक्त राष्ट्रसंघ अभी तक अपनी निजी सेना तैयार नहीं कर सका है, अतः जब सैनिक बल की आवश्यकता होती है तो उसे देशों का मुंह ताकना पड़ता है। वह शांति के लिए, विश्व तनाव के लिये एवं अन्य समस्याओं को हल करने के लिए कोई साहस एवं दृढतापूर्ण कदम नहीं उठा सकता है। अतः कोई भी देश उसका भय नहीं मानता।

३. सभी राष्ट्र संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य बनाये जांय—अभी तक बहुत से देश यू० एन० ओ० के सदस्य नहीं बन सके हैं। हमारे विचार से तो कोई भी देश इसकी सदस्यता से वंचित नहीं रहना चाहिए। लाल चीन को तो अभी तक संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता प्राप्त नहीं हो सकी है और इसका मुख्य कारण यह है संयुक्त राष्ट्र संघ का दो गुटों में विभक्त होना।

अतः सभी राष्ट्र इस संघ के सदस्य बनाये जाने चाहियें।

४. टैकनीकल कार्य-क्रम को बढ़ावा दिया जाय—संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा पिछड़े और निर्धन एवं अविकसित देशों को आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए। आजकल यह सहायता बड़े राष्ट्रों द्वारा ही दी जाती है और विश्व की दोनों शक्ति अनेक राष्ट्रों को अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करती है। अतः संयुक्त राष्ट्रसंघ के द्वारा इन राष्ट्रों को सहायता दी जानी चाहिये।

५. अवनत राष्ट्रों का जीवन स्तर ऊंचा उठाया जाय—संयुक्त राष्ट्रसंघ के द्वारा अवनत राष्ट्रों के जन जीवन को ऊंचा उठाने का प्रयत्न करना चाहिए उन्हें आर्थिक और मानसिक दोनों ओर से संतुष्ट रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

९. नवीन राष्ट्रों को अधिक अधिकार दिये जायें—संयुक्त राष्ट्रसंघ के विधान में महान् परिवर्तन करने के लिए यह आवश्यक है कि नवीन राष्ट्रों को अधिक अधिकार दिये जांय। यू० एन० ओ० का गठन विश्व के बड़े राष्ट्रों द्वारा जो रूस, इङ्गलेंड, फ्रांस, अमेरिका ने किया और उन्होंने अपने हाथ में विशेष अधिकार ले रखे है। इन पांचों राष्ट्रों की स्थाई सदस्यता समाप्त कर देनी चाहिए एवं नये राष्ट्रों को अधिक अधिकार दिये जांय जिससे संघ में फैली गुटबन्दी को दूर किया जाय।

उपर्युक्त मुख्य परिवर्तनों के बाद ही संयुक्त राष्ट्रसंघ महान् सफलता की ओर अग्रसर हो सकता है और विश्व का शांतिपूर्ण ढंग से निर्माण कर सकता है।

प्रश्न १०–संयुक्त राष्ट्र संघ में आप क्या सुधार करना चाहेंगे?

उत्तर—प्रश्न नं० ९ का उत्तर देखिये।

प्रश्न ११—सैनिक गुटबन्दी से विश्व शांति को क्या खतरा है? समझाइये।

उत्तर—आज हमारा संसार दो गुटों में विभाजित हो गया है। एक गुट का नेता सोवियत रूस है और दूसरे विरोधी गुट का नेतृत्व संयुक्त राज्य अमेरिका कर रहा है। दोनों ही गुट एक दूसरे के परस्पर विरोधी हैं। कम्युनिस्ट विरोधी देश संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में संगठित हो गये हैं और सोवियत रूस के नेतृत्व में कम्युनिस्ट विचारधारा के देश संगठित हो गये हैं।

१. अनेकों गुटबन्दियाँ—पश्चिमी यूरोप के देशों में साम्यवादियों के विरुद्ध एक रक्षात्मक संघ "उत्तर एटलांटिक संधि संगठन" स्थापित किया गया। अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, हालैण्ड, पुर्तगाल, बेलजियम, डैनमार्क, कनाडा, आइसलेंड और लाम्बसम्बर्ग, नार्वे आदि देश इस सैनिक संघ में हैं। इसके साथ ही रूस ने एक सैनिक संगठन "वारसापैक्ट" बनाया, जिसमें पूर्वी देशों के यूरोप के साम्यवादी देश शामिल हैं। इसी प्रकार दक्षिण पूर्व एशिया में "मेनिलापैक्ट" और मध्य पूर्व देशों का सैनिक संगठन 'बगदाद पैक्ट" संगठनों का निर्माण किया गया। इसे

ही मेनिला पैक्ट की साउथ ईस्ट डिफेंस आरगैनीजेशन या सियोटी भी कहा गया है। ईराक, ईरान, टर्की, पाकिस्तान और इङ्गलैंड आदि देश 'बगदाद पैक्ट' में सम्मिलित थे, तथा सहायक और समर्थक के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका था। ईराक की राज्य क्रांति के बाद वह इसका सदस्य नहीं रहा है। इसके विपरीत पाकिस्तान, संयुक्त राज्य अमेरिका, फिलीपाइंस, इङ्गलैण्ड, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और थाइलैंड सियोटों में सम्मिलित हैं। इन सैनिक गुटबन्दियों से विश्वशांति के लिए निम्नांकित खतरे उत्पन्न हो गये हैं:—

संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत रूस दोनों ही गुट अपना प्रभाव इस क्षेत्र में बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। अन्य देशों को एक दूसरे के विरुद्ध भड़काने का प्रयास किया जाता है। किसी भी देश के विरोधी राजनैतिक दल में सहायता देकर गृहयुद्ध के लिए प्रोत्साहित करते रहते हैं। उदाहरण के लिए हम हिन्द. चीन और क्यूबा को ले सकते हैं।

२. अविश्वास और भय की आशंका—विश्व के दो गुटों में बट जाने के कारण वे स्वयं एक दूसरे से सशंकित और भयभीत रहते हैं। दोनों शक्तियां एक दूसरे को विध्वंस करने का प्रयत्न कर रही हैं जिससे विश्व युद्ध अवश्यंभावी है।

३. विध्वंसकारी शस्त्रों का निर्माण—विश्व की दोनों शक्तियां भयंकर शस्त्रों और विध्वंसकारी बमों के निर्माण करने में व्यस्त है। रूस ने अभी हाल में ही ७५ मैगाटन के बम का विस्फोट किया है। इन बमों के परीक्षण से ही वातावरण विषाक्त हो जाता है। यदि इन भयंकर शस्त्रों का उपयोग किया गया तो विश्व तहस-नहस हो जायगा, इसमें कोई शक नहीं है।

४. अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के हल होने में बाधाएँ—अनेक समस्याएँ इन दोनों देशों की गुटबन्दी के कारण हल नहीं हो पा रही हैं। बहुत से देश अपनी स्वतंत्रता पाने के लिए उत्सुक हैं परन्तु इन विरोधी गुटों के कारण वे सफलता प्राप्त नहीं कर सके हैं।

५. तृतीय महायुद्ध की संभावना—आज मानव एक ऐसी विषम परिस्थिति से गुजर रहा है जो अवर्णित है। किसी भी समय वह अपनी [illegible] ले सकता है। भयंकर अस्त्र दोनों गुट तैयार कर चुके हैं। यदि

कहीं से जहाँ भी युद्ध का प्रारम्भ हुआ तो तृतीय महायुद्ध प्रारम्भ हो जायेगा जिससे महान मानव जाति का विनाश होगा। यह नहीं कहा जा सकता कि किस समय उस बारूद के ढ़ेर में चिंगारी जन्म ले जो विश्व को तहस-नहस करने का साहस रखती है।

अध्याय ४

भारत और विश्वशान्ति

प्रश्न १— विश्वशांति के लिए किये गये भारत के प्रयत्नों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर—भारत प्रारम्भ से एक शांतिप्रिय देश रहा है। उसने सदैव विश्वशांति बनाये रखने के लिए प्रयत्न किये हैं। ऐसी स्थिति में भारत ने विश्वशांति के लिए जो प्रयत्न किये हैं, उनकी व्यवस्था करना आवश्यक हो जाता है।

१. शांति स्थापना भारत का प्रमुख लक्ष्य—भारत ने प्राचीन काल से शांति के महत्व को समझा और विश्व के अन्य राष्ट्रों को भी ऐसा करने का संदेश दिया। महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी ने सम्पूर्ण विश्व को प्रेम, अहिंसा, शांति और दया का संदेश दिया। इतना ही नहीं भारत के महान् सम्राट् अशोक ने मानव कल्याणकारी कार्य किये। आधुनिक युग में भी हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अहिंसा के सिद्धान्तों को अपनाया तथा विश्व के सभी राष्ट्रों को इसे ग्रहण करने की प्रेरणा दी। भारत ने 'जीओ और जीने दो' का संदेश विश्व को दिया।

२. तटस्थ नीति – भारत सदैव गुटबन्दी का विरोधी रहा है। आज विश्व के सभी राष्ट्र किसी न किसी गुट के समर्थक बने हुए हैं, परन्तु भारत आज भी किसी दल का सदस्य नहीं है। उसने गुप्त सैनिक सन्धियों का भी डटकर विरोध किया है। यही कारण है कि भारत ने पराधीन राष्ट्रों को स्वाधीनता दिलाने का भरसक प्रयत्न किया है और सदैव तटस्थ नीति का अनुकरण किया है।

३. शान्ति स्थापित करने के प्रयत्न—भारत ने निम्नलिखित राजनैतिक समस्याओं को शान्तिपूर्ण ढग से हल करने के प्रयत्न किये और सफलता भी प्राप्त की:—

(क) कोरिया में शान्ति स्थापित करना—उत्तरी कोरिया की सेना ने दक्षिणी कोरिया को अपने आधीन रखने के लिए अचानक आक्रमण कर दिया। दक्षिणी कोरिया की सरकार ने संयुक्त राष्ट्रसंघ से सहायता की मांग की संयुक्त राष्ट्रसंघ के द्वारा सहायता के लिए साम्यवादी राष्ट्रों के अतिरिक्त सेनाएँ भेजी गईं, परन्तु युद्ध का निरन्तर विस्तार होगया और परिणाम यह हुआ कि विश्वशांति का भय उत्पन्न हो गया। ऐसी विषम परिस्थितियों में भारत ने यह घोषणा की कि दोनों ओर से सेनाएँ ३८° उत्तरी आक्षांश को अपनी सीमा मानकर युद्ध बन्द करदें। युद्ध के समय तो किसी ने भारत की इस घोषणा पर कोई ध्यान नहीं दिया। जब युद्ध के पश्चात् भी कोई निर्णय नहीं निकल सका और भारत की मध्यस्ता को स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार भारत के प्रयत्नों के फलस्वरूप संयुक्त राष्ट्रसंघ को विश्वशांति स्थापित करने में सफलता प्राप्त हुई।

(ख) हिन्दोशिया की स्वतंत्रता—हिन्दोनिया दक्षिणी पूर्वी एशिया का सबसे बड़ा भाग है। जावा और सुमात्रा भी इसी देश के अंग हैं। हालैण्ड ने ३५० वर्षों तक इसे अपने अधिकार में रखा। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर वहाँ स्वतन्त्र सरकार की स्थापना की गई, परन्तु डचों ने इसे मानने से इनकार कर दिया। सन् १९४९ में दिल्ली में एशिया के १८ राष्ट्रों का सम्मेलन बुलाया गया। इसमें हालैण्ड की नीति का डटकर विरोध किया गया। इसके पश्चात् हेग में एक सम्मेलन बुलाया गया। जिसमें हिन्दोशिया की स्वतन्त्रता को स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार भारत के सहयोग से हिन्दोशिया की स्वतन्त्रता स्वीकार करली गई।

(ग) लेबनान और ईराक की समस्या—भारत सदैव से सत्य, समानता और स्वतन्त्रता का प्रेमी रहा है। यही कारण है कि भारत ने किसी भी गुट की सदस्यता स्वीकार नहीं की है। ईराक में जब राष्ट्रीय भावना का विस्तार हुआ तो वहाँ ब्रिगेडियर कासिम के नेतृत्व में प्रजातन्त्र

सरकार की स्थापना की गई। पश्चिमी देशों ने इसका विरोध किया। अमेरिका ने लेबनान में और इंगलैंड ने जोर्डन में अपनी सेनाएं भेजीं। भारत ने अरब के राष्ट्रों के प्रति सम्मान प्रकट किया। ईराक की नई सरकार को मान्यता प्रदान की गई। अमेरिका और इंगलैंड की इस सैनिक कार्यवाही का विरोध किया। सुरक्षा परिषद् में भी इस कार्य की घोर निन्दा की गई। भारत के नैतिक बल के सहयोग से संयुक्त राष्ट्रसंघ को सफलता प्राप्त हुई।

(घ) लाओस की समस्या—दक्षिण पूर्वी एशिया में स्थित लाओस प्रदेश के टुकड़ों में विभाजित हो गया है। एक टुकड़ा रूस से और दूसरा अमेरिका से प्रभावित है। सन् १९६१ में दोनों ओर की सेनाओं में युद्ध छिड़ गया। विश्वशांति की समस्या को दृष्टिगत रखते हुए संयुक्त राष्ट्र-संघ ने हस्ताक्षेप किया। युद्ध विराम लागू करके भारत के नेतृत्व में एक अन्तर्राष्ट्रीय कमीशन भेजा गया है। यद्यपि इस समस्या का कोई हल नहीं निकाला जा सका है, परन्तु भारत के सहयोग से युद्ध रोका जा सका है।

(ङ) कांगो की समस्या—अफ्रीका में स्थित कांगो प्रदेश बेलजियम के आधीन था। सन् १९६१ में स्वतन्त्रता प्राप्ति पर पेट्रिस लुमुम्बा यहाँ के प्रथम प्रधानमन्त्री बने। उन्होंने पश्चिमी साम्राज्यवादी का डटकर विरोध किया। बेलजियम की चाल से कांगो में गृह-युद्ध प्रारम्भ होगया और वहाँ कई सरकारें स्थापित हो गईं। भारत ने इस नीति का घोर विरोध किया। गृह-युद्ध के परिणामस्वरूप लुमुम्बा की हत्या करदी गई। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसमें हस्तक्षेप किया। श्री राजेश्वरदयाल को कांगो में संयुक्त राष्ट्र संघ का कार्यवाहक प्रतिनिधि बनाया। उन्होंने कांगो के एकीकरण का सक्रिय प्रयत्न किया। अभी तक इस समस्या को पूर्ण रूप से हल नहीं किया जा सका है।

(च) क्यूबा सरकार का समर्थन—संयुक्त राष्ट्र संघ अमेरिका ने सन् १९६१ में अपनी प्रतिक्षित सेना को क्यूबा की सरकार को परिवर्तित करने के लिए भेजा तो भारत सरकार ने डटकर इस नीति का विरोध किया और क्यूबा की सरकार का समर्थन किया।

(छ) मिश्र पर आक्रमण—इंगलैंड, अमरीका और इजरायल ने मिश्र पर आक्रमण तब किया जब कर्नल नासिर ने स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर लिया था। भारत ने इस नीति का डटकर विरोध किया और गाजा क्षेत्र में शान्ति स्थापित करने के लिए, दुर्घटनाओं को रोकने के लिए अपना सैनिक मिशन भेजा। इस प्रकार स्वेज नहर पर मिश्र का अधिकार मान लिया गया।

(ज) अणुशक्ति सम्मेलन—संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा सन् १९५५ में अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने के लिए भारत की अध्यक्षता में एक सम्मेलन किया गया जिसमें इस बात पर जोर दिया गया कि अणुशक्ति का प्रयोग मानव हितकारी कार्यों के लिए किया जाना चाहिये। आज वह भारत अन्तर्राष्ट्रीय बोर्ड का गवर्नर है।

(झ) पंचशील के सिद्धान्त—भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने विश्व शांति की समस्या को हल करने के लिए शान्तिपूर्ण अस्तित्व के सिद्धान्त पर पंचशील को जन्म दिया जिसे संसार के लगभग सभी शक्तिशाली राष्ट्र स्वीकार कर चुके हैं।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विश्वशांति की समस्या इस युग की प्रमुख समस्या है, जिसे हल करने के लिए भारत ने महान् सहयोग दिया है। संयुक्त राष्ट्र संघ को इस क्षेत्र में जितनी सफलता मिली है, उसमें भारत का बहुत बड़ा हाथ है।

प्रश्न २—पंचशील के सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिए।

उत्तर—आज विश्व की स्थिति अत्यन्त भयंकर हो गई है। इस समय तो तृतीय महायुद्ध की कल्पना की जा रही है। संसार के प्रमुख राष्ट्र अणुशक्ति और सैनिक शक्ति के बढ़ाने में लगे हुए हैं। ऐसे विषाद वातावरण में भी भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने २४ अप्रेल, १९५४ को शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के पंचशील सिद्धान्त की घोषणा की। जब सन् १९५७ में हिन्दोशिया में बांडुङ्ग सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें श्री नेहरू ने एक नवीन सिद्धान्त रखा, जिसे पंचशील कहते हैं। इस सिद्धान्त का चीन के प्रधान मंत्री श्री चाऊ-एन-लाई, ब्रह्मा के प्रधान मन्त्री ऊनू व मिश्र के राष्ट्रपति कर्नल नासिर ने भी समर्थन किया। इसके बाद इसे रूस ने स्वीकार किया। इस प्रकार आज विश्व की तीन

चौथाई जनसंख्या वाले देश इस सिद्धान्त को मान्यता प्रदान कर चुके हैं।

पंचशील के सिद्धान्त—पंचशील सिद्धान्त की प्रेरणा श्री नेहरू को बौद्ध-धर्म के पंचशील से मिली। धार्मिक आचार के इन्हीं पांच नियमों की प्रेरणा से श्री नेहरू ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के पांच नियम निर्धारित किये, जिन्हें पंचशील कहते हैं।

(क) **अतिक्रमण**—प्रत्येक राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्र की सीमा का अतिक्रमण न करे और एक दूसरे की स्वतन्त्रता का सम्मान करे।

(ख) **अनाक्रमण**—कोई राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण न करे।

(ग) **अहस्तक्षेप**—कोई राष्ट्र चाहे किसी भी राजनैतिक आर्थिक विचार-धारा को मानता हो, किसी भी राष्ट्र के आन्तरिक विषयों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जावे।

(घ) **समानता**—प्रत्येक राष्ट्र एक दूसरे से समानता और परस्पर मित्रता का व्यवहार करे।

(ङ) **शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व**—प्रत्येक राष्ट्र एक दूसरे राष्ट्र के अस्तित्व को स्वीकार करे और यदि कोई भी समस्या उठ खड़ी हो तो उसे शांतिपूर्ण ढंग से निपटाने का प्रयत्न करे। युद्ध किसी भी रूप में नहीं किया जावे।

पंचशील के ये पांचों सिद्धान्त शान्ति तथा सहयोग को सुदृढ़ करने वाले हैं। राष्ट्रीय संख्या पर अंकुश लगाने के लिए इस सिद्धान्त पर चलना अत्यन्त आवश्यक है। पचशील सिद्धान्त का एक मात्र लक्ष्य 'जीओ और जीने दो' विचार-धारा को प्रोत्साहित करना है। पंचशील ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में नैतिकता को बल दिया है और इसके द्वारा ही विश्व मैत्री स्थापित की जा सकती है। पंचशील एक अन्तर्राष्ट्रीय सिक्का बन गया है, जिसने भारतीय गौरव की वृद्धि की है। अणुयुद्ध से पीड़ित और सशंकित मानव जाति को पंचशील सिद्धान्त ने राहत प्रदान की है।

प्रश्न ३—विश्वशान्ति के लिए पंचशील क्यों आवश्यक है? कारण सहित लिखिये।

उत्तर—आज विश्व की स्थिति अत्यन्त विषम हो गई है। संसार के शक्तिशाली राष्ट्र हानिकारक अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण में प्रयत्नशील हैं। अणुशक्ति का समय-समय पर प्रयोग किया जा रहा है। आज के विश्व राष्ट्र अधिकांश दो गुटों में बँटे हुए हैं—(१) पूँजीपति गुट—इस गुट का नेता अमेरिका है। (२) साम्यवादी गुट—इस गुट का नेता रूस है। इस प्रकार दोनों गुटों में शीत युद्ध चल रहा है। मानव जीवन और सम्पत्ति संरक्षित हो गई है। तृतीय महायुद्ध वर्तमान युग की प्रमुख समस्या है। ऐसी विषम परिस्थितियों में भारत में राजनैतिक तटस्थता की नीति अपनाकर विश्व के समुम्ख एक नवीन सिद्धान्त प्रस्तुत किया है जिसे 'पंचशील' सिद्धान्त कहते हैं। आज का मानव अणुशक्ति के दुरुपयोग से पीड़ित है और पीड़ित मानवता की रक्षा का एक अस्त्र आज पंचशील है जो युद्ध रूपी दानव को नष्ट करके विश्वशान्ति स्थापित कर सकता है। मानव सभ्यता और संस्कृति का एक मात्र रक्षक पंचशील सिद्धान्त है।

नोट—(सिद्धान्त की व्याख्या प्रश्न नं० २ में देखिए।)

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए पंचशील सिद्धान्त का पालन करना अनिवार्य है। चीन के प्रधान मन्त्री ने सर्वप्रथम इस सिद्धान्त का समर्थन किया परन्तु चीन ने ही भारत की उत्तरी सीमा पर आक्रमण कर १२,००० वर्ग मील भूमि पर अधिकार कर लिया है। इस कारण बहुत से व्यक्तियों की पंचशील सिद्धान्त के प्रति श्रद्धा कम हो गई है। इतना होते हुए भी इस सिद्धान्त को स्वीकृत किये बिना विश्व शान्ति की समस्या को किसी भी रूप में हल नहीं किया जा सकता है।

प्रश्न ४—विश्वशान्ति के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ की क्यों आवश्यकता है ?

उत्तर—विश्वशान्ति इस युग की एक प्रमुख समस्या है जिसे हल करने के लिए विश्व के महान् नेता प्रयत्नशील हैं। यही कारण है कि द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के निर्माण की आवश्यकता को अनुभव किया गया। इस विषम समस्या को हल करने के लिए ४ अक्टूबर, १९४५ को अन्तर्राष्ट्रीय संस्था संयुक्त राष्ट्र संघ की

स्थापना की गई। ऐसी स्थिति में यह जानना आवश्यक हो जाता है कि विश्वशान्ति की समस्या को हल करने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ की आवश्यकता क्यों है।

१. अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का निर्णय—आज वैज्ञानिक आविष्कारों और सन्देशवाहन के साधनों के द्वारा भौगोलिक सीमा समाप्त हो गई है और सम्पूर्ण विश्व एक स्थान बन गया है। औद्योगिक क्रांति के कारण भी आपसी सम्पर्क अधिक बढ़ गया है। इस सम्पर्क के साथ संघर्ष का वातावरण भी बढ़ गया है और झगडों का स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है। प्रत्येक राष्ट्र का अपना व्यक्तिगत स्वार्थ होता है और झगड़ों का होना स्वाभाविक हो जाता है। ऐसे झगडों को सुलझाने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का होना अनिवार्य है। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ की आवश्यकता है।

२. निःशस्त्रीकरण की समस्या—सुरक्षा के दृष्टिकोण से संयुक्त राष्ट्रसंघ किसी प्रकार के कार्य करने में असफल रहा है, परन्तु निःशस्त्रीकरण की समस्या को इसके द्वारा ही हल किया जा सकता है। आज अणुशक्ति का विध्वंसात्मक प्रयोग किया जा रहा है, तो ऐसी स्थिति में संयुक्त राष्ट्रसंघ के द्वारा ही अणुशक्ति पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। यदि संयुक्त राष्ट्रसंघ रूस और अमेरिका पर दबाव डाले तो निःशस्त्रीकरण की समस्या को हल किया जा सकता है।

३. युद्ध पर रोक लगाना—संसार के सभी राष्ट्रों ने यह अनुभव कर लिया है कि युद्ध के द्वारा किसी भी समस्या को हल नहीं किया जा सकता है। युद्ध के कारण अनेक विषम परिस्थितियों का जन्म हो जाता है। ऐसी स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए युद्ध को रोकना अनिवार्य है, जिसे प्रेम, सहयोग और सद्भावना के द्वारा रोका जा सकता है। इस समस्या को हल करने के लिये संयुक्त राष्ट्रसंघ का होना आवश्यक है।

४. मानव हितकारी कार्य—संयुक्त राष्ट्रसंघ ने मानव हितकारी कार्य करने में भरसक प्रयत्न किये हैं। इसके द्वारा विश्व की सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को भी हल किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से उस उच्च स्तर पर प्रत्येक कार्य जैसे विश्व के मजदूरों की समस्या, स्वास्थ्य

की समस्या और बालकों के विकास की समस्या को हल करने के लिए किए जा रहे हैं। पिछड़े हुए राष्ट्रों के आर्थिक विकास में और पराधीन राष्ट्रों को स्वाधीनता दिलाने में भी संयुक्त राष्ट्र संघ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है।

उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संयुक्त राष्ट्रसंघ की आवश्यकता विश्व शान्ति की समस्या को हल करने के लिए आवश्यक रूप से है और भविष्य में भी इसकी उपयोगिता निरन्तर बनी रहेगी।

अध्याय ५

अफ्रीका का जागरण

प्रश्न १—१९५० के उपरान्त दक्षिण अफ्रीका में जो साम्राज्यवादी देशों के उपनिवेश समाप्त होगए इसके बारे में संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—योरोप के देशों के सम्पर्क में आने से और थोड़े से अफ्रीका-वासियों द्वारा आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने से अफ्रीका में राष्ट्रीय भावनाओं का उदय हुआ। प्रथम विश्व महायुद्ध के बाद अफ्रीकी राष्ट्रवादियों ने खूब समझ लिया कि साम्राज्यवादी देश स्वयं कभी भी उन्हें स्वतंत्रता प्रदान नहीं करेंगे। इसी प्रकार द्वितीय विश्व महायुद्ध के कारण अफ्रीकी लोग कई वर्षों तक एशिया और योरोप की स्वतंत्र जातियों के सम्पर्क में आए और उन्होंने वापस लौटकर अपने देश में स्वतंत्रता और रंगभेद के विरुद्ध तीव्र रोष की भावना को देश में फैलाया।

अटलांटिक घोषणा और संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना—अटलांटिक चार्टर में भिन्न राष्ट्रों ने कहा कि वे अपने लाभ या साम्राज्य विस्तार के लिए युद्ध नहीं लड़ रहे हैं वरन् स्वतंत्रता के लिए युद्ध लड़ रहे हैं। इस घोषणा के बाद और संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना से अफ्रीका में स्वतंत्रता की भावना और अधिक तीव्र हो गई। द्वितीय महायुद्ध का परिणाम एक यह भी हुआ कि इटली के उपनिवेश समाप्त हो गए और वे संयुक्त राष्ट्रसंघ के अभिभावकत्व में आगए। दूसरे महायुद्ध में और उसके बाद खेती की पैदावार और औद्योगिक कच्चे माल का जो कि अफ्रीका का मुख्य निर्यात था, मूल्य आकाश छूने लगा जिससे वहां के निवासियों की आर्थिक स्थिति में कुछ सुधार हुआ। इसके अलावा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में इतनी तेजी से परिवर्तन हो रहे थे कि योरोपीय साम्राज्यवाद एशिया में टूट रहा था।

परिणाम—अतः भारत, बर्मा, लंका आदि सभी देश क्रमशः आजाद हो गए थे। फलस्वरूप साम्राज्यवाद का अन्त अफ्रीका में भी समीप ही था। यही कारण था कि सन् १९५५ के उपरान्त अफ्रीका में क्रमशः एक

के बाद दूसरा देश स्वतन्त्र होगया और आज कुछ उपनिवेशों को छोड़कर सभी उपनिवेश स्वतन्त्र हो गए।

(१) अफ्रीका में फ्राँसीसी उपनिवेश—अफ्रीका में फ्रांस सबसे बड़े क्षेत्र का स्वामी था। फ्रांस ने एक अफ्रीकी उच्च वर्ग को वहाँ जन्म दिया ताकि राष्ट्रीय आन्दोलन न पनपे, परन्तु अधिकांश अफ्रीकी जनदासता का अभिशाप भोगते थे। अतः मरक्को और अल्जीरिया में राष्ट्रवादी दल गुप्त रूप से हिंसक कार्यों द्वारा फ्रेंच शासन का विरोध करने लगे और अन्त में बहुत दमन के उपरान्त फ्रांस को अपने उपनिवेशों को स्वतन्त्र करना ही पड़ा।

(२) बेल्जियम के उपनिवेश—बेल्जियम काँगो १८७६ से १९०८ तक तो बेल्जियम के बादशाह ल्योपोल्ड द्वितीय की जागीर रहा और १९०८ में कांगो का शासन बेल्जियम की पार्लियामेन्ट के आधीन आगया, परन्तु वहाँ के निवासियों का शोषण पूर्ववत् होता रहा। परिणाम यह हुआ कि काँगों में भी हिंसक उग्र राष्ट्रवाद पनप उठा और सन् १९६० में काँगो स्वतंत्र हो गया।

(३) अंग्रेजों के उपनिवेश—अंग्रेजों ने अपने उपनिवेश में राष्ट्रीय आन्दोलनों को दबाने का पूरा जोर लगाया परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ तेजी से बदली जारही थी, अतः उन्होंने अपना हित इसी में समझा कि उपनिवेशों को आजादी देदी जाए जिससे उन देशों से उनके व्यापारिक सम्बन्ध अच्छे बने रहें। अस्तु, उन्होंने अपने उपनिवेशों को स्वतन्त्रता प्रदान करनी आरंभ करदी।

(४) पुर्तगाल के उपनिवेश—पुर्तगाल ने अपने उपनिवेशों को नहीं छोड़ा। वह अंगोला और मोजैम्बक्यू को पुर्तगाल का एक भाग मानता है और उनका भयंकर शोषण करता है तथा वहाँ के उग्र राष्ट्रीय आन्दोलनों का घोर दमन करता है। काँगो के आजाद होते ही अंगोला में राष्ट्रीय आन्दोलन और भी तीव्र हो गया परन्तु अफ्रीका के राष्ट्रीयता के प्रबल प्रवाह के सामने पुर्तगाल को अंगोला और मोजैम्बक्यू को आजादी देनी ही पड़ेगी।

(५) स्पेन व ब्रिटेन के उपनिवेश—स्पेन ने अफ्रीका में राष्ट्रीयता की बढ़ती हुई लहर को देखकर अपने उपनिवेश रायो-मूनी और फरनान्डोपो

द्वीप को अपने आधीन स्वशासन के अधिकार दे दिए। ब्रिटेन ने भी दक्षिणी रोडेशिया व उत्तरी रोडेशिया को शीघ्र स्वतन्त्र करने की ठान रखी है। न्यासालैंड ६ जौलाई १९६४ को स्वतंत्र होगया। इनके अलावा ब्रिटेन की आधीनता में हाई कमिश्नर के शासन में बसूतोलैंड, बेचुआनालैंड और स्वाजीलैंड तीन राज्य हैं।

अब तक सन् १९५० के उपरान्त ३७ राष्ट्रवादी उपनिवेश दक्षिणी अफ्रीका में स्वतन्त्रता प्राप्त कर चुके हैं।

प्रश्न २—साम्राज्यवादी देशों ने अफ्रीका में किस लालच से उपनिवेशों का निर्माण किया ? इस सम्बन्ध में दास-व्यापार का वर्णन कीजिए।

उत्तर—भारत और चीन हमेशा से योरोपीय देशों के लिए एक आकर्षण का केन्द्र रहा है क्योंकि ये दोनों देश अत्यन्त समृद्धिशाली थे। योरोपीय देश इन देशों से व्यापार लाभ प्राप्त कर धनी बन जाते थे परन्तु १५ वीं शताब्दी में जब तुर्कों और योरोप के ईसाई देशों में धर्म युद्ध हुए तो भारत का व्यापार मार्ग बन्द हो गया।

व्यापारिक मार्गो के लिए सामुद्रिक खोजें—अब भारत और चीन को ढूंढ निकालने के लिए समुद्र द्वारा पुर्तगाल ने पहल की। डियाज ने सर्वप्रथम १४८८-में आशा अन्तरीप को खोजा और उसके १० वर्ष बाद वास्कोडिगामा ने अफ्रीका महाद्वीप को खोज निकाला। क्रमशः पुर्तगाल, ब्रिटेन, स्पेन, फ्रांस, जर्मनी और इटली ने अपने उपनिवेश अफ्रीका में बना लिये। अफ्रीका में अपने उपनिवेश स्थापित करने में साम्राज्यवादी देशों के निम्नलिखित लालच थे:—

(१) अफ्रीका में सोने की खानें पाई गईं जिन पर सभी साम्राज्यवादी देशों की राल टपकने लगी।

(२) अफ्रीका में हाथी दांत प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था। इस औद्योगिक कच्चे माल को भी योरोपीय देश हड़पना चाहते थे।

(३) सबसे बड़ा लोभ का कारण अफ्रीका के "दास" थे।

(४) इंगलेंड की औद्योगिक क्रान्ति के बाद बड़े २ उद्योगों की स्थापना होने के कारण योरोपीय देशों में पूंजीवाद का जन्म हो गया था, अतः उन्हें शोषण के लिए तथा अपने माल के बाजार प्राप्त

करने के लिए अधिकाधिक उपनिवेशों की आवश्यकता हुई। अस्तु, उधर नए उपनिवेशों का विकास करने के लिए दासों की जरूरत हुई।

(५) एशिया के व्यापारिक मार्गों को सुरक्षित रखने हेतु साम्राज्यवादी देशों ने अफ्रीका के समुद्र तट पर अपने किले बनवा लिए।

दास व्यापार—१६ वीं शताब्दी में अफ्रीका के विभिन्न भूभागों पर अपना आधिपत्य जमाने के लिए योरोपीय साम्राज्यवादी देशों में होड़ लग गई जिसको जहां सुविधा मिलती वहीं अपना अधिकार कर लेता। अफ्रीका प्रदेशों के स्थानीय शासक सरदार भोले थे जिन्हें छल और बल से योरोपीय देशवासियों ने जीत लिया और अफ्रीका की स्वतंत्रता का सूर्य अस्त कर दिया।

अफ्रीका में दासों का व्यापार मुख्य धन्धा हो गया क्योंकि वहां सोना और दास खूब मिलते थे। दासों का निर्यात अफ्रीका का मुख्य व्यापार हो गया। अकेले कांगो बेसिन से डेढ़ करोड़ दासों को पकड़ कर भेजे गये। ठीक आंकड़े तो प्राप्त नहीं हैं परन्तु जानकार लोगों का मत है कि अफ्रीका से लगभग पांच करोड़ मनुष्यों को पकड़कर दास बनाकर भेजा गया। अफ्रीका में जनसंख्या कम हो गई। बड़े बड़े प्रदेश वीरान हो गये। यूरोपियन व्यापारी बन्दूकों से लैस होकर अफ्रीकी गांवों पर हमला करते कुछ व्यक्ति तो मारे जाते और शेष को पकड़ ले जाते। एक प्रकार से मनुष्यों का शिकार किया जाता था। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तथा उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों मे दास व्यापार समाप्त हुआ।

इन दासों से साम्राज्यवादी देशों ने अपने उपनिवेशों के विकास करने में पर्याप्त सहायता ली, जिसके सहारे उन्होंने अपने माल के बाजार प्राप्त किए और पूंजीपति बन गए। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि दास व्यापार अफ्रीका की एक सबसे बड़ी देन थी जिसके लोभ में साम्राज्यवादी देशों ने वहां अपने उपनिवेश बसाए।

प्रश्न ३—दक्षिणी अफ्रीका स्वतन्त्र गणतन्त्र है फिर भी अफ्रीकी लोग उसे परतन्त्र मानते हैं और उसको स्वतन्त्र करने की बात करते हैं; ऐसा क्यों है? इस सम्बन्ध में वहां की रंग-भेद की नीति का वर्णन कीजिए।

उत्तर—सन् १९१० में जब दक्षिणी अफ्रीका यूनियन की स्थापना हुई थी तब वह ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वतन्त्र प्रभुसत्ता प्राप्त देश था। आज वह गणतन्त्र है। परन्तु वहाँ की सरकार ने रंग-भेद नीति को स्वीकार किया है जिसके कारण अत्यन्त खतरनाक स्थिति पैदा हो गई है, फलस्वरूप वहाँ के लोग अपने को परतन्त्र मानकर स्वतन्त्र होने की बात करते हैं। उनके इस विचार व कथन के निम्न कारण हैं:—

(१) साम्राज्यवादी देशों ने जिन भागों में अपना राज्य स्थापित किया उनमें अपनी भाषा का प्रचलन किया अत: विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न २ भाषाएँ शिक्षित वर्ग में प्रचलित हैं।

(२) कहीं-कहीं उन्होंने स्थानीय सरदारों को विशेष अधिकार देकर अपने समर्थकों का एक दल पैदा कर दिया।

(३) साम्राज्यवादी देशों ने "अफ्रीका में भेद डालो और शासन करो" की नीति अपनाई और वहाँ की जनसंख्या में वैमनस्य उत्पन्न कर दिया।

(४) भाषा, धर्म, जाति तथा अन्य आधारों पर अफ्रीकी जनता एक दूसरे से पृथक हो गई।

(५) वहाँ की सरकार ने रंग-भेद नीति अपनाई।

रंग-भेद नीति—(१) इस नीति के अन्तर्गत जो जातियाँ गोरी नहीं हैं (बंटू तथा भारतीय) उनके उस देश में कोई राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक आधार नहीं हैं। उनको नागरिक के अधिकार नहीं दिए गए हैं।

(२) रंग-भेद की नीति के कारण दक्षिण अफ्रीका राष्ट्र-मण्डल का भी सदस्य नहीं है।

(३) दक्षिण अफ्रीका में जो ३० लाख बसे हुए योरोपियनों की संतान हैं। वे अपनी गोरी जाति के आधार पर उस देश की डेढ़ करोड़ अफ्रीकी और भारतीय जनसंख्या पर शासन करने का जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं।

(४) दक्षिण अफ्रीका के विधान में अफ्रीकी बंटू और भारतीय जनसंख्या को वोट देने का अधिकार नहीं है जो प्रदेश उनके लिए निर्धारित हैं वहाँ की स्थानीय संस्थाओं में ही वे वोट दे सकते हैं।

(५) उन्हें गोरी जातियों के क्षेत्र में रहने, स्कूलों में पढ़ने, होटल या रेलों में सफर करने का अधिकार नहीं है।

(६) गोरी सरकार किसी भी आंदोलन का अपनी सेना द्वारा निर्दयतापूर्वक दमन करती है। दक्षिण अफ्रीका को राष्ट्र-मण्डल तथा बहुत से अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की सदस्यता से इसी कारण हटना पड़ा क्योंकि वह रंग-भेद की नीति को छोड़ने के लिए तैयार नहीं है।

राष्ट्र में कई वार दक्षिण अफ्रीका सरकार की रंग-भेद नीति की निन्दा के प्रस्ताव स्वीकार किए जा चुके हैं परन्तु दक्षिण अफ्रीका की सरकार समझती है कि वह सेना के बल पर दक्षिण अफ्रीका में थोड़े से गोरों का प्रभुत्व कायम रख सकेगी परन्तु अफ्रीका में जो राष्ट्रीयता का प्रबल प्रवाह वेग के साथ बढ़ रहा है उसके सामने यह थोड़े से उपनिवेश टिक नहीं सकेंगे, वे भी ध्वस्त हो जाएँगे।

प्रश्न ४—अफ्रीका के किन देशों ने स्वतन्त्रता प्राप्त करली और कौन से देश स्वतन्त्र नहीं हैं? बतलाइये।

उत्तर—अफ्रीका के निम्न देशों ने स्वतन्त्रता प्राप्त करली है—(१) अल्जीरिया (२) बुरुण्डी (३) कैमेरुन (४) मध्य अफ्रीका गणतन्त्र (५) छाद (६) कांगों (ब्रजाविली (७) कांगो (ल्योपोल्डविले) (८) दाहोमे (९) इथोपिया (१०) गैवान (११) घाना (१२) गाइना (१३) आइवरी कोस्ट (१४) लाइबेरिया (१५) लीबिया (१६) मैडागास्कर (१७) माली (१८) मौरितानिया (१९) मरक्को (२०) नाइगर (२१) नाइगेरिया (२२) खांडा (२३) सैनीगाल (२४) सूडान (२५) होमालिया (२६) दक्षिण अफ्रीका (२७) सीराल्योन (२८) टैंगानाइका (२९) तोगो (३०) ट्यूनिशिया (३१) उगडा (३२) संयुक्त अरब गणतन्त्र (मिश्र) (३३) अपर वोल्टा (३४) केनिया (३५) जंजीबार (३६) गैम्बिया (३७) न्यासालैंड।

अफ्रीका के निम्न देशों ने अभी तक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं की है:—

(१) पुर्तगाल की आधीनता में (a) अंगोला (b) मौजैम्बुक्यू (c) पुर्तगीज गायना (d) केपवर्डी द्वीप।

(२) दक्षिण अफ्रीका यद्यपि स्वतन्त्र गणतन्त्र राज्य है परन्तु रंग-भेद नीति के कारण बहुसंख्यक अफ्रीकी निवासियों पर अल्पसंख्यक योरोप [illegible] का शासन है। बहुसंख्यकों को मताधिकार नहीं है।

[illegible]

(३) ब्रिटेन की आधीनता में उत्तरी रोडेशिया और दक्षिणी रोडेशिया ने अभी तक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं की है। इसके अलावा हाई कमिश्नर के शासन में बसूतोलैंड, वेचुआनालैंड और स्वाजीलैंड तीन राज्य हैं।

प्रश्न ५—अफ्रीकी एकता संगठन के बारे में संक्षेप में लिखिए और बतलाइए कि उसकी आवश्यकता क्यों है ?

उत्तर—अफ्रीका के विचारवान नेता उन समस्याओं को समझते हैं जो साम्राज्यवादी देशों ने स्वतन्त्रता के समय अपने उपनिवेशों को दी, अतः वे अफ्रीकी एकता का नारा लगाते हैं। उन्होंने अफ्रीका एकता संगठन निम्न कारणों के आधार पर आवश्यक समझा:—

(१) जब तक सम्पूर्ण अफ्रीका एक राजनीतिक संगठन में नहीं बँध जाता तब तक अफ्रीका समृद्धिशाली और सबल नहीं बन सकता।

(२) राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होने के साथ-साथ आर्थिक साम्राज्यवाद का अफ्रीका शिकार न बन सके।

(३) भाषा, धर्म, जाति व अन्य आधारों पर अफ्रीकी जनता में एकता हो सके।

(४) रंग-भेद नीति की समाप्ति हो सके।

उपर्युक्त आवश्यकताओं के कारण कठिनाइयाँ होते हुए भी अफ्रीकी नेता अफ्रीकी एकता को अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक समझते हैं। यही कारण है कि २६ मई १९६३ को उन्होंने "अफ्रीका का एकता संगठन" स्थापित किया।

अफ्रीका का एकता संगठन

२२ से २६ मई तक १९६३ में अफ्रीकी देशों के ३० प्रमुख नेता इथोपिया की राजधानी अदिस अबाबा के एक सम्मेलन में मिले और उन्होंने राजलेख (चार्टर) पर हस्ताक्षर कर अफ्रीकी एकता संगठन स्थापित किया। टोगो और मरक्को संगठन में बाद में मिलाए गए।

संगठन का लक्ष्य—(१) मुख्य उद्देश्य अफ्रीका की एकता और एकठता को बढ़ाना है।

(२) अफ्रीकी देशों की राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक तथा सुरक्षा नीतियों में सामंजस्य स्थापित करना।

(३) अफ्रीका से उपनिवेशवाद समाप्त करना।

(४) संगठन के सदस्य देशों की स्वतन्त्रता के लिए समान सुरक्षा व्यवस्था करना।

संगठन के मुख्य अंग—(१) सदस्य देशों की सरकारों के प्रमुखों का सम्मेलन (२) विदेश मन्त्रियों की परिषद् (३) मुख्य सचिवालय (४) मध्यस्थता, समझौता और पंचाट आयोग।

भाषा—अफ्रीकी भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेजी और फ्रेंच को इस संगठन की भाषाएँ स्वीकार की गई हैं।

अफ्रीकी एकता संगठन ने अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पाँच विशेष आयोग स्थापित किए हैं:—

(१) आर्थिक और सामाजिक (२) शैक्षणिक और सांस्कृतिक (३) स्वास्थ्य, सफाई और पोपाहार (४) प्रतिरक्षा (५) तकनीकी और अनुसंधान आयोग।

कार्य-(१) इन विशेष आयोगों ने अपना कार्य करना आरम्भ करदिया है। नवम्बर १९६३ में जब पुर्तगाल ने काँगो नदी के प्रवाह को बन्द करने की धमकी दी तो प्रतिरक्षा आयोग ने अंकारा की बैठक में सामूहिक कार्यवाही पुर्तगाल के विरुद्ध करने का निश्चय अपनी बैठक में किया।

(२) जब मरक्को और अल्जीरिया में विग्रह हुआ तो संगठन की विदेश मन्त्रि-परिषद् बुलाई गई और उसने दोनों देशों के विग्रह के सम्बन्ध में रिपोर्ट देने के लिए एक विशेष आयोग की स्थापना की।

(३) संगठन के विदेश मन्त्रियों ने नौ सदस्यों की राष्ट्रीय विमोचन समिति बनाई है जिसका मुख्य कार्य अफ्रीका के देशों में जो आज भी गोरी जातियों की दासता में फँसे हैं उनके स्वतन्त्रता के प्रयत्नों, को आर्थिक, राजनीतिक और सैनिक सहायता देना है। इस कमेटी की सिफारिश पर अंगोला की आजादी के लिए युद्ध करने वालों राबर्टो होल्डन की निर्वासित सरकार को परिषद् ने मान्यता प्रदान की।

कहने का तात्पर्य यह है कि अफ्रीकी देशों में राष्ट्रीयता की भावना तेजी से बढ़ रही है। अफ्रीकी नेता समझ गए हैं कि अफ्रीकी देशों में एकता स्थापित करने से ही स्वतन्त्रता स्थायी होगी और वे समृद्धशाली

बन सकेंगे। भविष्य में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अफ्रीका के देश अधिकाधिक प्रभाव डालेंगे।

अफ्रीकी एकता संगठन का मुख्य कार्यालय दारे-अस-सलाम में है।

अध्याय ६

रंगभेद की समस्या

प्रश्न १—रंगभेद से आप क्या समझते हैं? संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर—अर्थ—रंगभेद नीति के अन्तर्गत जो जातियाँ गोरी नहीं हैं, जैसे दक्षिणी अफ्रीका में वंटू, भारतीय तथा पाकिस्तानी और अमेरिका में नीग्रो, उनके उस देश में कोई राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकार नहीं हैं। उनको नागरिक के अधिकार नहीं दिए गए हैं।

आधुनिक युग और रंग-भेद—बीसवीं शताब्दी में जहाँ मानवीय समानता के सिद्धान्त को सभी ने स्वीकार कर लिया है। मानव जाति मानवमात्र के भाई चारे की ओर बढ़ रही है सभी मनुष्य बराबर हैं। देश-भाषा, धर्म और जाति की दीवारें टूट रही हैं वहाँ आज भी कुछ देशों में रंग-भेद के आधार पर कुछ लोगों के साथ अत्यन्त निर्दयतापूर्ण बुरा व्यवहार किया जाता है। उन्हें साधारण नागरिक के अधिकार नहीं हैं। उन्हें समृद्धिशाली जीवन के लिए आवश्यक सुविधाओं को प्राप्त नहीं करने दिया जाता। उन्हें हीन समझा जाता है।

रंग-भेद के विरुद्ध संघर्ष—रंग-भेद वास्तव में सभ्य मानव जाति के लिए एक महान् कलंक है और उसको शीघ्र ही मिटाना चाहिए। रंग-भेद के विरुद्ध सभ्य और विचारवान व्यक्तियों में क्षोभ है और जो लोग आज रंग-भेद के कारण पीड़ित हैं वे इसके विरुद्ध अपना संघर्ष कर रहे हैं। वह दिन दूर नहीं है जब रंग-भेद का महाकलंक मानव जाति के सिर पर से मिट जावेगा

रंग-भेद समस्या का क्षेत्र—वास्तव में रंग-भेद की समस्या दक्षिण अफ्रीका और संयुक्त राज्य अमेरिका में संघ सरकार ने उसके विरुद्ध

अधिनियम बना रखे हैं, परन्तु कुछ राज्यों, विशेषकर दक्षिण के राज्यों में रंग-भेद का रोग प्रबल है।

दक्षिण अफ्रीका की स्थिति अत्यन्त भयावह है। वहाँ थोड़े से गोरों ने बहुत बड़ी संख्या में अफ्रीकियों और भारतीय तथा पाकिस्तानियों को उनके नागरिक अधिकारों से वञ्चित कर उन्हें दास की स्थिति में रख छोड़ा है। इसे वे सैनिक बल के द्वारा ही कर सके हैं। आज रंग-भेद से पीड़ीत जन इसके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं।

यदि रंग-भेद का प्रश्न बुद्धिमानी और दूर दर्शिता से हल नहीं किया गया तो अफ्रीका में यह प्रश्न घोर अशान्ति और विस्फोट का कारण बन सकता है।

प्रश्न २ – दक्षिण अफ्रीका में रंग-भेद की विभीषिका पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—दक्षिण अफ्रीका के विधान के अनुसार वहाँ राजनीतिक शक्ति केवल गोरों को ही प्राप्त है। जो व्यक्ति गोरा नहीं है पार्लियामेन्ट या प्रान्तीय कांऊसिल के चुनाव में न तो खड़ा हो सकता है न मतदान करने का अधिकार रखता है। वहाँ तीस लाख गोरों को सारे अधिकार, सुविधाएँ, आय प्राप्त करने के समस्त उत्तम साधन प्राप्त हैं, जबकि एक करोड़ तीस लाख अफ्रीकी और भारतीय जो गोरे नहीं हैं उनको नागरिक अधिकारों से पूर्णतः वंचित रखा गया है। उन्हें भू-स्वामी बनने के, अच्छी जगह नौकरी करने या व्यापार कर सकने का अधिकार नहीं है। वे गोरों के साथ जा नहीं सकते, स्कूलों में पढ़ नहीं सकते, रेल में सफर नहीं कर सकते और गोरे पुरुष या स्त्री से विवाह नहीं कर सकते। गोरों ने अपनी बस्तियों से काली बस्तियों को साफ कर दिया।

गोरे काले की परिभाषा करने की समस्या—यद्यपि दक्षिण अफ्रीका के विधान में गोरों को ही सारे अधिकार हैं परन्तु अधिकारी वर्ग के सामने यह समस्या उठ खड़ी हुई है कि गोरे की परिभाषा कैसे की जावे। नेटिव, योरोपियन, कलर्ड और इंडियन की सही परिभाषा करना कठिन था। इसके लिए सरकार ने प्रिटोरिया में एक बहुत बड़ा कार्यालय स्थापित किया है जहाँ प्रत्येक व्यक्ति की वंशावली, जाति, रक्त आदि सब बातों का लेखा रखा जाता है। प्रत्येक प्रान्त में जनसंख्या का रजिस्ट्रेशन

विभाग है। तनिक भी संदेहावस्था में व्यक्ति की शारीरिक जाँच व जाती है और फिर उनकी श्रेणी का निर्णय किया जाता है कि योरोपियन हैं या अफ्रीकी।

कालों के प्रति घृणा—(१) योरोपियनों के स्कूलों में कालों के प्रति बच्चों में घृणा पैदा की जाती है। गोरे कालों के साथ अमानवीय व्यवहार करते हैं। कोई अफ्रीकी किसी गोरे से सामाजिक सम्बन्ध रखे तो उसे कठोर दण्ड दिया जाता है।

(२) पुलिस का ऐसा आतंक है कि इस अत्याचार के विरुद्ध किसी को कुछ कहने का साहस नहीं होता।

(अ) संयुक्त राष्ट्र-संघ और रंग-भेद के कारण दक्षिण अफ्रीका के सम्बन्ध—

(१) अनेकों बार संयुक्त-राष्ट्र संघ में रंग-भेद के अत्याचार को लेकर प्रश्न उठाए गए और दक्षिण अफ्रीका के विरुद्ध प्रस्ताव स्वीकार किया गया और दक्षिण अफ्रीका से अपील की गई कि वह अपनी इस रंग-भेद नीति को छोड़ दे।

(२) अपील का कोई प्रभाव न पड़ने पर ६ नववम्वर, १९६२ को राष्ट्र-संघ की जनरल एसेम्वली ने प्रस्ताव स्वीकार किया कि सभी सदस्य राष्ट्र दक्षिण अफ्रीका से कूटनीतिक सम्बन्ध तोड़लें

(३) एसेम्वली ने सुरक्षा परिषद् से प्रार्थना की कि वह इस प्रस्ताव को कार्य रूप में परिणत करे और दक्षिण अफ्रीका से प्रस्ताव पर अमल कराने की व्यवस्था करे, अन्यथा राष्ट्र-संघ से दक्षिण अफ्रीका को निकाल दिया जावे।

परन्तु अमेरिका और ब्रिटेन यद्यपि दक्षिण अफ्रीका की इस नीति के विरोधी हैं परन्तु वे इतनी कड़ी कार्यवाही के विरुद्ध हैं। इसलिए दक्षिणी अफ्रीका ने प्रस्ताव की परवाह नहीं की

(ब) इधर दक्षिण अफ्रीका ने सेना की वृद्धि की और विदेशों से अस्त्र-शस्त्र मंगाकर सैनिक तैयारी आरम्भ करदी। सुरक्षा परिषद् ने ७ अगस्त को इस पर चिन्ता प्रकट की और सभी सदस्य राष्ट्रों से सैनिक सामग्री दक्षिण अफ्रीका को न देने की प्रार्थना की। अफ्रीका के स्वतंत्र हो जाने से और दक्षिण अफ्रीका में संघर्ष तीव्र हो जाने के कारण दक्षिण

का ने सैनिक तैयारियां शुरू करदी जिसका परिणाम यह हुआ कि
ंडल (कॉमन वेल्थ) की सदस्यता से दक्षिण अफ्रीका को हाथ धोना
। क्रमशः उसे कई अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से हटना पड़ा है फिर भी
अपनी रंग-भेद नीति को नहीं छोड़ा ।

अफ्रीका के देश स्वतन्त्र हो गए हैं। वहाँ उग्र राष्ट्रवाद का जन्म
है। वह दक्षिण अफ्रीका में इस अमानवीय अत्याचार को समाप्त कराके
और दक्षिण अफ्रीका में भी अफ्रीकियों को स्वतन्त्र नागरिक के
कार प्राप्त होंगे।

प्रश्न ३—संयुक्त राज्य अमेरिका में नीग्रो लोगों के नागरिक कारों के संघर्ष का वर्णन कीजिए।

उत्तर—संयुक्त राज्य अमेरिका में विशेषकर दक्षिण के राज्यों में
भेद की समस्या तीव्र है। वहाँ नीग्रो लोगों को होटलों में प्रवेश
दिया जाता, विश्वविद्यालय में पढ़ने नहीं दिया जाता और उन्हें कहीं
त देने के लिए अपना रजिस्ट्रेशन नहीं कराने दिया जाता। अतः
ने लम्बे समय से अमेरिका में नीग्रो बालकों और युवकों को भी गोरों
ाथ स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ने की सुविधा दिलाते हुये संघर्ष चल
था,

संघर्ष का श्रीगणेश:—

(१) श्री जेम्स मेरेडिथ ने न्यायालय की मदद से विश्व-विद्यालय
वेश लेने की आज्ञा ले ली, परन्तु मिसिसिपी राज्य के गवर्नर नें उस
रोक लगा दी। अतः ३० सितम्बर, १९६२ को ३०० मार्शल मेरेडिथ
वेश दिलाने गये तो विश्वविद्यालय के गोरे छात्रों ने उन पर हमला
। प्रेसीडेंट केनेडी ने टेलीवीजन पर कानून मानने की अपील जनता
ी, परन्तु उपद्रव नहीं दबा। अन्त में गोली चलानी पड़ी। ३०००
सरकार के सैनिकों का उपयोग करना पड़ा तब कहीं मेरेडिथ को
श मिला।

(२) नवम्बर १९६२ में संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्याया-
ने नीग्रो, लोगों को मत देने के अधिकार के पक्ष में अपना फैसला
। जिससे उन्हें अलबाम राज्य में मैकान काउन्टी में मतदाता सूची में
ा रजिस्ट्रेशन कराने का अधिकार मिल गया।

(३) प्रेसीडेंट केनेडी ने २८ फरवरी, १९६३ को कांग्रेस से नीग्रो लोगों को मतदान, शिक्षा तथा रोजगार के समान नागरिक अधिकारों की रक्षार्थ अधिनियम बनाने की प्रार्थना की। इन्हीं प्रेरणाओं के फलस्वरूप नीग्रो लोगों में जागृति पैदा हो गई है और उन्होंने संघर्ष केवल सुदूर दक्षिण में ही नहीं उत्तर और पश्चिम में भी कर दिया है।

(४) नीग्रो नेता मार्टिन लूथर किंग ने 'सत्याग्रह' के मार्ग को अपना कर आन्दोलन कर रखा है जिसका केन्द्र बरमिंघम था। ९ मई को लूथर और स्थानीय चैम्बर ऑफ कामर्स में समझौता हो गया। जिससे यह निश्चय किया गया कि नीग्रो लोगों को सार्वजनिक स्थानों पर बिना भेदभाव जाने दिया जाये।

(५) केनेडी ने उक्त समझौते को अमल में लाने हेतु अल्बामा में सेना भेजकर गोरों का दमन कराया और दो नीग्रो छात्रों को विश्वविद्यालय में प्रवेश दिलाया। केनेडी ने नीग्रो नेताओं से भी प्रार्थना की कि कांग्रेस को इस बात पर शान्ति से विचार करने दें कि उनके अधिकारों को सुरक्षित कराया जा सके।

मांटगोमरी की ऐतिहासिक यात्रा—२२ मार्च, १९६५ को लूथर के नेतृत्व में दस हजार नीग्रो तथा गोरों ने अमेरिका के दक्षिणी राज्य में नीग्रो लोगों को मताधिकार का अधिकार दिलाने की यात्रा की और प्रसीडेंट जॉन्सन ने संघ सरकार की पुलिस और सेना द्वारा उनकी सुरक्षा का प्रयत्न किया।

निष्कर्ष—नए नागरिक अधिनियमों का व्यवहार में पालन होने पर और नीग्रो लोगों को मताधिकार प्राप्त हो जाने पर अवश्य ही नीग्रो जाति की सामाजिक दशा सुधरेगी और रंगभेद के आधार पर नीग्रो लोगों को वहां अधिक दिनों तक अपने नागरिक अधिकारों से वंचित नहीं रखा जा सकेगा।

प्रश्न ४—'रंगभेद मानव जाति का कलंक है" इसका विश्लेषण कीजिये।

उत्तर—रंगभेद के अन्तर्गत जो जातियां गोरी नहीं हैं उनको उस देश में कोई राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकार नहीं दिये गये हैं।

वास्तव में रंगभेद की समस्या दक्षिणी अफ्रीका और संयुक्त अमेरिका में है। दक्षिण अफ्रीका की दशा सबसे अधिक भयावह है। थोड़े से गोरों ने बहुत बड़ी संख्या में अफ्रीकियों और भारतीय पाकिस्तानियों को उनके नागरिक अधिकारों से वंचित कर उन्हें दास स्थिति में रख छोड़ा है।

अफ्रीका में रंगभेद—दक्षिण अफ्रीका के विधान के अनुसार राजनीतिक अधिकार केवल गोरों को ही प्राप्त हैं। गोरों को सारे अधिकार सारी सुविधायें, आय प्राप्त करने के समस्त उत्तम साधन प्राप्त हैं। ... लोगों को (बंटू और भारतीय लोगों को) संसद में खड़े हो सकने, ... देने, भूस्वामी बनने, अच्छी जगह पर नौकरी कर सकने या व्यापार कर सकने का अधिकार नहीं है। वे किसी होटल में नहीं जा सकते जहाँ गोरे जाते हैं, ऐसे स्कूलों में नहीं पढ़ सकते जहाँ गोरे पढ़ते हैं, गोरों के साथ रेल में सफर नहीं कर सकते, उनकी बस्तियों में नहीं रह सकते, गोरे पुरुष या स्त्री से विवाह नहीं कर सकते। वे गोरों के यहाँ केवल दास की तरह काम करके ही उस क्षेत्र में रह सकते हैं। रेलवे स्टेशनों और सड़कों पर अफ्रीकी और गोरे साथ २ नहीं चल सकते। उनके लिए अलग रास्ता है और पुलिस यह कड़ाई के साथ देखती है कि कोई अफ्रीकी या भारतीय गोरों के रास्ते पर तो नहीं जाता।

जिन व्यक्तियों के बारे में जरा भी शक होता है उनकी शारीरिक जांच करके निश्चय किया जाता है कि वे किस श्रेणी में रखे जायें। योरोपियनों के स्कूलों में अफ्रीकियों और भारतीयों के विरुद्ध बच्चों में घृणा पैदा की जाती है। अफ्रीकी और भारतीयों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है जो कल्पनातीत है।

अमेरिका में नीग्रो—संयुक्त राज्य अमेरिका में खासकर दक्षिण के राज्यों में रंगभेद की समस्या तीव्र है। वहाँ नीग्रो लोगों को होटल में नहीं घुसने दिया जाता, विश्वविद्यालयों में प्रवेश नहीं दिया जा कहीं कहीं उन्हें मत देने के लिए अपना रजिस्ट्रेशन नहीं कराने दि जाता। गोरे लोग नीग्रो लोगों से बहुत ज्यादा अप्रसन्न हैं। यही कार था कि नीग्रो लोगों को गोरों के समान अधिकार दिलाने का प्रयत्न क के कारण प्रेसीडेन्ट केनेडी को गोली का शिकार होना पड़ा। अभी

ी राज्यों में साक्षरता परीक्षा के द्वारा नीग्रो लोगों को मताधिकार ंचित कर दिया जाता था। नीग्रो लोगों की साक्षरता परीक्षा विधान ी कानून की कड़ी परीक्षा का रूप ले लेती तो थी उन्हें मता-र से वंचित कर दिया जाता था।

बीसवीं शताब्दी में जहाँ मानवीय समानता के सिद्धांत को सभी ने ीकार कर लिया है, मानव जाति मानव मात्र के भाई चारे की ओर रही है। सभी मनुष्य बराबर हैं—देश-भाषा, धर्म और जाति की दीवारें रही हैं। वहाँ दक्षिण अफ्रीका और संयुक्त राज्य अमेरिका के राज्यों रंगभेद के आधार पर अल्पसंख्यकों द्वारा बहुसंख्यकों के साथ अत्यन्त निर्दयतापूर्ण बुरा व्यवहार किया जाता है। उन्हें साधारण नागरिक के अधिकार नहीं हैं, समृद्धिशाली जीवन के लिए आवश्यक सुविधाओं को प्राप्त नहीं करने दिया जाता, उन्हे हीन समझा जाता है। अतः रंगभेद वास्तव में सभ्य मानव जाति के लिए एक महान कलंक है। जब तक रंगभेद के कारण काले लोग पीड़ित हैं, उनमें क्षोभ है और वे संघर्ष कर रहे हैं तब तक मानव जाति के सिर पर रंगभेद वास्तव में मानव जाति का महाकलंक है।

इतना होते हुये भी अफ्रीकी देशों की जागृति को देखते हुए और संयुक्त राज्य अमेरिका की सुप्रीमकोर्ट के निष्पक्ष निर्णयों को देखते हुए कहा जा सकता है, कि अब वह दिन दूर नहीं है जब रंगभेद नीति के आधार पर गोरे लोगों का अत्याचार नहीं चल सकेगा और वे पीड़ित जन भी स्वतन्त्र नागरिकों के अधिकार प्राप्त कर सकेंगे। एशिया और संयुक्त राज्य अमेरिका की सहज सहानुभूति उनके साथ है। अस्तु अधिक समय तक रंगभेद मानव जाति का कलंक कायम नहीं रह सकेगा, इसे मिटना ही पड़ेगा।